



COMPILED

COMPILED

Check Verification-2021

गैद्य धर्मदत्त
स्मृति संग्रह

Check Verification-2021

प्र
वि
अ
स
अ

COMPILED

आयुर्वेद का
सर्वाधिक प्रचलित
संवित्र हिन्दी
मासिक-पत्र

धम्मपत्ति

3

प्रकाशकः
निर्मल
आयुर्वेद
संस्थान
अलीगढ़

वैद्य धर्मदत्त
स्मृति संग्रह

जुलाई १९८१

वर्ष १५ अङ्क ७

अपनों से अपनी बात

आवश्यक-सूचना

हमें भेजे गये अपने आदेश पत्रों पर अपना पूरा पता नहीं लिखें

कतिपय ग्राहकों के पत्रों से ज्ञात हुआ है कि कोई बोगस फर्म हमें भेजे गये आदेश पत्रों को येन केन प्रकारेण प्राप्त कर लेती तथा उल्टा-सीधा माल सप्लाई कर देती है तथा आपको हमसे असंतुष्टि होती है। इस हेतु हमारा निवेदन है कि -

१. आदेशपत्र देते समय आप अपना पूरा पता नहीं लिखें। केवल मात्र अपना नाम, धन्वन्तरि की इस वर्ष की ग्राहक संख्या एवं पोस्ट आफिस का नाम ही लिखें। इस प्रकार से हमारा आर्डर अन्य फर्म सप्लाई नहीं कर पायेगी।
२. हमें भेजे गये आदेशपत्र का सामान आपको किसी अन्य फर्म से मिलना है तो उस वी० पी० को वापिस कर दें, हरगिज न छुड़ाये एवं उसका बिल रजिस्टर्ड लिफाफा में रख कर हमें भेजें।
३. यदि आप आदेशपत्र के साथ एडवांस भेज रहे हैं तो पत्र प्रथक से नहीं भेजें। मनिआर्डर कूपन में ही 'धन्वन्तरि' का ग्राहक नम्बर अपना नाम एवं पोस्ट आफिस लिख दें।
४. ३१ अक्टूबर १९८१ तक के लिए स्वप्रचारार्थ उपहारी योजना प्रस्तुत की है जिसका कि विवरण इसी अङ्क में पृष्ठ ५ पर देखें तथा अपना आदेशपत्र हमें ही भेजें। आपके आर्डर से 'धन्वन्तरि' को सहायता प्राप्त होगी।

भवदीय

दाऊदयाल गर्ग

व्यवस्थापक—'धन्वन्तरि'

निर्मल आयुर्वेद संस्थान, अलीगढ़

दाऊद मैडीकल स्टोर्स, अलीगढ़

(३१ दिसम्बर १९८१ तक)

नवशक्ति चन्द्रोदय वटी

इस योजना में नव० चन्द्रोदय वटी का १ सेंट (१२५ गोली की एक शीशी + २१ गोली की १ शीशी) १७.०० मनियाडर से मिलने पर रजिस्ट्री से या १८.०० की वी० पी० से भेजा जायगा। २१ गोली वाला पैक पहिले खोलकर व्यवहार करें। संतुष्टि न होने पर १२५ गोली वाला पैक वापस भेज दें। पोस्ट व्यय कम करके आपका रुपया वापस भेज देंगे। अधिक सेंट या गोलियां मंगाने पर मूल्यादि निम्न प्रकार होंगे—

तादात	मूल्य रजिस्ट्री से	मूल्य वी. पी. से
१ सेंट	१७.००	१८.००
२ सेंट	३१.५०	३३.००
४ सेंट	५७.००	५९.००
५०० गोली	५०.००	५२.००
१००० गोली	९५.००	९७.००
२००० गोली	१८०.००	१८५.००

ये मूल्यादि कमीशनानादि कम करके, विक्रीकर + पोस्ट व्यय शामिल है। इन मूल्यों पर किसी को किसी प्रकार का कमीशन नहीं दिया जायगा।

—मंगाने का पता—

निर्मल आयुर्वेद संस्थान अलीगढ़

हमारी कोई अन्य फर्म या शाखा नहीं हैं। आर्डर देते समय हमारा पता लिखें तथा इसी फर्म से भेजी गई पार्सल छुड़ावें। यदि किसी अन्य फर्म से भेजी गई पार्सल मिले तो वी० पी० को वापिस कर दें तथा उसके बिल को रजिस्टर्ड लिफाफा में हमें भेज दें।

शरद ऋतु में सेवन योग्य

सम्पन्न व्यक्तियों के लिए

तीन महौषधियां

जो व्यक्ति सम्पन्न हैं, पैसा खर्च कर सकते हैं उनके लिये हमने तीन शीघ्र प्रभावी औषधियों का निर्माण किया है—

- (१) नपुंसकत्वारि वटी—सब प्रकार के नपुंसकों को शानदार जीवन बिताने के लिए इससे बढ़कर अन्य औषधि नहीं है। इसके कुछ दिनों के सेवन से पूर्ण योवन आ जाता है। मूल्य ६० गोली २५.००
- (२) कायशक्ति केशरी वटी—स्वर्ण, हीरा, पन्ना, माणिक्य आदि बहुमूल्य औषधियों से निमित्त यह औषधि सभी वीर्यवर्धक औषधियों में सर्वोत्तम है। मूल्य ६० गोली ८५.००।

- (३) वसन्त कुसुमाकर रस—विशेष रूप से बनाया गया सर्वोत्तम। मूल्य ६० गोली १०५.००।

हमारा अनुभव है कि आप कामशक्ति केशरी वटी १ गोली, नपुंसकत्वारि वटी १ गोली तथा वसन्त कुसुमाकर रस १ गोली तीनों को मिलाकर १ मात्रा बना लें, प्रातः सायं १-१ मात्रा मलाई के साथ और ऊपर से मिश्री मिलाकर दूध पी लें, कम त्कारिक लाभ होगा। तीनों औषधियां १ माह के लिए कमीशन कम करके विशेष रियायत में १५५.००, सेलटैक्स पोस्ट व्यय पृथक होगा १७५.०० मनियाडर से भेजकर एक सेंट रजिस्ट्री से मंगालें। वी. पी. १८०.०० की भेजी जायगी। इसमें सेलटैक्स पोस्ट व्यय आदि सभी शामिल हैं।

आर्डर के साथ २० रुपये एडवांस अवश्य भेजें

—मंगाने का पता—

निर्मल आयुर्वेद संस्थान
मामू भान्जा रोड, अलीगढ़।

‘धन्वन्तरि’ के विशेषांक रियायती मूल्य में

(१५ सितम्बर १९८१ से ३१ दिसम्बर १९८१ तक)

धन्वन्तरि जयन्ती पर वैद्य सभाओं में ‘धन्वन्तरि’ के विशेषाङ्कों का बितरण करें।

‘धन्वन्तरि’ के विशेषाङ्कों पर रियायती योजना हम प्रायः धन्वन्तरि जयन्ती के अवसर पर प्रस्तुत करते थे। गत वर्ष अनेकों वैद्यों ने हमें लिखा कि ‘धन्वन्तरि जयन्ती’ के अवसर पर प्रत्येक वैद्य सभा की बैठक होती है और उनमें आयुर्वेद चर्चा होती है। इनमें प्रायः वैद्य आयुर्वेद साहित्य वितरण करते हैं और उस पर चर्चा करते हैं लेकिन ‘धन्वन्तरि’ के विशाल या लघु विशेषाङ्कों की रियायती योजना का लाभ वितरण करने वाले वैद्य नहीं ले पाते क्योंकि योजना ‘धन्वन्तरि जयन्ती’ पर आरम्भ होती है। इस अनुरोध के कारण इस रियायती योजना को अभी आरम्भ कर रहे हैं और ५ प्रति मंगाने वालों को रियायत पहले से भी अधिक कर दी है।

पूर्ण प्रकाशित विशेषाङ्कों का मूल्यानुसार वर्गीकरण	एक प्रति का पुरा मूल्य	रियायती मूल्य	५ प्रति या अधिक मंगाने पर १ प्रति का रियायतमूल्य
बनौषधि विशेषांक—चतुर्थ भाग, आ छठा भाग	१५.००	१२.००	१२.००
संदिग्ध बनौषधि अंक	१४.००	९.००	५.००
प्राणिज-खनिज द्रव्यांक	१२.००	८.००	६.००
सफल सिद्ध प्रयोगांक	१२.००	८.००	५.००
चिकित्सा विशेषांक—द्वितीय भाग	१२.००	८.००	५.००
प्राकृतिक चिकित्सांक—द्वितीय संस्करण	१६.००	११.००	७.५०
शास्त्रीय सिद्ध प्रयोगांक—प्रथम भाग या द्वितीय भाग	१५.००	१०.००	७.००
ऊर्ध्वजन्तु रोगांक	१५.००	१०.००	७.००
नारी रोगांक	१८.००	१२.००	८.००

धन्वन्तरि के लघु विशेषांक

काम विज्ञानांक प्रथम, द्वितीय एवं तृतीय भाग, संकस रोगांक, पक्षाघात अंक प्रथम भाग—प्रत्येक का मूल्य	२.५०	१.६०	१.२५
श्वित्र रोगांक, प्रदर रोगांक, आयुर्वेद शिक्षणांक, आयुर्वेद कौपथूल अंक, एलोपैथिक पेटेन्ट चिकित्सांक, यज्ञ चिकित्सांक, फल ग्रन्थांक, अर्ध रोग चिकित्सांक—प्रत्येक का मूल्य	२.५०	१.६०	१.००
मानसिक रोग चिकित्सांक, विविध विधानांक—प्रथम भाग	४.००	२.७५	१.७५
सामान्य शल्योपचारांक, विविध विधानांक द्वितीय भाग, नारी रोगांक परिशिष्टांक, पाण्डु कामला अंक	३.००	२.००	१.५०
मूत्र रोगांक, मलाबरोधांक, आमदोष विज्ञानाङ्क, आसव निर्माणांक	२.००	१.५०	१.००

- नियम—१. यह रियायत ३१ दिसम्बर तक ही बी जायगी। इसके अतिरिक्त और कोई कमीशन नहीं होगा।
२. पैकिंग व्यय, रेल भाड़ा, स्टेशन पहुंचाई, पोस्ट—व्यय प्रत्येक होंगे।
३. अधिक विशेषाङ्क रेल से मंगायें क्योंकि पोस्ट से खर्चा अधिक होता है। रेल से मंगाने पर अपने पास का रेल स्टेशन तथा लाइन साफ-साफ लिखें तथा २० रुपये एडवांस अवश्य भेजें।
४. आर्डर के साथ एडवांस अवश्य भेजा करें। बिना एडवांस के हमारे आर्डरों को अन्य वोगस फर्में हथिया लेती हैं और मनमाना माल भेज देती हैं।

पता—निर्मल आयुर्वेद संस्थान, अलीगढ़।



113417

बहुमूल्य रस-रसायन

- सिद्ध मकरध्वज नं० १ (मै० र० ज्वराधिकार) — यह सर्व रोगहर शक्तिप्रद अत्युपयोगी रसायन है। इसके सेवन से बल, पोषण, कान्ति की वृद्धि होती है। अनुपान भेद से तथा अन्य औषधियों के साथ मिश्रण कर प्रायः सभी रोगों में व्यवहार किया जाता है। मूल्य—१० ग्राम ६५.००
- कुमार कल्याण रस— (मै० र०) स्वर्ण-मुक्तायुक्त—बच्चों के श्वास, पसली चलना, सूखा रोग, शारीरिक दुर्बलता, वमन, अतिसार, बाल संग्रहणी में हितकर। मूल्य—१० ग्राम २५५.००
- जयमंगल रस— (मै० र०) स्वर्ण युक्त—जीर्णज्वर, विषम ज्वर, अस्थि मेदा-मज्जा मांसगत ज्वर तथा सभी दोषों से होने वाले ज्वरों को नष्ट करता है। मूल्य—१० ग्राम २२०.००
- वसन्त कुसुमाकर रस—(मै० र०) स्वर्ण मुक्तायुक्त—बलवर्धक, वृष्य, बाजीकरण एवं मधुमेह नाशक अनुपम रसायन। मूल्य—१० ग्राम १४०.००
- स्वर्ण वसन्त मालती—(मै० र०) स्वर्ण मुक्तायुक्त—जीर्ण ज्वर, विषम ज्वर, खांसी, दमा, दुर्बलता नाशक सुप्रसिद्ध औषधि। मूल्य—१० ग्राम १४०.००
- योगेन्द्र रस— (मै० र०) स्वर्ण मुक्तायुक्त—तथे-पुराने जटिल वात रोगों की श्रेष्ठ औषधि। प्रमेह, बहुमूत्र, पक्षाघात, मृगी एवं राजयक्ष्मा में प्रभावी। मूल्य—१० ग्राम २४०.००
- रसराय रस— (मै० र०) स्वर्ण मुक्तायुक्त—पक्षाघात, कृष्णवात, कानों में सांय-सांय, सिर में चक्कर, अङ्गों में निर्वलता, वात विकार नाशक। मूल्य—१० ग्राम ११०.००
- वृ० वात चिन्तामणि रस—(मै० र०) स्वर्ण मुक्तायुक्त—यह भयंकर जटिल वात रोगों की सुप्रसिद्ध दवा है। सन्निपात, प्रलाप, भ्रम, शीतांग आदि में उपयोगी। मूल्य—१० ग्राम २००.००
- श्वास कास चिन्तामणि रस—(मै० र०) स्वर्ण मुक्तायुक्त—पुराने कठिन श्वास-कास में स्थायी लाभ देने वाली दवा। मूल्य—१० ग्राम १००.००
- प्रवाल पंचामृत रस— (मै० र०) मुक्तायुक्त—श्वास-कास, अम्लपित्त, उदर रोग, गुल्म, यकृत प्लीहा रोग, अजीर्ण, रक्ताल्पता नाशक। उत्तम आयुर्वेदिक कैल्शियम है। मूल्य—१० ग्राम ६०.००
- लक्ष्मी विलास रस— (मै० र०) स्वर्ण रहित—विदोष, ज्वर, सर्दी-जुकाम, रुफ, म्यूकोनिथी, इन्फ्लूएन्जा, श्वास-कास, सिर दर्द आदि रोगों में गुणकारी है। मूल्य—१० ग्राम ४.२५
- सूतशेखर रस— (यो० र०) स्वर्ण रहित—अम्लपित्त की सुप्रसिद्ध दवा है। खट्टी डकार, हृदय, कण्ठ की जलन में हितकर। मूल्य—१० ग्राम ३८.००
- नव० चन्द्रोदग वटी—कीर्ण विकार के साथ होने वाली खांसी, जुकाम, सर्दी, कमर का दर्द, मन्दाग्नि, स्मरण-शक्ति का ह्रास आदि व्याधियां दूर होकर क्षुधा बढ़ती है। शरीर हृष्ट-पुष्ट व निरोग बनता है। इसके गुणों के कारण ही इसका दूसरा नाम 'पोषदाता' भी है। कतिपय चिकित्सक इसको प्रयोग कराकर अनेक निराश रोगियों को आरोग्य लाभ प्राप्त कराते हैं। अतः इसका एक नाम 'निराश बन्धु' भी है। मूल्य—४१ गोली ५.००, १२५ गोली १५.००, ५०० गोली ५८.००, १००० गोली ११०.००।

निर्मल आयुर्वेद संस्थान, अलीगढ़।

सुप्रसिद्ध आयुर्वेदिक कैपसूल

क्र.सं.	नाम कैपसूल	गुण संक्षेप में (रोग निर्देश)	५० कैप.	१०० कै०
१	रुदनो कैपसूल नं० १ (स्वर्ण वसन्तमालती युक्त)	कफ, खांसी, जीर्ण ज्वर, तपेदिक आदि के लिए सुप्रसिद्ध ।	२६.५०	५२.००
२	रुदनो कैप. (लघुमालतीयुक्त)	"	१४.५०	२८.००
३	ज्वरोना कैपसूल	वात, कफ एवं जीर्ण ज्वर, मलेरिया, इन्फ्लुएन्जा, खांसी, श्लेष्मिक ज्वर नाशक ।	१४.५०	२८.००
४	रक्तरोगारि "	फोड़ा फुन्सी, खुजली, चकत्ता व अन्य चर्म विकारों में ।	१४.५०	२८.००
५	वातरोगारि "	गठिया, हाथ पैरों की सूजन, कमर का दर्द, गुथसी आदि वात रोगों में अतीव लाभकारी । पहले कोष्ठ शुद्धि करें ।	२६.५०	५२.००
६	ल्यूकोल "	श्वेत प्रदर, रक्त प्रदर, मासिक धर्म अधिक दिन रहना ।	१६.५०	३२.००
७	नवशक्ति "	स्तम्भन शक्ति बढ़ाते हुए संभोगजन्य निर्बलता को दूर करता है । बल, वीर्य, कांति और शक्ति बढ़ाता है ।	१६.५०	३२.००
८	श्वासारि "	नया या पुराना श्वास-दमा, कुकुर खांसी, जुकाम आदि ।	१०.००	१६.००
९	अर्शारि "	बादी तथा खूनी दोनों प्रकार के अर्श पर अत्युपयोगी ।	१०.००	१६.००
१०	रजोसुखदा "	कष्ट रजता तथा रजः प्रवर्तन की परेशानी दूर करता, मासिक धर्म साफ लाता है ।	१०.००	१६.००
११	गोनोरा "	पेशाब में जलन, पेशाब लगकर आना, मवाद जाना आदि मस्तिष्क की दुर्बलता दूर कर स्मरण शक्ति बढ़ाता है ।	१५.००	२६.००
१२	मेघा "	कैल्शियम की कमी, ज्वर के पश्चात् की कमजोरी, खांसी ।	१४.५०	२८.००
१३	कैल्सीमा "	अनिद्रा, बेचैनी, उन्माद, मस्तिष्क की उत्तेजना, रक्तचाप वृद्धि को दूर करने में अनुपम ।	१०.००	१६.००
१४	रक्तचापारि "	शरीर में कहीं भी तथा कंसा भी दर्द हो तुरन्त दूर होगा ।	१२.५०	२४.००
१५	अवेदन "	रक्तालपता एवं पांडु रोग नाशक अचूक औषधि है ।	११.००	२१.००
१६	पाण्डु शसन "	बालकों को सूखा रोग के लिए अव्यर्थ औषधि है ।	१३.००	२५.००
१७	शोषारि "	दिल की धड़कन बढ़ना, दिल का बैठना, हृदय की दुर्बलता तथा सभी प्रकार के हृद्दोषों में तुरन्त लाभप्रद कैपसूल है ।	१५.००	२६.००
१८	हृद्दोगाशक "	नपुंसकता, बीघ्रपतन, पतलापन, स्वप्नदोष, स्तम्भनशक्ति की कमी दूर कर बल, वीर्य, कांति तथा ओज बढ़ाते हैं ।	२१.००	४१.००
१९	क्लेब्यारि "	ग्राही, क्षोभहर, शामक तथा आमपाचक है । वालातिसार, अपचन जनित अतिसार में लाभकारी है ।	१२.५०	२४.००
२०	अतिसारघ्न "	पेट में हर प्रकार के कीड़ों पर शीघ्र प्रभावकारी कृमिजन्य व्याधियों के लिए उत्तम, उबकाई, कृमिज आमाशयशूल, नजला, जुकाम, अरुचिनाशक ।	१३.००	२५.००
२१	कृमिहारी "	भोजन के बाद गैस बनती है तो इनको अवश्य व्यवहार करें । पेट का भारीपन, उदरशूल, क्षुधामांघ में लाभकारी स्त्रियों को होने वाले दौरों के लिए लाभकारी ।	१३.००	२५.००
२२	गैसारि "	स्वप्न प्रमेह नाशक सुपरीक्षित कैपसूल ।	१४.५०	२८.००
२३	हिस्टोना "	पारी से आने वाले ज्वर के लिए उत्तम ।	२६.५०	५२.००
२४	स्वप्नशमेहारि "	मधुमेहनाशक सुपरीक्षित ।	१६.००	३१.००
२५	मलेरियाशक "	गर्भावस्था में लगातार ४७ दिन लेने से निश्चय ही पुत्र प्राप्ति ।	२६.५०	५२.००
२६	मधुमेहारि "		१ सेंट	२७.५०
२७	पुत्रदा "			

॥ विराट-उपहार ॥

समय १ अक्टूबर से ३१ अक्टूबर १९८१ तक

- १—कमीशन कम करके ७५) रु० या अधिक की औषधियां मंगाने पर—(१) नव० चन्द्रोदय वटी ४१ गोली की एक शीशी (२) ग्लिसरीन सिरिज २ औंस की एक (३) रबड़ के दस्ताने एक जोड़ी (४) मोतीझला देखने का शीशा । इनमें से कोई एक वस्तु ।
- २—कमीशन कम करके १५१) रु० या अधिक की औषधियां मंगाने पर—(१) नवशक्ति कैपसूल ५० (२) नव० चन्द्रोदय वटी ४१ गोली की तीन शीशी (३) स्टेथिस्कोप भारतीय एक (४) इन्जेक्शन सिरिज ल्यूरोलाक २ शीशी । (५) नासिका प्रेक्षण यन्त्र । इनमें से कोई एक वस्तु ।
- ३—कमीशन कम करके ३०१) रु० या अधिक की औषधियां मंगाने पर—नव० चन्द्रोदय वटी ४१ गोली की १० शीशी (२) टेबलेट मशीन छोटी एक (३) दांत उखाड़ने का जमूड़ा (स्टील का) एक (४) स्टील का गिलास एक (५) प्लास्टिक की बाल्टी (केवल रेल पार्सल में) । इनमें से कोई एक वस्तु ।
- ४—कमीशन कम करके ७०१) रु० या अधिक की औषधियां मंगाने पर—(१) एलार्म घड़ी (२) नव० चन्द्रोदय वटी ४१ गोली १२ शीशी—बलैव्यारि कैपसूल ५० (३) स्टील की फोल्डिंग कुर्सी एक (४) स्टेनलेस स्टील का ११ इन्ची का थाल एक (५) स्टील के चार गिलास । इनमें से कोई एक वस्तु ।
साथ ही आपका नाम एवं चित्र 'धम्बन्तरि' में प्रकाशित किया जायेगा । ब्लाक का व्यय (लगभग २० रुपया) आपको ही देना होगा ।

* उपहार प्राप्त करने के नियम *

- (१) उपहारी आर्डर उक्त अवधि तक ही स्वीकार किये जायेंगे । बाद में नहीं ।
 - (२) उपहारी आर्डर के साथ २५ रु० अग्रिम मनीआर्डर से अवश्य भेजें तथा रसीद आर्डर के साथ संलग्न कर दें । ७०१) का आर्डर देने वाले ग्राहक १००) अग्रिम व फोटो या ब्लाक भेजें ।
 - (३) अपना पूरा पता, रेलवे स्टेशन का नाम, रेलवे लाइन साफ-साफ लिखें ।
 - (४) विक्रीकर नियमानुसार अवश्य लगेगा ।
 - (५) हमारे द्वारा निर्मित आस्थ्रीय औषधियों, पेटेण्ट औषधियों तथा आयुर्वेदिक कैपसुलों की खरीद पर ही उपहार दिये जायेंगे । यदि आप चाहें तो चिकित्सोपयोगी उपकरण औषधियों के साथ मंगा सकते हैं लेकिन उनके मूल्य पर उपहार नहीं दिया जायेगा ।
- कमीशन—५० रु० से कम की दबा मंगाने पर कोई कमीशन नहीं दिया जायेगा । ५१) से ऊपर की औषधियां मंगाने पर १५% तथा १०१ रुपये से ऊपर की औषधियां मंगाने पर १५% कमीशन दिया जायेगा ।
- हमारे कैपसुलों तथा अन्य सभी औषधियों के मूल्यादि का विवरण इसी अंक में देखें । शास्त्रीय औषधियों के मूल्यादि इस वर्ष के विशेषांक "जरा व्याधि चिकित्सांक" में या "प्रतिश्याय अंक" में देखें ।

—पत्र व्यवहार का पता—

निर्मल आयुर्वेद संस्थान

मामू भांजा रोड, अलीगढ़



— सम्पादक एवं प्रकाशक —

दाऊदयाल गर्ग
निर्मल आयुर्वेद संस्थान,
मामू भान्जा रोड,
अलीगढ़ ।

वार्षिक मूल्य	१७.००
इस अंक का मूल्य	२.००

श्रीनाथ अप्रवाल द्वारा सौरा
प्रिन्टिङ्ग प्रेस, अलीगढ़ में निर्मल
आयुर्वेद संस्थान, अलीगढ़ के
लिए मुद्रित ।

विषय-सूची

भाग ५५ जुलाई १९८१ अङ्क ७

आहार एवं बिहार का पथ्यापथ्यत्व — वैद्य बनवारी लाल गोड़ भिष.	७
आयुर्वेद में हस्तेक्षण — पाश्चात्य चिकित्सा की देन नहीं	
— डा० बी० एन० गिरि ए० एम० बी० एस०	११
मधुमेह — वैद्य श्री मौहर सिंह आयं	१७
यज्ञोपवीत — डा० प्रितपाल सिंह बी०आई०एम०एस०	१३
आमवात — श्री शिवकुमार वैद्यशास्त्री आयु० वृह०	२७
गोटापा दूर करने का उपाय — वैद्य भानुप्रताप आर० मिश्र	
बी. एस. ए. एम.	५६
उदर रोग चिकित्सा व सावधानियां — वैद्य चन्द्राजीराव इंगले आ. वृ.	३३
मूत्राघात एवं मूत्रावरोध — डा० गजेन्द्र सिंह छाँकर ए.एम.जी.एस.	३५
सर्व सुलभ घरेलू वस्तुओं द्वारा विभिन्न रोगों की स्वानुभूत चिकित्सा	
— श्री पं० करुणाशंकर वाजपेयी आयु०	३६
स्वास्थ्य प्रश्नोत्तरी — कवि वैद्य श्री वेदप्रकाश गुप्ता	४१
विधि विधान प्रश्नोत्तरी — डा० गुलशन कुमार आचार्य	४३
समाचार एवं सूचनायें	४५

क्षमा प्रार्थी हैं

अलीगढ़ में १ जून १९८१ से कर्पूर लग जाने तथा १॥ माह जारी रहने के कारण "जरा व्याधि चिकित्सांक" छप जाने पर भी डेढ़ माह रक्खा रहा (कुछ ग्राहकों को कर्पूर से पहले भेज दिया था) और तत्पश्चात् अप्रैल ८१ का अंक तथा प्रतिश्याय अङ्क (मई + जून १९८१) भी कर्पूर तथा बिजली की कटौती के कारण देरी से भेज पाये । यह अङ्क भी देरी से इसी कारण भेज पा रहे हैं । उपरोक्त कारणों से अत्यन्त विवशतावश हुई इस देरी से प्रकाशन के लिए हमें हार्दिक खेद है तथा हम क्षमाप्रार्थी हैं ।

आहार एवं विहार का पथ्यापथ्यत्व

वैद्य श्री बनवारी लाल गौड़ भिषगाचार्य, आयुर्वेद-वृहस्पति, एम०ए०- डिप्लोमा इन जर्मेन
मौलिक सिद्धान्त विभाग, राष्ट्रीय आयुर्वेद संस्थान, जयपुर ।

—: ☼ :—

निरन्तर शीर्षमाण शरीर की क्षति-पूर्ति परमावश्यक है, एतदर्थं विधि-विहित आहार योजना की जाती है । यह आहार-योजना शरीर की प्रकृति, वय, देश, काल आदि के अनुसार भिन्न-भिन्न स्वरूप की होती है, क्योंकि एक ही द्रव्य जिस व्यक्ति के अनुकूल हो वही द्रव्य अन्य व्यक्ति के प्रतिकूल भी हो सकता है । इसलिए स्वस्था-वस्था में भी विविध आहार-योजना की आवश्यकता होती है । रोगाक्रान्त शरीर में तो शीर्षावस्था अधिक तीव्रस्वरूप में तथा शीघ्रता के साथ होती रहती है, अतः शरीर के संरक्षण एवं उसके आपूरण की योजना शीघ्र तथा अधिक व्यवस्थित रूप से सम्पादित की जानी अपेक्षित है । इस प्रकार स्वस्थ एवं रूग्णावस्था इन दोनों के लिए ही आहार-योजना अनिवार्य रूपेण ग्राह्य है ।

आहार-योजना की भांति ही शरीर की क्षति-पूर्ति हेतु विहार-योजना भी युक्तिपूर्वक की जानी आवश्यक है । तभी स्वस्थ के स्वास्थ्य की रक्षा तथा रोगाक्रान्त शरीर की रोग से मुक्ति सम्भव है ।

पथ्य—

सामान्यतया शरीर के लिए हितकारी एवं मन को प्रिय लगने वाला पथ्य कहलाता है । अतः हितकारी आहार-विहार एवं रोगनाशक औषधियों का ग्रहण भी पथ्य शब्द से हो जाता है, किन्तु व्यवहार में ऐसा नहीं होता ।

पथ्य शब्द से आहार रूप में ग्रहण किए जाने वाले सभी द्रव्यों तथा विहार रूप में किये जाने वाले सभी कर्मों का ग्रहण “पथ्य” शब्द से किया जाता है । औषधि की गणना चतुष्पाद में है अतः उसकी योजना चिकित्सक द्वारा की जाती है, जबकि आहार-विहार सम्बन्धी उपशम चिकित्सक द्वारा निर्दिष्ट होने पर भी सामान्यतया परिचारक या रोगी के पारिवारिक सदस्यों के आधीन होता है ।

अपथ्य—

पथ्य के विपरीत आहार-विहार अपथ्य कहलाते हैं ।

आहार का पथ्यत्व

आहार का पथ्यत्व उसके सम्यक् प्रयुक्त होने पर धातु साम्यापादन के रूप में प्रकट होता है, क्योंकि आहार से ही शरीर की उत्पत्ति, स्थिति एवं विनाश सम्भाव्य है ।¹ आचार्यों ने आहार रूप में प्रयुक्त पथ्य स्वच्छ अन्न को प्राणधारियों का प्राण कहा है ।² इस अन्न के कारण ही बल, वर्ण, मेधा, जीवन, प्रतिभा, सुख आदि की प्राप्ति होती है ।³ आहार की उपयोगिता उसकी उत्कृष्ट योजना पर अवश्य निर्भर करती है क्योंकि उसके अभाव में हितकर आहार भी अहितकर एवं अग्नि की विकृति करने वाला होता है, क्योंकि आहार जठराग्नि के ईंधन के रूप में प्रयुक्त होता है, अतः ईंधन की विकृति, बाहुल्य या अल्पत्व ये सभी अग्नि के प्रतिकूल होने से

¹ ब्रह्मादेवि लोकस्याहारः स्थित्युत्पत्तिविनागहेतुः । —सु० सू० ४६/३ ।

² प्राणाः प्राणधृतामन्नं, तदयुक्त्या हिनस्यसूत्रं । विषं प्राणहरं तच्च युक्तियुक्तं रसायनम् ॥

³ प्राणः प्राणधृतामन्नमन्नं लोकोऽभिधावति । वर्णः प्रसादः शौक्ल्यं जीवितं प्रतिभा सुखम् ।

तुष्टिः पुष्टिः... .. तच्चाप्यन्ने प्रतिष्ठितम् ॥ —च० सू० २७/३६६-३६० ।

उसके विनाशक होते हैं। जबकि अग्नि को देह का मूल कहा गया है, अतः इस मूल में ही विकृति होने से सम्पूर्ण शरीर में विकृति होकर वह विनाश को प्राप्त होता है। अतः अन्न का प्रयोग शरीर में हितकारक रूप में ही किया जाता है।

सम्यक् प्रयुक्त आहार ही पथ्य है—

आहार की पथ्यता उसके सम्यक् प्रयोग पर ही निर्भर है। आहार शरीर में अपनी कामुक शक्ति के आधार पर दो प्रकार का होता है—

(क) हिताहार—जोकि देह धातुओं को पुष्ट एवं सम बनाये रखता है।

(ख) अहिताहार—देह धातुओं के विपरीत एवं दोषों का वैषम्यापादन करने वाला आहार अहिताहार कहलाता है। वस्तुतः अहिताहार दोषों को अपने स्थान से विवृद्ध एवं प्रचलित करते हुए भी शरीर से बाहर नहीं निकालता है। यथा—

यत्किञ्चिद्वैषम्यापाद्य न निर्हरति कायतः।

आहारजातं तत्सर्वमहिताय प्रपद्यते ॥ —च०सू०२६

शरीर में धातुओं का साम्यापादन और धातुवर्द्धन-पोषण ही आहार का प्रमुख प्रयोजन है। इस प्रयोजन की सिद्धि हिताहार से ही होती है। हिताहार भी जठराग्नि पाक प्रक्रिया द्वारा परिणत होकर ही धात्वादि का पोषण करता है। इसकी परिणति में निम्न भावों की प्रमुखता है—

ऊष्मा, वायु, क्लेद, स्नेह, काल तथा समययोग। यद्यपि आहार के परिणाम में ऊष्मा, वायु आदि सभी का महत्वपूर्ण सहयोग है तथापि समययोग का होना इन सब में अधिक आवश्यक तथा महत्वपूर्ण है। क्योंकि आहार की अयुक्तता ही आहार गुणों में वैपरीत्य उपस्थित कर हिताहार को भी अहिताहार बना देता है। इसीलिए आचार्यों ने आहार की सम्यक् युक्तता के लिए प्रयोग की विभिन्न विधियों का उल्लेख किया है। चरक में निदिष्ट आहार विधि विशेषायतन प्रयुक्त किये जाने वाले आहार को सम्यक्-युक्तता के लिए ही है। क्योंकि आहार का ऐसा

विधान जो कि हिताहित के हेतुओं का निर्देश करता हो वही आहार विधि विशेषायतन¹ है, ऐसा संक्षेप में कहा जा सकता है। ये विशेषायतन ८ हैं—

१. प्रकृति—आहार एवं औषध द्रव्यों में स्वभावतः रहने वाले गुर्वादि गुणों को प्रकृति कहा जाता है। प्रकृति को ही स्वभाव भी कहा जा सकता है, द्रव्यों की प्रकृति के उदाहरण हैं—माष(गुरु), मुद्ग (लघु), शूकर (गुरु), हरिण (लघु)।

२. करण—स्वाभाविक द्रव्यों में किये जाने वाले संस्कार को करण कहते हैं। संस्कार को ही गुणान्तर-राधान कहा गया है। यह गुणान्तरराधान तोय, धग्नि सन्निकर्ष, शीघ्र, मन्थन, देश, वासन, भावना, काल प्रकर्ष, भाजन आदि के द्वारा होता है।

३. संयोग—दो या दो से अधिक द्रव्यों का एक-त्रीण संयोग कहलाता है। द्रव्यों के इस संयोग में 'विशेष' की प्राप्ति होती है अर्थात् पृथक्-पृथक् द्रव्यों में नहीं प्राप्त होने वाले गुण संयोग के द्वारा प्राप्त हो जाते हैं। यथा—मधु और घृत।

४. राशि—मात्रा और अमात्रा के निश्चयाय राशि का प्रयोग होता है। पह दो प्रकार को है—सर्वग्रह, परिग्रह।

५. देश—देश का तात्पर्य है स्थान। अतः द्रव्यों की स्थान विशेष पर उत्पत्ति एवं विचरण तथा देश के विपरीत गुणों के अनुसार देश का सात्म्य निदिष्ट किया जाता है।

६. काल—नित्यग और आवस्थिक भेद से काल के दो प्रकार हैं। आवस्थिक काल बिकार की अपेक्षा करता है जबकि नित्यग काल ऋतु सात्म्य की अपेक्षा करता है।

७. उपयोग संस्था—भोजन के उपयोग का नियम उपयोग संस्था कहलाता है। यह भोजन के जीर्ण होने के लक्षणों की अपेक्षा करता है।

८. उपभोक्ता—जो आहार का उपयोग करता है

¹ आहारस्य विधिः प्रकारो विधानं वा इत्याहार विधिः, तस्य विशेषो हितत्वम हितत्वं च, तस्यायतनानि हेतूनी-त्याहारविधिविशेषायतनानि। आहारप्रकारस्य हितत्वमहितत्वं च प्रकृत्वादिहेतुकमित्यर्थः।

धन्वन्तरिः

वह उपभोक्ता कहलाता है। इसी के आधीन ओक सात्म्य (अभ्यास सात्म्य) रहता है।

असम्यक् प्रयुक्त आहार—

ऊपर 'सम्यक् प्रयुक्त आहार' शीर्षक के अन्तर्गत प्रकृत्यादि आठ आहार विधि विशेषायतनों का उल्लेख किया गया है। इन विधि-विशेषायतनों को छोड़कर किया गया भोजन विभिन्न विकृतियों को उत्पन्न करता है। संक्षेप में असम्यक् आहार का स्वरूप निम्न प्रकार से होता है—

१. विषभाशन—बहुत, अल्प, कालातीत या अकाल-भोजन।

२. अध्यशन—किये हुये भी जन के शक के पूर्व ही भुनः भोजन कर लेना अध्यशन कहलाता है।

३. प्रमिताशन—एक रसाभ्यास।

४. अनशन—भोजन का सर्वथा अयोग।

विहार का पथ्यत्व एवं अपथ्यत्व

विहार का तात्पर्य शरीर के द्वारा होने वाली चेष्टायें हैं, जिनमें नित्य प्रति किये जाने वाले कर्मों का समावेश होता है, यथा—चलना, बैठना, स्वप्न, जागरण, श्रम इत्यादि। इसके अतिरिक्त कर्मेन्द्रियों एवं ज्ञानेन्द्रियों द्वारा होने वाली सभी क्रियाओं का समावेश विहार में हो जाता है। इन समस्त कर्मों का प्रभाव दोषों पर अनुकूल या प्रतिकूल परक होता है। अतः इसे भी प्रकृति और विकृति में हेतुभूत माना जाता है। इससे दोष धातु और मल निश्चितरूपेण प्रभावित होते हैं। यथा—रात्रि जागरण रूक्ष गुण को उत्पन्न करता है अतः वातदोष के समान गुण का उत्पादक होने के कारण वात की अभिवृद्धि भी करेगा। यदि वात, पित्त, कफ क्षीण हैं

तथा इन्हें क्षीण करने वाले कर्मों का उपयोग सर्वथा निषिद्ध कर दिया जाय तो दोषों की क्षयावस्था में किंचित् रुकावट होगी। जैसे—दिन में निरन्तर कर्म करते रहने के कारण कफ का क्षय होता है। यदि दिन में शयन किया जाय तो कर्म के नहीं करने के कारण कफ का क्षय भी नहीं होगा। अतः अपने हेतु से इकट्ठा होता हुआ कफ जब कर्म नहीं करने से क्षीण नहीं होता है तो वह (इकट्ठा होता हुआ कफ) वृद्धिवत् प्रतिभासित होता है तथा तद्वत् ही कार्य करता है इसलिए स्वप्न को साक्षात् कफ की वृद्धि का हेतु नहीं मानते हुए भी परोक्ष रूप से कफ का वृद्धिकर्ता माना गया है। यथा—

“तत्र स्वप्नः स्वकारणादेव चोद्यमानस्य कफस्य क्षय-कारण शरीर परिस्पन्दादिनिरोधकत्वेन वृद्धिकर उच्यते, न तु स्वप्नः साक्षाच्छ्लेष्मवृद्धिं करोति।

(च० सू० १/४५ पर चक्रपाणि)

इसी तरह अन्य दोषों के भी क्षय एवं वृद्धिकारक कर्मों का विश्लेषण करना चाहिए। इस प्रकार विहार का शरीर पर साक्षात् रूपेण दोष-शामक और प्रकोपक प्रभाव होने के कारण पथ्यत्व और अपथ्यत्व सिद्ध हो जाता है।

उपयुक्त आहार एवं विहार का पथ्यापथ्यत्व स्वस्थान-वस्था और प्रत्येक रोग में उपयुक्त रूप से विचार करें तो चिकित्सा में सीकृत होता है क्योंकि लोनिध्वराज के शब्दों में पथ्य ही चिकित्सा है तथा अपथ्य ही रोग है—

पथ्ये सति गदातंस्य किमौषध निषेवणैः।

पथ्येऽसति गदातंस्य किमौषध निषेवणैः ॥

सावधान

कतिपय ग्राहकों के पत्रों से ज्ञात हुआ है कि हमको भेजे गये औषधियों एवं चिकित्सो-पयोगी उपकरणों के आदेश पत्रों का सामान उन्हें अन्यत्र कहीं से प्राप्त हुआ है। आप कोई भी सामान मंगायें उसका बिल मिलने पर देख लें कि उस पर निर्मल आयुर्वेद संस्थान, एवं दाऊ मीडीकल स्टोर्स छपा है या नहीं। तथा वी. पी. कहां से आई है। हमने इन्हीं संस्थाओं से वी. पी. भेजी हैं या भेजेंगे। इसके अतिरिक्त किसी अन्य फर्म से आपको वी. पी. मिलती है तो उसे हरगिज न छुड़ायें तथा उनका बिल आदि जो आपको मिले हैं वे हमें रजिस्टर्ड लिफाफा द्वारा भेज दें। इस सूचना के पढ़ने से पहले ही आप किसी ऐसी जालसाजी का शिकार हो गये हैं तो आपको जो बिल आदि मिले हैं वे पूर्ण विवरण के साथ रजिस्टर्ड लिफाफा द्वारा अवश्य भेज दें। आपके सहयोग के लिये आभारी रहेंगे।

दाऊदयाल गर्ग सम्पादक—‘धन्वन्तरि’

—निर्मल आयुर्वेद संस्थान, अलीगढ़

—दाऊ मीडीकल स्टोर्स, अलीगढ़।

आयुर्वेदिक औषधि—जगत में,

इन्जेक्शन एक आविष्कार

चिकित्सक बन्धु लाभ लें

अपनी चिकित्सा में पूर्ण सफलता पाने के लिए

विशुद्ध आयुर्वेदिक

* हानिरहित

** पीड़ा रहित

*** पूर्ण निरापद

**** तत्काल फलदर्शी

***** रोग को समूल नष्ट करने में सक्षम

अत्याधुनिक विधि से, कुशल वैज्ञानिकों द्वारा निमित्त—

आयुर्वेदिक इन्जेक्शनों एवं औषधियों

का अपनी चिकित्सा में प्रयोग कर यश एवं लाभ उठाने के भागीदार बनें ।
विशेष विवरण, फिजीशियन सेम्पल तथा एजेन्सी के लिए पत्र-व्यवहार
निम्न पते पर करें—

सिद्धि फार्मसी प्रा० लि०

८, सिविल लाइन्स, ललितपुर (उ० प्र०)

आयुर्वेद में इन्जेक्शन-पाश्चात्य चिकित्सा की देन नहीं

डा० बी० एन० गिरि ए० एम० बी० एल०, एस० सी० डी०, डंगरा (गया) बिहार।

परिचय— पिचकारियों की सहायता से शरीर की त्वचा को छेदकर मानव शरीर में औषधि प्रवेश कराने को आंग्ल भाषा में पेरेंट्रल एडमिनिस्ट्रेशन (Parental Administration) कहते हैं। इसी का बोधक शब्द सूचीवेध, सूचिका भरण अथवा इन्जेक्शन (Injection) नाम से चिकित्सा जगत में प्रचलित है। इन्जेक्शन शब्द से इसका पुनर्जन्म हुआ। और इसका स्पष्ट अर्थ होता है सिरिन्ज के द्वारा शरीर के अन्दर औषधि प्रवेश करना। वर्तमानकाल की चिकित्सा में इन्जेक्शन एक महत्वपूर्ण अङ्ग है। आयुर्वेदीय संहिताओं के अवलोकन से यह स्पष्ट पता चलता है कि हजारों वर्ष पूर्व वैदिक काल में भारतीय आयुर्वेदज्ञ चिकित्सक मांस, त्वचा, आन्त्र एवं रक्त में औषधि प्रवेश करके रोगियों को रोगमुक्त किया करते थे। भारतीय चिकित्सकों ने लगभग पाँच हजार वर्ष पूर्व वस्ति चिकित्सा का आविष्कार किया था जिसके द्वारा सीधे गर्भाशय, मूत्रेन्द्रिय, आंतों में औषधियों के ववाध, तेल, फलों का रस आदि पहुँचाकर रोगग्रस्त मनुष्यों को शीघ्र व्याधिमुक्त किया करते थे। वस्ति चिकित्सा तीन प्रकार की है जिसे अनुवासन, निरूह वस्ति तथा उत्तर वस्ति कहते हैं—

उपक्रमानं सर्वेषां सोऽ प्रमोस्त्रिविधस्तु सः ।

निरूहोऽनुवासनं वस्तिश्चर तेन साधयेत् ॥

—अ० ह० सू० १६

वमनादि सब साधनों में वस्ति ही सबसे श्रेष्ठ है। घी, तैलादि करके पिचकारी के द्वारा जो चिकित्सा की जाती है उसे अनुवासन वस्ति तथा औषधियों के काढ़ा, दूध आदि इनको एक साथ मिलाकर के देते हैं उसे निरूह वस्ति कहते हैं।

यः स्नेहेदोयते सस्यादनुवासन नामकः ।

सषाय क्षीर तैलेयां निरूहः सा निगद्यते ॥२॥

—शा० च० स०

गर्भाशय, मूत्राशय, योनिमार्ग आदि की चिकित्सा

उत्तर वस्ति के द्वारा की जाती थी जैसा कि अष्टांग हृदय में उल्लेख मिलता है।

वस्तो रोगेषु नरिणा योनि गर्भाशयेषु च ।

द्विधास्थापन शुद्धभ्यो विदध्याद्वस्तिमुत्तरम् ॥

—अ० ह० सू० १६

गर्भाशय, मूत्राशय, योनिमार्ग के रोगों में दो अथवा तीन आस्थापन वस्तियों से शोधन करके उत्तर वस्ति देनी चाहिये। इस विधि को आजकल के वैज्ञानिक चिकित्सक सिम्पल इन्जेक्शन (Simple Injection) अथवा वस्ति चिकित्सा ही कहते हैं। यह कई प्रकार की होती है। गुदामार्ग, आमाशय, योनिमार्ग, गर्भाशय, मूत्रमार्ग आदि को वस्ति चिकित्सा कहते हैं। वस्ति चिकित्सा के लिये विभिन्न प्रकार के यन्त्र बाजार में उपलब्ध हैं जिनकी सहायता से औषधियों के घोल पहुँचाकर चिकित्सा की जाती है। वर्तमान समय के यन्त्रों के नाम इस प्रकार हैं— इस Douche, एनिमा Enema, कैथेटर Catheter, कान की पिचकारी Ear syringe, ग्लेसिरिन सिरिन्ज इत्यादि। इसके पश्चात् क्रमशः विकास एवं अनुसन्धान करते हुये आज से लगभग दो-तीन हजार वर्ष पूर्व के भारतीय आयुर्वेदज्ञ चिकित्सक रक्त में औषधि पहुँचाकर रोगियों की चिकित्सा कर आरोग्य किया करते थे। ऐसा पुष्ट प्रमाण आयुर्वेद की कई संहिताओं में प्राप्त होता है। इस काल में एक विशेष प्रकार के यन्त्र की सहायता से जिसे काकपद यन्त्र कहा जाता था, मस्तक के ब्रह्मरन्ध्र के स्थान का बाल साफ कर अर्द्रक स्वरस से स्वच्छ कर इस यन्त्र की सहायता से खरोच बनाकर जिसमें रक्त निकल आवे फिर उस स्थान पर औषधियों के सत्व अथवा शीघ्र-क्रियाशील तत्वयुक्त औषधि को रक्त में मिलाने का विधान मिलता है। जैसाकि चरक संहिता के निम्न उदाहरण से इस बात की पुष्टि होती है—

चर्म कपायः कर्कं विल्वसमं मूर्ध्नि काक पदस्य ।

कृत्वाद्यं धातु कटभी कटुकं वटफल प्रघंसन्त्य ॥६॥

छागं गव्यं बहिर्धवा मांसं कोदकदुमेव वा ॥

दद्यात् काक पत्रे तस्थि ततः संकमते विषम ॥६६॥

—च० सं० चि०

रोगी के मल्लक के ब्रह्मरन्ध्र का काकपदाकृति से त्वचा में क्षत बनाकर उसपर विष्व चर्मकपा, सासला, शिकाकाई के कल्क का प्रलेप करें। और पश्चात् कटमी, ज्योतिष्मति, कटुक, कालीमिर्च, कटफल, देवदाली इन द्रव्यों का चूर्ण बनाकर नासा मार्ग में प्रथमन करें। विष आचूषण के लिये हरिण, कुक्कुट आदि का मांस रखने का प्रमाण है।

बौद्धकालीन ग्रन्थ मिलिन्द प्रश्न संदर्भ पुण्डरिक सूत्र औषधि परिवर्तन के पांचवें अध्याय में लिखे उदाहरण से प्रमाण मिलता है कि उस काल में शिरा को वेधकर सुई के अग्रभाग द्वारा शरीर में औषधि प्रवेश किया जाता था। कोई वैद्य सर्व रोगों को जानने वाला हो वह किसी भी जम्मान्ध की किकिस्ता के लिये उपाय सोचे क्योंकि कोई भी रोग वातिक, पित्तिक एवं श्लेष्मिक तथा त्रिदोषिक होता है। व्याधि को शास्त करने हेतु हिमालय पर जाकर ये चार औषधियों की खोज करें। प्रथम सर्वव्रण रसानुगता, सर्वव्याधि, प्रमोचनो सर्वविद विनाशनी तथा सुखप्रदा, पर्वत के ऊपर नीचे घूमकर ये चारों औषधियों की छान-बीन करें। किसी को चबाकर, किसी को पीसकर, किसी को अन्य औषधियों में मिश्रित कर दें एवं शिरा को वेधकर सुची से द्वारा औषधि प्रवेश करें तो जम्मान्ध नेत्र पा सकते हैं। इसके बाद केवल बौद्ध कालीन आचार्य नागार्जुन ने सन् १५० ई० में एक दो प्रकार की औषधियों का आविष्कार किया जो रक्त में दिया जाता था। रस तन्त्र के खोज के उपरान्त आयुर्वेदज्ञों ने विभिन्न प्रकार के विषों, धातुओं, उपधातुओं एवं जड़ी-बूटियों का रस-रसायन में प्रयोगों का अनुसन्धान किया, तथा रक्त में प्रविष्ट करने के लिये और भी शीघ्र गुणकारी उपाय एवं कई प्रकार के सुचिकाभरण रस का प्रयोग आविष्कार किये जो निम्न प्रकार से हैं—

ब्रह्मव बिकीर्ण लोलि लवे गुंजके माल ददे-

दत्वा सम्पुट वद्ध तांत्रिक धनुर्वति स ॥साहिमे।

कास, श्वासमरोचकप्रलपनं कंषं च ह्रिकतुरं

मुक्तं बधिरत्व मुग्धवम पस्मारं जवेत त्वघात ॥६४॥

—२० रत्न० सम० अ० १२

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

यदि रोगी धीर सन्निपात, वात विकार, धनुर्वति आदि से पीड़ित हो, हाथ पैर आदि अंग शिथिल एवं ठंडा पड़ गया हो तो तालु के (ब्रह्मरन्ध्र) के बीच में यज्ञ की सहायता से छेदकर रक्त की बूंदें निकलते ही उसमें रती प्रमाण सूचीमुख रस देकर रक्त मिश्रित कर दें। एवं सम्पुट कर दें तो रोगी काल के शास से अवश्य बच जाता है। यथा इसी ग्रन्थ में सुचिका भरण रस के सम्बन्ध में लिखा है—

सन्निपातेन तीव्रेण सुसुषोर्भगतस्थ च।

तालुनिवृद्धयित्वाऽथ रसमेनं विनिक्षिपेत् ॥७५॥

सुच्छाति सूक्ष्मया तोयभिन्नयाति प्रयत्नतः।

ततस्तेलेने संलिप्त्वा निर्वति सन्निवेशयेत् ॥

ततोऽर्धग्रहरादूर्ध्वं मुक्त सूत्र पुरीषकम्।

लब्धसंज्ञं प्रतापाढ्यं दोलयतं शिरो मुहुः ॥७७॥

—२० र० सं०

जो मनुष्य भयंकर सन्निपात से पीड़ित हो, उसे शिर के बालों को उस्तरे से साफकर तालु में एक बहुत बारीक छेद करें। पश्चात अत्यन्त बारीक सुई की नोक को पानी में डुबोकर, इस नोक (अग्रभाग) में जितनी औषधि लग जाये उतना ही लेकर तालु के छेद में भर दें, फिर रोगी के सिर एवं सर्वांग में तेल की मालिश धीरे-धीरे करें पश्चात निर्वात स्थान में रोगी को रखें। डेढ़ घण्टे बाद जब रोगी मलमूत्र का त्याग करें। संज्ञा लौट आये और सिर को बार-बार हिलावें तो समझना चाहिए कि रोगी औषधि के प्रभाव से मुक्त हो रहा है। इस प्रकार के इंजेक्शन को आज के आधुनिक चिकित्सक इंट्रावैन्ट्रिकुलर इंजेक्शन Intraventricular Injection कहते हैं। शास्त्रं घर संहिता के मध्यम खण्ड में लिखित सुचिका भरण रस का भी तात्पर्य यही है कि रोग पीड़ित मनुष्य के रक्त में तत्काल औषधि प्रवेश कराया जाये।

संलग्नो यो भवेत् संतस्तं गृह्णोवाच्छनैः शनैः।

वायु स्पर्शो यथा न स्यात्तथा कृप्यां निवेशयेत् ॥१२२॥

यावत्सूक्ष्मां मुखे लग्नः कूल्यां निर्याति भेषजम्।

तावत्साम्नां रसो देयो मुच्छिते सन्निपातिनि ॥

धुरेण प्रच्छिते मृद्धि तत्रां गुल्या च घर्षयेत्।

रक्त भेषजं संयर्कानि मुच्छितोऽपिहिजीवतो ॥

तथैव सर्पं वृष्टस्तु मृदावस्थोऽपि जीवती।

प्रदा तापो भवे तस्य मधुरं तत्र दियोते ॥१२५॥

—शा० घ० सं०

पारद एवं विष द्वारा संपिश्रित औषधि को स्वच्छ प्रकार से रखने का स्पष्ट निर्देश दिया गया है जिससे कि शीशी में रखते समय वायु का सम्पर्क नहीं हो सके, जैसाकि वर्तमान समय में शीशी के स्वच्छ निर्वात स्थान में जो बड़े-बड़े निर्माणशालाओं में औषधि भरते समय किया जाता है जिससे कि निर्मित औषधि को, हवा के साथ क्रीटाणु जाकर दूषित न कर दें। सन्निपात एवं सर्पदंश से पीड़ित मनुष्य के मस्तक के तालू (ब्रह्मरन्ध्र) स्थान के बाल साफ करके सूचीमुख शलाका यन्त्र से (जो उस काल में बने एक विशेष प्रकार यन्त्र) तालू स्थान को छेदकर रक्त निकलते ही सुई के अग्रभाग में जितनी औषधि आ सके लेकर रक्त में मिला दें। तत्पश्चात् स्वच्छ अंगुली से तब तक मलता रहे जब तक औषधि पूर्णतः मिल न जाये। जब औषधि पूर्णतः रक्त में मिल जायेगी तब पीड़ित मनुष्य की सूच्छा दूर होकर वह होश में आ जायेगा। यदि औषधि प्रयोग के बाद सर्वांग में दाह उत्पन्न हो तो मधुर द्रव्य, दाख गुलकन्द आदि का सेवन कराने का निर्देश मिलता है। जैसाकि वर्तमान काल के चिकित्सक दाह होने पर डेक्स्ट्रोस Dextros का प्रयोग किया करते हैं। स्वयं भैरवाचार्य ने सूचिकाभरण रस के सम्बन्ध में निम्न आदेश दिया है—

सूचिका भरणो नाम भैरवेण प्रकीर्तितः ।

सूचिकाग्रे दातव्यः सन्निपात निर्वहणः ॥४७॥

—२० सा० संग्रह

इसी प्रकार रसायन संग्रह, रस कामधेनु, वृ०योग तरंगिनी, रसराज सुन्दर आदि ग्रन्थों में ब्रह्मरन्ध्र में ही नहीं शरीर के कई भागों में जैसे हाथ, पैर आदि में चीरा लगाकर औषधि प्रयोग करने का निर्देश मिलता है।

सूचिका भरणो नाम रसोगुप्तमो भवेत् ।

संज्ञा नाशो विच्छेदस्य बलः कांजिक पेयितः ॥

ब्रह्मरन्ध्र प्रयोक्तव्यः शाखास्त्रति हिमोदये ।

—२० रा० सु०

और भी देखिये इसी ग्रन्थ के पृष्ठ २४१ में लिखा है—

हृताबो वरदं तुल्यं गरलेन सुमदितम् ।

मुद्रा प्रमाण विटिआ नाभि हृतालू वेशके ॥

कुशेन चर्म निभिय विधुष्याद्रैकवारिणः ।

रस प्रभावमात्रेण नेत्रमदार्यत् आणात् ॥

सावधनी भवत्ये वना चेतन्यं प्रवर्तते ।
ततस्त्वे कांसु वाटिकां वदवाद्रक वारिण ॥
सर्वथा सुखमाप्नोति भोजय दवि भक्त करा ।
सूचिका भरणं नाम रसः परम दुर्लभः ॥

—२० रा० सु०

नाभि, हृदय, तालू, त्वचा आदि में कुशायन्त्र द्वारा चीरा लगाकर औषधि प्रवेश कराने का निर्देश दिया गया है। सन् १९०५ में मद्रास के सर्वेत्तर माननीय लार्ड एपि-यल महोदय ने भारतीय मेडीकल एसोसियन में अपने उद्घाटन भाषण में कहा था कि डा० कर्नल किंग ने यह प्रमाणित कर दिया है कि टीका Vaccination एवं सूचीवेध Injection के आदि आविष्कारक डा० जैनर के आविष्कार के पूर्व भारत में वैदिक काल में ही उपरोक्त इन्जेक्शनों का अनुसंधान एवं आविष्कार हो चुका था। इसके प्रमाण के रूप में यजुर्वेद को एक मन्त्र के आधार पर कर्नल किंग ने कहा था—

सस्यान्जन प्रसर्प रवमंग संगं परुषवः ।

ततो धंसम विवाधस उग्रो मध्यमः शीसिः ॥

—यजुर्वेद १७-१६

भारतीय आयुर्वेदज्ञों ने जब देखा कि औषधि प्रयोग के द्वारा शरीर में बढ़ा हुआ विकृत रक्त शुद्ध नहीं किया जा सकता- तब ऐसी दशा में विकृत रक्त को निकालने की आवश्यकता को ध्यान में रखते हुए शिरावेध की पद्धति निकाली। जो शरीर के विभिन्न भागों में आवश्यकतानुसार शिरावेध किया जाता था और प्रवृष्ट विकृत रक्त को निकाल देने से रोगी शीघ्र रोगमुक्त हो जाता करता था।

विध्येवस्त शिरां वाहवना कुञ्चित कूर्परे ।

वद्धवा सुखोद्य किष्टस्य सुष्टिमगुण्ठागमिणाम् ॥

ऊर्ध्व वेद्य प्रवेशाच्च पटिकां चतुरंगुले ।

—अ० ह० सू० अ० २७

हाथ को शिरा के वेधन से रोगी को सुखपूर्वक बँठा कर कोहनी को बिना मोड़े (सिकोड़े) अर्थात् हाथ को फैलाकर एवं अंगुठे को अन्दर रखकर मुट्ठी बन्द करवा दें। शिरावेधन स्थान से ऊपर चार अंगुल प्रमाण एक पट्टी बांधकर शिरा का वेधन करें। जैसाकि वर्तमान समय में शिरान्तर्गत Intravenous Injection देने के पूर्व बन्धन

tourniquet के द्वारा बांधकर शिरावेधन कर औषधि पहुंचाई जाती है।

पाश्चात्य चिकित्सकों का मत है कि सूचीवेध पद्धति का सर्वप्रथम आविष्कार यूरोपीय देशों में हुआ है। यह विचार सर्वथा भ्रामक और मिथ्यापूर्ण ही कहा जा सकता है, क्योंकि "रक्त भेषज-समर्कमविच्छतोऽपिद्धि जीवतो" का सूत्र आयुर्वेदीय चिकित्सा पद्धति में औषधियों को रक्त में मिला देने का निर्देश देता है। भारतीय आयुर्वेदजनों का सिद्धान्त स्वच्छतापूर्वक औषधियों को रखकर आवश्यकता पड़ने पर शीघ्र रक्त में प्रविष्ट करने का भी तथा आधुनिक विज्ञान का सिद्धान्त भी यही है। आयुर्वेदीय सूची-भरण रस में जो भी द्रव्य पड़ते हैं वे स्वयं विकृतदोष एवं कृमि नाशक द्रव्य हैं। प्रयोगों के पश्चात् कभी पकते नहीं ये और न कभी लाली, फोड़ा, शोथ होता सम्भव था। हजारों वर्ष पूर्व साधारणतः रोगियों पर निष्पिधता के साथ औषधि प्रयोग किया जाता था। कभी-कभी प्रयोगों के बाद ताप एवं दाह होने पर मधुर द्रव्य देने का प्रमाण मिलता है जो पहले ही उल्लेख किया जा चुका है। पाश्चात्य वैज्ञानिकों के भस्तिष्क में इन्जेक्शन सम्बन्धी ज्ञान कब से आया है इसकी भी एक झलक देखें कि इन्जेक्शन चिकित्सा का प्रादुर्भाव किस प्रकार हुआ। गेरियर महोदय ने अपनी पुस्तक "हिस्ट्री आफ फार्मसी" में डा० सी० पी० परावाज द्वारा हाईपोडर्मिक सिरिज का प्रमाण मिलता है जो अफीम के स्थान पर मारफिन का प्रयोग करने का निर्देश सन् १८५५ में किया गया है। इसी प्रकार 'दी एलिमेंट्स आफ मेटेरिया मेडिका एण्ड थेरापियुटिक्स १८५४' में श्री पेरेरा महोदय ने शिरा में औषधि प्रवेश करने का उल्लेख किया है। एवं वीयल तथा सर क्रिस्टोफर वेन १८६४ जिसने सर्वप्रथम शिरामार्ग द्वारा शरीर में औषधि प्रविष्ट करने का ज्ञान प्राप्त किया था, इनका तथा अन्य विद्वान चिकित्सकों का उल्लेख करते हुए इन सभी की शंकाओं का स्पष्ट उत्तर देकर भ्रम निवारण किया है। अधिक मात्रा में शिरा में औषधि प्रवेश करना, वायु का शिरा में प्रवेश से भय अथवा मृत्यु होना इत्यादि। चार्ल्स हन्टर Charles Hunter ने अपनी पुस्तक प्रैक्टिकल रिमाक्स ओन दी हाइपोडर्मिकल ट्रीटमेंट आफ डिजोज १८६३ में (The Practical Remarks on the Hypodermic treatment of disease.

1863) सुई द्वारा औषधि दिये गये स्थान पर शोथ एवं लाली बन जाने की सम्भावना आदि प्रश्नों के प्रकाशित लेखों पर प्रतिक्रिया व्यक्त करते हुए उत्तर दिए हैं। उस काल में सब ही प्रकार के त्वचास्तर्गत इन्जेक्शनों से शोथ, लाली हो जाया करती था, परन्तु किसी भी वैज्ञानिक ने प्रयोग किये जाने वाले औषधियों के मिश्रणों को जीवाणुरहित करने का प्रयास नहीं किया। सन् १८६७ ई० के ब्रिटिश फार्मोकोपिया में एकमात्र मारफिन इन्जेक्शन का वर्णन मिलता है। इसके पूर्व के फार्मोकोपिया में कोई इन्जेक्शन का उल्लेख प्राप्त नहीं होता है। सन् १८८५ के फार्मोकोपिया देखने से विदित होता है कि इसमें एपो-मारफिन एवं अर्गोटिन नामक दो प्रकार के इन्जेक्शनों का वर्णन पाया जाता है जिसमें अर्गोटिन के इन्जेक्शन में कपूर जल को मिश्रित किया गया है, जिससे कि औषधि अधिक दिनों तक जीवाणुरहित बनी रहे तथा शोथ एवं लाली तथा फोड़ा न हो सके। इंग्लैण्ड के वैज्ञानिक इस काल तक भी पूर्ण जीवाणुरहित करने का प्रयास नहीं कर सके थे। सन् १८८४ ई० के अमेरिकन फार्मोकोपिया के एक अध्याय में आलोचनापूर्ण वर्णन से यह पता चलता है कि औषधियों के त्वचान्तर्गत इन्जेक्शन खतरे से खाली नहीं हैं क्योंकि जीवाणुरहित न करने के कारण इन्जेक्शन दिये गये स्थान पर शोथ, लाली हो जाया करती थी।

सन् १८९८ ई० के अमेरिकन फार्मोकोपिया से विदित होता है कि इस काल में इन्जेक्शन सम्बन्धी औषधियों के एम्पुल के मिश्रणों को जीवाणुरहित करने का पूर्ण प्रयास किया गया है। इसमें चार प्रकार के इन्जेक्शनों का प्रमाण मिलता है। एपोमारफिन, कोकेन, अर्गोटिन, मारफिन। उस समय परिष्कृत जल को कुछ मिनटों तक उबालकर ठण्डा किया गया जिससे कि उसके जीवाणुओं का नाश हो जाये एवं मिश्रणों में १.५% फिनोल का मिश्रण किया गया जिससे कि औषधि अधिक दिनों तक टिकाऊ बनी रहे। इस प्रकार अत्यधिक सफलता मिली तथा इन्जेक्शन दिये गये स्थान पर शोथ, लाली, पकना आदि बन्द हो गया। सर्वप्रथम फिनोल का प्रयोग लार्ड लिस्टर ने किया था। सन् १९१४ के फार्मोकोपिया देखने से पता चलता है कि इन्जेक्शन के विषय में और भी विकास किया गया तथा इस समय तक स्ट्रिकनिन का इन्जेक्शन भी प्रयोग में लाया

जाने लगा था। इसमें निर्देश दिया गया है कि मिश्रण तैयार करते समय परिश्रुत जल का उबालकर ठण्डा करके प्रयोग में लाना चाहिए। सन् १९१७ से १९४८ के बीच के विभिन्न फार्मोकोपिया के अवलोकन से विदित होता है कि जीवाणुरहित करने की अनेकों प्रसशनीय पद्धति निकाली गई एवं विभिन्न प्रकार के इंजेक्शनों का निर्माण और आविष्कार किये गये जो चिकित्सा जगत के लिए बरदान सिद्ध हुई हैं। सैकड़ों वर्ष तक अनुसंधान के फलस्वरूप पाश्चात्य वैज्ञानिकों का इंजेक्शन सम्बन्धी ज्ञान चिकित्सा जगत की देन है, जबकि भारतीय आयुर्वेदज्ञ आज से तीन हजार वर्ष पूर्व ही इंजेक्शन चिकित्सा अपनाये हुए थे और इसका प्रभाव शीघ्र एवं दोषरहित होता था। अतएव पाश्चात्य देशों में १८५४ ई० के बाद ओषधि को रक्त में प्रवेश करने की बात लिखी है, जबकि भारत में इससे हजारों वर्ष पूर्व इस पद्धति के द्वारा चिकित्सा की जाती थी।

इस प्रकार आयुर्वेद के विभिन्न ग्रन्थों के अवलोकन से पता चलता है कि लगभग पांच हजार वर्ष पूर्व भारतीय चिकित्सा पद्धति विकास की चरम सीमा पर थी। महाभारत की युद्धाग्नि में लाखों वीरों के साथ-साथ हजारों विद्वान एवं वैज्ञानिक भी लीन थे। दैवदुर्विपाक से अपने देश में पारस्परिक ईर्ष्या, द्वेष जनित कलहों, बौद्धिष्टों का प्रादुर्भाव और देश पर विदेशियों के आक्रमणों से अनेक राजनैतिक एवं सामाजिक परिवर्तन हुए जिसके कारण परम्परानुसार आदान-प्रदान, ज्ञान-विज्ञान के उन्नति पथ में अवरोध ही नहीं, उनका ह्रास होता भी प्रारम्भ हो गया। नवीन अनुसंधानों का होना तो दूर रहा प्राचीन ज्ञान भी लुप्त होने लगा। अनेक ग्रन्थ रत्नों की चोरी हुई एवं लूटे गये। इतना ही नहीं कुछ मदाब्ध विजेताओं ने आयुर्वेदीय ग्रन्थों को अग्निकाण्ड में आहुति देने की अदूर-बशिता का भी परिचय दिया। इस प्रकार विविध विधियों के आयुर्वेदीय ग्रन्थ लुप्त हो गए। भारत का ज्ञान-विज्ञान छिन्न-भिन्न हो गया फलस्वरूप इंजेक्शन सम्बन्धी अनुसन्धान का मार्ग अवच्छेद ही नहीं प्रायः लुप्त ही हो गया।

विज्ञान सभी का है, इस पर सभी का सभान अधिकार है, किसी भी सिद्धान्त को कल्याणकारी सत्य का ग्रहण करना अनुचित नहीं कहा जा सकता क्योंकि संसार परिवर्तनशील है। इस भौतिक युग के व्यस्त एवं रोगग्रस्त

मानव समाज के लिए आयुर्वेदीय चिकित्सा पद्धति में विदोषिक सिद्धान्त के आधार पर तथा नये परिवेश में नवीन संसोधन तथा अनुसंधान की विशेष आवश्यकता है। अतएव आधुनिक विज्ञान की तकनीकी उपलब्धियों का ग्रहण करना अति आवश्यक है। गत ३०-३५ वर्षों से विभिन्न आयुर्वेदिक फार्मसियों ने दोषिक सिद्धान्त के आधार पर आयुर्वेदिक इंजेक्शनों का निर्माण करते आ रहे हैं जो अपने-अपने रोगों में सफल पाये गए हैं। संक्षेप में कुछ आयुर्वेदिक इंजेक्शनों का विवरण इस लेख में समावेश कर देना आवश्यक समझता हूँ—

(१) अर्जुन (सिद्धि, प्रताप, जी. ए. मिश्रा)—यह सभी प्रकार के हृदय रोगों में तथा जलोदर, रक्तचाप, मूर्च्छा, और हृदय बल देने वाला तथा पोषिक है। इसके प्रयोग से हृदयावरण के रोगों को शमन करता है एवं हृदय को बल प्रदान होता है। हिचकी में रासवाण की तरह गुणप्रद है। इससे हृदय ग्रन्थि को विश्राम मिलता है एवं कुपित वायु को शमन करता है। हृदय शूल, हृदयावरण शोथ तथा अनियमित हृदय गति को ठीक कर शीघ्र लाभ पहुंचाता है। २ मि०लि० प्रतिदिन अथवा एक दिन छोड़कर मासान्तर्गत विधि से प्रयोग किया जाता है।

(२) दशमूल (सिद्धि, प्रताप, ए. जी. एम.)—यह आयुर्वेद जगत की विशेष प्रचलित ओषधि है। इसके प्रयोग से प्रसूति ज्वर, योनिशूल, गर्भाशयशूल, वात ज्वर, रज दोष, नष्टार्तव कष्टार्तव एवं गर्भाशय को शुद्ध करने वाला अत्यन्त ही उपयोगी इंजेक्शन है। यह वच्चा होने के पश्चात् गन्दे स्राव को बाहर कर देता है। पाचन शक्ति को बढ़ाता है। यह संक्रामक कीटाणुओं का नाशकर कुपित वायु को शांत करता है, दशमूल मूत्रल है अतः मूत्राल्पता में भी विशेष लाभकारी पाया गया है।

मात्रा—२ मि०लि० प्रतिदिन अथवा एक दिन छोड़ कर मासान्तर्गत विधि से दिया जाता है।

(३) वेल (सिद्धि, जी. ए. मिश्रा)—यह आमातिसार, रक्तातिसार की प्रधान ओषधि है। ग्रहणी एवं प्रवाहिका में जब मल के साथ रक्त आता हो, ऐंठन, मरोड़ हो तो इसके प्रयोग से शीघ्र लाभ मिलता है। इसके अतिरिक्त मानसिक रोग, अपस्मार, प्रलाप, हृदय की धड़कन एवं घबराहट में उपयोगी है। हृदय की धड़कन में अर्जुन के साथ मिलाकर देने से शीघ्र लाभ मिलता है। यह पुरानी

पेचिस, अतिसार में अत्यन्त ही उपयोगी है। उपरोक्त इन्जेक्शनों के समान ही प्रयोग होता है।

(४) लहसुन (सिद्धि, जी. ए. मिश्रा)—इसका प्रयोग तीव्र वायु नाशक के रूप में होता है। वायु के द्वारा बज्जों का फड़कना, अधिक डकारें आना, पेट का अफारा, दर्द होना, अज्जों का कांपना सभी प्रकार के वायु जनित दर्दों एवं आमवातिक शूलों में विशेष लाभदायक तथा पक्षाघात, एवं अन्य वात व्याधियों में लाभप्रद पाया गया है।

(५) कालरा (सिद्धि)—विसुचिका, हैजा एक प्राणघातक रोग है। इसमें इस इन्जेक्शन का प्रयोग अत्यन्त ही लाभप्रद पाया गया है। इसके प्रयोग से वमन, अतिसार, ऐंठन, शूल, शीतांगादि लक्षण में अत्यन्त ही सफल एवं शीघ्र गुणकारी है।

मात्रा—उपरोक्त ही विधि से आवश्यकता पड़ने पर प्रत्येक दो घण्टे पर देनी चाहिए।

(६) सोमा, सोमलता (सिद्धि, मार्तण्ड)—यह नये तथा पुराने दमे के दौर (आक्रमण) को पांच मिनट में शांत कर देता है। दमा के आक्रमण को रोकने के लिये इससे अच्छा अभी तक कोई इन्जेक्शन नहीं है। पित्त उछलना, न्यूमोनिया, कुकर खांसी, सूखी खांसी, हृदयशूल हृदय को शान्ति देने वाला, श्वास प्रश्वास की गति को ठीक करने वाला इससे उत्तम शायद ही कोई इन्जेक्शन हो ऐसा मेरा विश्वास है। दमा के दौर को तो पांच मिनट में ही जादू की तरह शान्त कर देता है।

(७) शूलास्तक (मार्तण्ड, प्रताप)—इसका प्रयोग तीव्र शिरःशूल, नाड़ी शूल, सभी प्रकार के आमवातिक एवं वायुजनित वेदनाओं को शान्त करने तथा गृध्रसी, हिक्का, स्वप्नदोष, बड़े बच्चों का बिछावन पर सोते समय पेशाब हो जाना, राजयक्ष्मा का रात्रि स्वेद, त्रिच्छूदंज की तीव्र वेदना को शमन करने के लिये, वृक्कशूल, उदरशूल, आन्त्रपुच्छ शोथ का शूल, छाती की तीव्र शूल एवं हृद

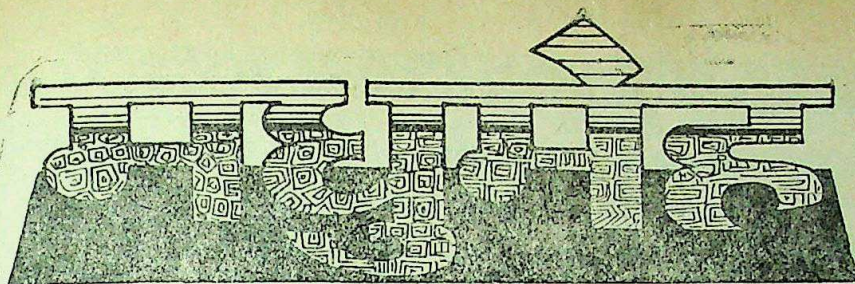
शूल में शीघ्र गुणकारी है। तत्क्षण शूल शान्त के लिये इससे अच्छा कोई इन्जेक्शन नहीं है।

(८) स्मृति, स्मृतिदा (सिद्धि, मार्तण्ड)—निद्रानाश पागलपन, याबापस्मार के दौर के लिये, मानसिक तनाव, प्रसूति जन्य उन्माद में अत्यन्त ही लाभदायक है। बच्चों के आक्षेप रोग के दौर को शीघ्र शांत करता है। हिस्टीरिया में १२ इन्जेक्शन पर्याप्त हैं।

(९) ज्वरोना (सिद्धि)—इसका प्रयोग ज्वर के उच्चतम तापमान को कम करने के लिये किया जाता है। कोई भी ज्वर क्यों न हो यदि तापमान अधिक हो तो इसके इन्जेक्शन से शीघ्र तापमान पर नियन्त्रण होता है और ज्वर कम होने लगता है। इसका प्रभाव मेडुला में स्थित ताप नियन्त्रण केन्द्र पर होता है। इस कारण इसके प्रयोग से पसीना आकर शीघ्र ताप कम होने लगता है। इसके अतिरिक्त तृषा, दाह को मिटाकर हृदय को बल प्रदान करता है।

(१०) खांसीना (सिद्धि)—यह नई एवं पुरानी खांसी, श्वास, कास, सूखी खांसी, गले एवं फेफड़े में कफ जमाव, छाती का दर्द आदि में विशेष उपयोगी है। श्वास मण्डल में जब अन्याय्य तरह के कीटाणु वास करने लगते हैं, फेफड़ा कमजोर होने लगता, खांसी बारम्बार उठती एवं कफ के साथ रक्त कण आने लगते हैं ऐसी अवस्था में तथा मन्द ज्वर, अरुचि में अत्यन्त ही लाभप्रद है। कुकर खांसी में भी इसका विशेष लाभ देखा है। तथा इसके प्रयोग से कफ सरलता से निकलने लगता है।

नोट—इसके अतिरिक्त सैकड़ों प्रकार के और भी इन्जेक्शन बनाये गये हैं जिन चिकित्सकों को आवश्यकता हो वे इन कम्पनियों से सूचीपत्र भंगाकर देखें। क्योंकि सभी प्रकार के इन्जेक्शनों का विस्तृत विवरण देना यहां पर सम्भव नहीं है। 'धन्वन्तरि' के पूर्व प्रकाशित विशेषांक आयुर्वेद सूचीभरणांक को निर्मल आयुर्वेद संस्थान से भंगाकर अध्ययन करें।



बंद श्री मोहर सिंह आर्य, स्थान - मिल्ही, जिला—भिवानी (हरियाणा)

॥—॥

आयुर्वेद वाङ्मय में मधुमेह का वर्णन विंशति प्रकार के प्रमेह रोग में उपलब्ध होता है। विंशति प्रमेहों के चतुर्विध वातिक भेदों में से एक भेद मधुमेह भी है जैसा कि चरक ने कहा है :— 'तद्यथा 'वसामेहश्च, मज्जमेहश्च, हस्तिमेहश्च मधुमेहश्चेति ।' (च० चि०)

मधुमेहे मधुसमं जायते द्विविधा,

क्रुद्धे धातुक्षयाद्वाप्यो दोषावृतपथेऽथवा ।

आवृतोदोषलिगानि सोऽनिभित्तं प्रदर्शयन् ।

क्षणात्क्षीणः क्षणापूर्वोभजते कृच्छसाध्वताय ॥

मधुमेह से पीड़ित रोगी मधु के समान मूत्र त्याग करता है। यह दो प्रकार का होता है, एक धातुक्षयजन्य प्रकुपित वात से और दूसरा पित्त या कफ के आवृत वायु से उत्पन्न होता है। आवृत वायु से उत्पन्न मधुमेह में आवरक दोष एवं वायु दोनों के लक्षण प्रकट होते हैं। इसके अतिरिक्त वातादि दोष के लक्षण अनियमित कभी ग्यून और कभी अधिक दृष्टिगोचर होते हैं। यह कृच्छ्र साध्य होता है।

यह रोग वृद्धों का सहचर क्यों है? इसका समाधान इस रोग के स्वरूप से ही हो जाता है। इस रोग का आरम्भक दोष वात है। वात का प्रकोप धातुक्षय तथा अन्य दोषों के आवरण से होता है। प्रमेह रोग में धातुक्षय होता है और धातुवृद्धि भी मन्द पड़ जाती है। मधुमेह में अग्नि धातु का क्षरण होने से चरक ने मधुमेह को ओजोमेह भी कहा है। मधुमेह की उत्पत्ति में कहा है— 'ओज मधुरस्वभाव का होता है। जब वात अपने रूक्षता तथा कषायपन से प्रकुपित होकर अपने धातुसार को लेकर

मूत्र मार्ग द्वारा बाहर निकलने लगता है, तब मधुमेह की उत्पत्ति होती है।' यह रोग जब सब धातुओं क्षीण होने लगती हैं उस समय वृद्धावस्था में उत्पन्न होता है, आधुनिक चिकित्सक अल्ब्युमिनैरिया (Albuminaria) को ओजोमेह कहते हैं। इस रोग में क्षरण होने वाला ओज मधुर होता है। अतः इस मधुर ओज को ग्लूकोज कहना उचित होगा।

मधुमेह की सम्प्राप्ति—

गुरु स्निग्ध, अम्ल, लवण, नवान्न इन पदार्थों के अधिक सेवन से, नव मद्य के पान से, निद्रा तथा आराम के अधिक सेवन से, परिश्रम नहीं करने से, चिन्ता न करने से, संशोषण नहीं करने वाले व्यक्तियों के शरीर में श्वेत्तम, पित्त, मेद तथा मांस धातुओं की अधिक वृद्धि होने लगती है। इस प्रकार बड़े हुए इन धातुओं से जब वायु आवृतगति हो ओज को लेकर वस्ति में प्राप्त होता है, तब कृच्छ्र मधुमेह उत्पन्न करता है। यह धातुक्षयजन्य मधुमेह की सम्प्राप्ति है। इस रोग में वात, पित्त, कफ के लक्षण बार बार उत्पन्न होते हैं। ये लक्षण कभी-कभी क्षीण होकर पुनः बढ़ते हैं। इस सम्प्राप्ति में आचार्य चरक ने निम्न बातों पर ध्यान आकृष्ट किया है—

१. शरीर में पित्त, कफ मेद एवं मांस की अनुचित वृद्धि।

२. इन अनुचित वृद्ध धातुओं से जलवायु की गति अवरोध होना।

३. रुद्धगति वायु ओज को वस्ति में प्राप्त कराता है। परिणामस्वरूप मधुमेह की उत्पत्ति होती है।

४. मधुमेह में वायु का आरब्धकत्व स्पष्ट हो जाता है ।

मधुमेह के विशिष्ट हेतु—

चरक निदान स्थान अध्याय ४ में निम्न हेतु लिखे हैं—
कषाय, कटु, तिक्त, रूक्ष, लघु, शीत, व्यवाय, वमन, विरेचनास्थापन, शिरोविरेचनाति योग, संधारणनशनाभि-
घातातपोद्वेग, शोक, शोगितातिपेक जागरणविषम शरीर-
न्यासानुषणसेवमानस्य तथाविध शरीरस्यैव क्षिप्र वातः
प्रकोपमापद्यते । स प्रकुपितस्तथाविध शरीरे विसर्पन् यदा
बोजः पुनर्मधुर स्वभावमादाय मूत्रवहानि स्रोतांसि प्रति-
पद्यते ।

अर्थात् कषाय, कटु, तिक्त, रूक्ष, लघु, शीत, व्यवाय
व्यायाम इनके अधिक सेवन से तथा वमन विरेचन, आस्था-
पन, शिरोविरेचन इनके अति योग से, वेगों के संधारण,
अनशन, अमिघात, घातक उद्वेग, शोक, रक्त के अधिक
स्राव होने से, जागरण तथा शरीर की विषम चेष्टाओं से
जब वात प्रकुपित पुरुष का वात शीघ्र प्रकुपित हो जाता
है, तब वह कुपित प्रवात शरीर में फैलता है ।

मधुमेह के पूर्वरूप—

आयुर्वेदीय संहिता ग्रन्थों में मधुमेह का विशिष्ट पूर्व-
रूप का वर्णन नहीं मिलता । प्रमेह मात्र के पूर्वरूपों का वर्णन
प्राप्त होता है । जो पूर्वरूप प्रमेह के कहे हैं, वे ही मधु-
मेह के भी समझने चाहिये । अतएव सब प्रकार के प्रमेह
प्रथम क्रियाकाल में प्रतिकार न करने पर मधुमेह में परि-
वर्तित हो जाते हैं । यथा—

सर्वेव प्रमेहास्तु कालेना प्रतिकारणः

मधुमेहत्वमायान्ति तथाऽऽद्या भवन्ति हि ॥

दांत, तालु, नाक तथा जिह्वा इन अवयवों में मल
जमा होने लगता है । हाथ और पांवों में जलन, शरीर का
अधिक चिकनापन, अधिक प्यास तथा मुख का स्वाद मीठा
होना ये लक्षण दृष्टिगोचर होने लगते हैं (ये लक्षण मेद
एवं कफ दुष्टि के सूचक हैं) ।

सुश्रुत ने गुरुगात्रता, मधुर, शुक्ल मूत्रता, तन्द्रा, अव-
साद, स्वांस में दुर्गन्ध, तालु, मल, जिह्वा, दन्त इन अव-
यवों में अधिक मल का उत्पन्न होना, केशों का जटिली
भाव तथा नखों का अधिक बढ़ना, ये लक्षण भी पूर्वरूप में
कहे हैं ।

चरक ने हाथ पांव में दाह, सुप्तता, मुख, तालु, कण्ठ
का सूखना, आलस, सदा सोते रहने की इच्छा, सम्पूर्ण शरीर
का मलयुक्त होना, शरीर के छिद्रों में उपदेह, अवयवों में
परिदाह एवं सुप्तता, शरीर तथा मूत्र पर पिपीलिका और
पटपट का बैठना, मूत्र का सफेद होना, शरीर में आम गन्ध
और सदैव तन्द्रा तथा निद्रा की उत्पत्ति के लक्षण और
बताये हैं ।

चरक ने प्रमेहों में तीनों दोष प्रकुपित होते हैं—यह
स्पष्ट कर दिया है । त्रिदोष के प्रकोप को स्पष्ट करते हुए
चरक ने कहा है । 'बहु द्रवः श्लेष्मा दोष विशेषः' अत्य-
धिक दुष्ट कफ विशिष्ट हेतु होता है ।

यद्यपि ये पूर्वरूप विशिष्ट प्रमेहों के कहे हैं तथापि
ये सभी लक्षण मधुमेह में विशेष रूप से दिखाई देते हैं ।

मधुमेह का मुख मीठा बना रहता है ।

मधुमेह के लक्षण (सामान्य)—

१. सामान्य लक्षणं तेषां प्रभूताविलमूत्रता ।

(वा. नि. १८)

२. तत्राविलप्रभूत मूत्रलक्षणाः सर्व एव प्रमेहाभवन्ति ।

(सु० नि० ६)

अर्थात्—मात्रा में अधिक तथा गंदलापन यह लक्षण
सभी प्रमेहों का सामान्य लक्षण है ।

प्रभूतमूत्रता—इसको Polyuria कहते हैं । इस
रोग में मूत्र अत्यधिक आता है । चौबीस घण्टों में ४ से
८ लीटर तक रोगी मूत्र त्याग करता है । उदकमेह, इक्षुमेह,
शीतमेह, लालामेह, हस्तिमेह तथा जीर्णवृक्क प्रदाह में भी
बहुमूत्रता एक प्रधान लक्षण है । मूत्रल आहार-विहार तथा
औषधों के सेवन से बहुमूत्रता के साथ अन्य लक्षणों को
देखना आवश्यक है । यथा—मूत्राविल भूरि च भवति'
अर्थात् प्रभूताविल मूत्रता, अत्यधिक बार बार और प्रायः
आविल गदला तथा 'कषायं मधुरं पाण्डु रूक्षं' मूत्र का
त्याग होता है ।

आविल मूत्रता—आविल शब्द का अर्थ गंदला-मंला
भी ठीक है । परन्तु प्रमेहों में गंदलापन क्या है ? प्राकृत
स्वभाविक मूत्र में मधुर, स्निग्ध, मज्जा, वसा आदि की
प्रवृत्ति नहीं होती, परन्तु मधुमेह में प्रवृत्ति होती है । क्यों
'आविलत्वं दोष दूष्य संसर्गात्' दोष दूष्य संसर्ग से मूत्र में
आविलता आ जाती है ।

मूत्र अपनी प्राकृतिक अवस्था में हल्का, तृण सदृश, नीलाभ होता है और इसका आपेक्षिक घनत्व १०१० से १०२० तक होता है। जब इसमें प्राकृतिक पदार्थ आने लगते हैं तो उसका वर्ण विकृत तथा उसका घनत्व भी विकृत हो जाता है जिससे उसमें आविर्भूतता आ जाती है।

मधुमेह के विशिष्ट लक्षण

- १—कषायं मधुरं पाण्डु रूक्षं मेहति यो नरः ।
वात कोषादसाध्यं तं प्रतीयन्मधुमेहिनम् ॥
- २—कषायं मधुरं रूक्षं क्षौद्रमेहं वदात् पुषः ।
(वा० नि० १०)
- ३—क्षौद्र रस वर्ण क्षौद्रमेही । (सु० नि०)

भावार्थ—कषाय तथा मधुर रसयुक्त, वर्ण में पाण्डु (श्वेताभ पीत) तथा स्पर्श में रूक्ष मूत्र का बार बार त्याग करना, मधुमेह या क्षौद्रमेह का लक्षण है।

मधुमेह वातजन्य वह प्रमेह है जिसमें मूत्र में शर्करा आती है। इसमें मूत्र के साथ ओज (अपर ओज) धातु क्षरण होता है, ऐसा इसकी सम्प्राप्ति में कहा गया है। अतः इसको चरक ने ओजोमेह भी कहा है। इसमें निकलने वाला ओज मधुर स्वभाव का होता है। इस मधुर स्वभाव ओज की आधुनिकों का ग्लूकोज ही समझें।

मधुमेही के मूत्र में शर्करा आती है, मूत्र मधुर होता है, मूत्र प्रभूत होता है। केवल इन लक्षणों से मधुमेह सिद्ध नहीं होता, क्योंकि इधुमेह तथा शीतमेह में भी मूत्र मधुर होता है और इन दोनों प्रमेहों के मूत्र में शर्करा पाई जाती है।

मधुमेह निर्णय—मधुमेह में रक्तगत शर्करा पाई जाती है। यह इस रोग का प्रत्यात्म नियत लक्षण है। इसी लक्षण को दृष्टि में रख कर आचार्य सुश्रुत ने 'मक्षिको-पसर्पणम्' अर्थात् शरीर पर मक्खियों का बैठना लिखा है। शरीर पर मक्खियां क्यों बैठती हैं, इसका स्पष्टीकरण वाग्भट्टाचार्य ने 'सर्वेऽपि मधुमेहाख्या माधुर्याच्च तनोरतः' अर्थात् मधुमेह में सम्पूर्ण शरीर मधुर-मीठा हो जाता है। अतः शरीर पर मक्षिकायें बैठती हैं लिखकर किया है। जब रक्त में शर्करा की मात्रा अधिक बढ़ जाती है, तब स्नान कर लेने के पश्चात् भी शरीर पर मक्खियां बैठती हैं। इसका कारण रक्त की अत्यधिक मधुरता है।

मूत्र में १ से १० प्रतिशत तक शर्करा की मात्रा

मिल सकती है। इसीलिए वाग्भट ने 'मधुमेही मधुसमम्' सुश्रुत ने 'क्षौद्ररसवर्ण क्षौद्रमेही' और चरक ने 'कषायं मधुरं पाण्डु रूक्षं मेहति' लिखकर मधुमेह में शर्करा होने के कारण मूत्र की मधुरता का वर्णन किया है। परन्तु मूत्र में माधुर्य होने से ही मधुमेह सिद्ध नहीं होता, क्योंकि इधुमेह में तथा शीतमेह में भी मूत्र मधुर होता है। इन दोनों प्रमेहों के मूत्र में भी शर्करा पाई जाती है। इसलिए रोग निर्णय के लिए मूत्र परीक्षा तथा रक्त परीक्षा द्वारा शर्करा का निर्धारण करना आवश्यक है। जब तक रक्त में शर्करा वृद्धि न मिले मधुमेह नहीं कह सकते। अतः रोग निर्णयार्थ रक्त परीक्षा परमावश्यक है।

प्राचीन परीक्षा विधि—चरक विमान स्थान ५ में लिखा है :—जहां रस का ज्ञान प्रत्यक्षतया कर लेना असम्भव हो, वहां रोगी को प्रश्न करने से और अनुमान द्वारा यथावत् परिज्ञान हो सकता है। अतः मधुमेह रोगी के मधुर रस का जब ज्ञान करना हो तो उसके मुख का माधुर्य रोगी को पूछ करके भी ज्ञान करना चाहिये। किन्तु जब उसके शरीर अर्थात् त्वचा का माधुर्य जानना हो तो दो बातों का ध्यान कर निर्णय करें—इसके लिए दो जीवों का नैसर्गिक स्वभाव सहायक हो सकता है यथा यूका-जू (मधुमेह होने पर रोगी के वालों में यूका जूएं नहीं रहती, चली जाती हैं।) दूसरे वे जिन्हें मधुरस प्रिय है, यथा—मक्षिकाएं (मधुमेह रोगी के शरीर पर मक्खियां अधिक बैठती अथवा घूमती रहती हैं। हमने अनेक रुग्णों के मूत्र की परीक्षा उनको पिलाकर भी की है। उन्होंने स्वमूत्र को मधुर बताया है।

साधारणतः रोगियों में निम्नलिखित लक्षण पाये जाते हैं—

स चापि भसनात् स्थान स्थानादासनमिच्छति ।
आसनाद् वृणुते शय्यां शयनात् स्वप्नमिच्छति ॥ —सु०
मधुमेह रोगी चलने की अपेक्षा खड़ा रहना, खड़े रहने की अपेक्षा बैठना, बैठने की अपेक्षा विस्तर पर लेटना अथवा शय्या पर सोना अधिक पसन्द करता है।

रोगी बलहीन हो जाता है। कर्तव्य कर्मों में अनिच्छा रहती है। भार न्यून हो जाता है। अत्यधिक प्यास लगती है। भूख भोजनेच्छा तथा अस्वाभाविक धुंधा वृद्धि होती है मूत्र धारण की अक्षमता से बार-बार मूत्र त्याग के कारण रात्रि में निद्रा भंग हो जाती है। रति शक्ति का ह्रास हो

जाता है। कभी-कभी नपुंसकता आ जाती है। आरम्भ में लक्षण इतने स्वल्प होते हैं कि इनके ऊपर ध्यान ही नहीं देता है।

तीस मधुमेह आक्रान्ताओं की आकृति साधारणतः दीप्तिहीन, पाण्डुवर्ण, गात्र चर्मा रूक्ष एवं शुष्क, मुखविकार आर्द्रता विहीन, जिह्वा शुष्क तथा अस्वामाविक लाल एवं उज्ज्वल, लाला स्राव का ह्रास, धमनियों में काठिन्य, रक्त-चाप वृद्धि, हृदय में विकृति, पीडिका आदि होते हैं।

मधुमेह चिकित्सा सूत्र—

१. संक्षेपतः क्रियायोगो निदान परिवर्जनम् । —सु.

२. ततोविघातः प्रकृतेः निदानस्य च वर्जनम् । च.

३. पथ्ये सति यदातस्य किमौषण निषेवणैः ।

निदान परिवर्जन करें। पथ्य से रहने पर औषधि की आवश्यकता नहीं।

४. साध्य प्रमेहों का संशोधन तथा उपशमनों के द्वारा यथायोग्य उपचार करें।

शास्त्रों का बोधन करने से विदित होता है कि मधुमेह के हेतु, सम्प्राप्ति तथा लक्षण आदि प्रत्येक दो विभागों से विभाजित हैं। अतः चिकित्सासूत्र भी दो भागों में विभाजित हैं। यथा—

५. स्थूलः प्रमेही बलवानिहेकः कृशस्तथैकः परिवुर्बलश्च ।
संवृहणं तत्र कृशस्य कार्यं संशोधनं दोष बलाधिकस्या॥—च.

प्रमेह से पीड़ित रोगी (१) स्थूल एवं बलवान् होता है (२) कृश एवं दुर्बल होता है। कृश के लिए वृंहण चिकित्सा करनी चाहिए और जिस व्यक्ति में दोषों की अधिकता तथा बल की अधिकता हो उसमें संशोधन का प्रयोग करें।

जिस रोगी में कफ की प्रधानता विशेष रूप से हो, वह स्थूल एवं बलवान् प्रमेही होता है। वात प्रधान एवं सहज रोगी कृश दुर्बल होता है। व्यवसाय में चार प्रकार के रोगी मिलते हैं यथा—(१) स्थूल एवं बलवान्, (२) स्थूल किन्तु दुर्बल, (३) कृश एवं दुर्बल (४) कृश किन्तु बलवान्। इनमें स्थूल बलवान् को वमन विरेचन से शुद्ध करके शमन चिकित्सा करें। स्थूल दुर्बल तथा कृश बलवान् को आवश्यक शोधन करके संतर्पण दें। कृश दुर्बल को वृंहण उपचार दें।

सुश्रुत ने भी प्रमेही रोगी दो प्रकार के बतलाये हैं। यथा—“द्वौ प्रमेही भवतः सहजोऽयश्च निमित्तश्च” प्रमेह

दो प्रकार का होता है। (१) सहज तथा (२) अपथ्य निमित्तज। सुश्रुत चिकित्सा स्थान १२ में कहा है—तत्र कृशमन्नपान संस्कृताभिः क्रियामिच्छिकित्सेत स्थूलपतर्पण-युक्ताभिः। इसमें कृश (सहज) प्रमेही की चिकित्सा औषध सिद्ध अन्नपान तथा संतर्पण औषधों एवं क्रियाओं द्वारा होती है और स्थूल (अपथ्य निमित्तज) प्रमेही की चिकित्सा संशोधन आदि के उपचार से होती है।

सुश्रुतानुसार चिकित्सा विधान—

निर्धन व्यक्ति वैद्य के आदेशानुसार आलस्य रहित हो, बिना जूता पहने और बिना छाता लगाये नंगे सिर और नंगे पैर ही भिक्षावृत्ति धारण करने हुए एक ग्राम (एक स्थान) में एक रात ठहरकर मुनि के समान इन्द्रियों को वश में करके एक सौ योजन या इससे भी अधिक यात्रा करें। अथवा जो ऐश्वर्यशाली हों, वह श्यामाक-सांवल और नीवर खाकर आंवल, कैथ, तिष्ठुक, अश्मन्तक (सिर-हरा) का फलाहार करते हुए निरन्तर भ्रमण करता रहे। अथवा मूत्र गोबर को भक्षण करते हुये निरन्तर गायों के पीछे चले, अथवा यदि वह ब्राह्मण हो तो शिलोच्छ वृत्ति धारण करके रहे, या हल चलाये या कूप को खोदे तो एक वर्ष के भीतर वह प्रमेह रोग से मुक्त हो। कृश व्यक्ति की सदैव रक्षा करें।

अनुभव—हमने जनेक रुग्णों को इसी सूत्र के आदेशानुसार रखकर विधानपूर्वक शुद्ध शिलाजितु खिलाते हुए ठीक किया है। अनेक ऐसे रोगी भी मिले हैं जो घर बार त्याग सकते थे, उनको गोपाल बनाकर रखा, जंगल में गौ चराते हुए भ्रमण करते रहे। सुश्रुत के इस सूत्र में “तन्मूत्रशकृत् भक्षः” कहा है, जिसका अर्थ होता है—गाय के मूत्र तथा गोबर का भक्षण करना। यह धनी तथा निर्धन दोनों के लिए ही कठिन समस्या है, फिर इस युग में। हमने इस समस्या को इस प्रकार हल किया कि गौ को यव खिलावे और रोगी को आदेश कर दें कि यह गाय जिसको यव जी खिलाये गये हैं—गोबर करे तो इस गोबर को एकत्र करते रहें और गोमूत्र से उस गोबर को धोकर गोबर में आये हुए यवों को निकाल लें। रोगी को समझा दें जिस गौ को यव खिलाये गए हैं, उसे जंगल में बैठने न दें जुगाली न करने दें अपितु भ्रमण कराते रहें, जंगल में घुमा-घुमाकर चलाते रहें। यदि गाय बैठ जायेगी तो अवश्य जुगाली करेगी, जुगाली करने से गोबर में यव

बहुत थोड़े प्राप्त होंगे। यदि इससे काम न चले तो सायंकाल गाय के गोबर में यव मिला दें, प्रातःकाल गोबर को धोकर साफ कर लें। इनको धूप में सुखा लें और पीस लें। प्रतिदिन इतने ही जौ गोबर में मिलावें कि एक ही दिन में खाये जा सकें। जो घर को नहीं छोड़ सकते वे हल चलायें, कुआं खोदें। तात्पर्य यह है कि परिश्रम करें।

हमने इस रोग में यव श्रेष्ठ पाया है। अन्न द्रव्यों में मधुमेह के लिए श्रेष्ठ माना है। जैसा कि चरक ने कहा है—'यवप्रधानस्तु भवेत् प्रमेही।'

मधुमेह के उपचार में (१) तिक्त रस प्रधान औषध द्रव्य (२) लघु व्यायाम और (३) अन्नपान में यव। ये तीन सर्वोपरि यशस्वी सिद्धान्त सिद्ध होते हैं।

१. वसन्त कुसुमाकर रस (सि० यो० सं०) —

प्रवाल भस्म या पिण्डी, रससिन्दूर या चन्द्रोदय, अन्नक भस्म शतपुटी, मुक्ता भस्म या पिण्डी प्रत्येक ४-४ भाग, रजत भस्म २ भाग, सुवर्ण भस्म २ भाग, लौह भस्म शतपुटी, नाग भस्म, बंग भस्म प्रत्येक ६-६ भाग, कस्तूरी उत्तम १ भाग, केशर कश्मीरी १ भाग।

इन सबको पत्थर के खरल में डालकर सूक्ष्म चूर्ण बना लें। फिर निम्न द्रव्यों से प्रत्येक की ७७ भावना दें—

वासपात्र स्वरस, हरिद्रा स्वरस, कमल पुष्प स्वरस, मालती पुष्प रस, शतावरी स्वरस, कदली कन्द स्वरस, चन्दन कषाय। करेला पत्र स्वरस, विशेष वचन—कस्तूरी तथा केशर को अन्तिम भावना के साथ मिलावें।

मात्रा—१२५ मि. ग्राम। प्रातः सायंकाल। अनुपान—विल्व पत्र स्वरस १० मि. लि. + करेला स्वरस १० मि. लि.

उपयोग—यह उष्ण रसायन, बाजीकर, स्मरणशक्ति-वर्धक, हृदय तथा मस्तिष्क को बल देने वाला है।

विशेष वचन—जहां ताजा हरित आंवले मिलते हो, तो उनके रस तथा हल्दी के रस में दें।

इस योग को जो स्वयं न बना सकें वे इसे 'धन्वन्तरि' के प्रकाशक 'निर्मल आयुर्वेद संस्थान' से मंगा सकते हैं।

२. शिलाजित्वादि वटी (सि० यो० सं०) —

त्रिवङ्ग भस्म ३० ग्राम, छाया शुष्क विल्व पत्र १०० ग्राम, शिलाजितु १५० ग्राम, छाया शुष्क गुडमार १०० ग्राम, चारों द्रव्यों को पृथक्-पृथक् सूक्ष्म पीस लें। फिर शिला-जनु में त्रिवङ्ग भस्म मिलावें। पीछे सबको मिलाकर

घोट लें। तत्पश्चात् सुवर्ण भस्म १० ग्राम मिलाकर निम्ब पत्र स्वरस में घोट ३७५ मि. ग्राम की गोली बना लें।

मात्रा—१-१ गोली दिन में चार बार। अनुपान—कारवेल्ल स्वरस, जामुन फल स्वरस अथवा आंवला एवं हल्दी स्वरस के साथ दें।

३. त्रिवङ्ग भस्म —

मात्रा—१२५ मि. ग्राम १ दिन में तीन बार। अनुपान—विल्वपत्र स्वरस, पलाशपुष्प स्वरस, निम्बपत्र स्वरस, करेला स्वरस। मधुमेह की परम अनुभूत औषधि है।

अनुभव—हमने इन तीनों ही योगों को एक साथ सेवन कराया है। प्रातःकाल वसन्तकुसुमाकर रस करेले के स्वरस के साथ दिया। मधुगान्ध शिलाजित्वादि वटी जामुनफल रस के साथ दी और सायंकाल त्रिवङ्ग भस्म निम्बपत्र स्वरस के साथ दी।

त्रिवङ्ग रसायन—त्रिवङ्ग भस्म यथावश्यक लेकर निम्न द्रव्यों की भावना दें—निम्बपत्र स्वरस, गुडमार पत्र स्वरस या क्वाथ, करेलापत्र स्वरस, जामुन स्वरस, सप्तरंगी क्वाथ, मामज्जक (कड़वी नाय) क्वाथ, भूम्यामसेकी स्वरस, विषतिन्दुक क्वाथ की २१-२१ भावना देकर रख लें। मात्रा—१२५ से २५० मि. ग्राम तक। दिन में ४ बार। विजयसार क्वाथ से।

गुण—हमने इस रसायन को मधुमेह के लिए गुण-प्रद पाया है। यह मधुमेह नाशक है। वीर्य को गाढ़ा करता है। प्रमेह मात्र की महोषधि है। स्वप्नबोध की उत्तम औषधि है। वीर्यवर्धक है। श्वेतप्रदर नाशक है। यदि इसके साथ सिद्ध मकरध्वज समान भाग मिलाया जाय तो यह शरीर को सुवर्ण की भांति चमका देता है।

वसन्त कुसुमाकर रस

पूर्ण शास्त्रोक्त विधि से निर्मित वसन्तकुसुमाकर रस मधुमेह एवं सभी प्रमेहों, नपुंसकता शीघ्रपतन आदि विकारों की अनुपम औषधि है। मूल्य—१० ग्राम १४०, १-१ रत्ती की एक माह को ६० गोली १०५।

—निर्माता—

निर्मल आयुर्वेद संस्थान अलीगढ़

श्री ज्वाला आयुर्वेद भवन के

विशुद्ध आयुर्वेदिक कैपसूल

हम वर्ष १९७४ से विशुद्ध आयुर्वेदिक कैपसूल निर्माण कर रहे हैं, हमारे कैपसूल चिकित्सक समाज में अत्यधिक पसन्द किये गये हैं। मांग बिना धुआंधार प्रचार के ही बराबर बढ़ रही है। हमारे कैपसूलों की मांग से प्रभावित होकर अन्य अनेक फार्मसियों ने कैपसूल बनाने प्रारम्भ कर दिये हैं। हमारी कोई सह-योगी संस्था नहीं है अस्तु चिन्तेन है कि प्रभावी कैपसूल प्राप्त करने के लिए आर्डर भेजते समय पता सावधानी से श्री ज्वाला आयुर्वेद भवन, मामू भांजा रोड, अलीगढ़ ही लिखें।

आवश्यक नियम

क्र.सं.	नाम दवा	५०० कैप०	१०० कैप०	५० कैप०
१	अतिसारान्तक	१०६.००	२३.५०	१२.५०
२	अर्शान्तक	८४.००	१८.५०	१०.००
३	कैल्सी	७४.००	१६.५०	८.००
४	कैल्सी लोह	८६.००	१६.५०	१०.५०
५	कृमिघातिनी	११४.००	२४.५०	१३.००
६	क्लीवारि	१९४.००	४०.५०	२१.००
७	गोनारि	१३४.००	२८.५०	१५.००
८	गैसोना	११४.००	२४.५०	१३.००
९	चेचकावरोध	८४.००	१८.५०	१०.००
१०	ज्वरान्तक	१२६.००	२७.५०	१४.५०
११	पाण्डुनौल	११४.००	२४.५०	१३.००
१२	विबधहारी	१०६.००	२३.५०	१२.५०
१३	वातरोगहर	२६५.००	६१.००	३२.००
१४	मलेरियाहर	१४४.००	३०.५०	१६.००
१५	मदनशक्ति	१७६.५०	३७.००	१६.२५
१६	मधुना (मधुमेह नाशक)	२४६.००	५१.५०	२६.५०
१७	मेघाशक्ति	१२६.००	२७.५०	१४.५०
१८	रक्तशोधन	१२६.००	२७.५०	१४.५०
१९	रजावरोधान्तक	६४.००	२०.५०	११.००
२०	रक्तचापहारी	१०६.००	२३.५०	१२.५०
२१	रुदन्ती कैपसूल नं. १	२७०.००	५६.००	२६.००
२२	" " नं. २	१२६.००	२७.५०	१४.५०
२३	ल्यूकोना	१७६.५०	३७.००	१६.२५
२४	श्वासहारी	८४.००	१८.५०	१०.००
२५	शोषान्तक	११४.००	२४.५०	१३.००
२६	शूलारि	६४.००	२०.५०	११.००
२७	स्वप्नप्रमेहान्तक	२४६.००	५१.५०	२६.५०
२८	हृदरोगारि	१३४.००	२८.५०	१५.००
२९	हिस्टेरियाहर	१२६.००	२७.५०	१४.५०
३०	त्रिशक्ति	१०६.००	२३.५०	१२.५०
३१	पुंसवनो कैप.	४० + ७	१ सैट	२७.५०

१. ५०, १०० तथा ५०० कैपसूल पैकिंग के भाव दिये हैं। अधिक मंगाने पर ५०० पैकिंग के भाव से ही मूल्य लिया जायगा।
२. २५ कैपसूल का मूल्य-५० कैप. के भाव आधा करके १.०० जोड़ देने पर समझे। २५ कैपसूल से कम भेज नहीं सकेंगे।
३. कैपसूलों को पोस्ट पार्सल से ही मंगाना सुविधाजनक है। बी. पी. से मंगावें। अधिक मूल्य के कैपसूलों की पार्सल (यदि आपके नजदीक में कोई सरकारी बैंक है तो) बैंक के द्वारा भी भेजी जा सकेगी।
४. कमीशनादि कम करके २५०) से अधिक मूल्य के कैपसूल मंगाने पर पोस्ट व्यय फ्री १५०.०० से अधिक के मंगावेंगे तो आधा पोस्ट व्यय आपको देना होगा इससे कम मूल्य के मंगाने पर पूरा खर्चा आपको देना होगा।
५. बैंक का खर्चा हर हालत में ग्राहक को देना होगा।
६. एजेंट बनने के नियम पत्र डालकर मंगालें।
७. पत्र व्यवहार या आर्डर ज्वाला आयु. भवन अलीगढ़ के पते से करें।

यज्ञोपवीत

लेखक डा० प्रितपाल सिंह बी० आई० एम० एस०, आयुर्वेदाचार्य धन्वन्तरि
एच ३२ कालका जी, नई दिल्ली।

—:११:—

आयुर्वेद में कवित ४४ प्रकार के क्षुद्र रोगों के अन्तर्गत एक रोग विशेष का वर्णन है जिसको नाम दिया है 'कक्षा'। इसी रोग को अन्य नामों से भी जाना जाता है जैसे 'जनेऊ', 'यज्ञोपवीत' आदि। एलोपैथी में इस रोग की संज्ञा है हर्पिस जोस्टर (Herpes zoster) अथवा शिगल्स (Shingles)।

जनेऊ जिस दिशा में पहना जाता है उसी मार्ग में दाहिनी या बाईं ओर फुंसियां चुच्चों के रूप में निकलती हैं। फुंसियों में तीव्र शूल व दाह होता है। यह अत्यन्त कष्टदायक रोग है। इसे सहन करना अत्यन्त कठिन है। एलोपैथी में इस रोग का कारण आजकल विषाणुजन्य कीट (Virus) को माना जाता है। कभी-कभी यह रोग 'टैबिस डार्सेलिस', 'संख्या विष' और मसुरिका आदि रोगों के उपद्रव के रूप में भी हुआ करता है।

सर्वप्रथम रोगी में तीव्र पीड़ा व ज्वर के लक्षण मिलते हैं। दूसरे से छठे दिन के अन्दर त्वचा पर लाल-लाल पिड़काये दिखाई देती हैं और आगे चलकर द्रवयुक्त फफोलों के समान हो जाती हैं। लगभग पांचवें से दसवें दिन के अन्दर ये फफोले फूट जाते हैं परिणामस्वरूप द्रव्य स्रवित होकर वहां खड्डा सा बाकी रह जाता है। इन स्थानों पर अत्यन्त शूल, दाह एवं कण्डु होती है जिससे रोगी बेचैन हो उठता है। ये लक्षण लगभग दो-तीन सप्ताह तक रहते हैं। अन्त में इन स्थानों पर सूखकर खुरण्ड बन जाते हैं और उतर जाते हैं।

इस रोग की यदि मली प्रकार से चिकित्सा न हो तो परिणामस्वरूप स्थानीय बात नाड़ीगत वेदना, स्थानीय संज्ञानाश तथा कार्य अक्षमता प्रकट होते हैं। कभी-कभी

फुफुस आवरण शोथ, सन्धि शोथ और नेत्र विकार आदि उपद्रव खड़े हो जाते हैं।

चिकित्सा—

जहां तक चिकित्सा का प्रश्न है आजकल एलोपैथी में इस रोग की कोई विशेष चिकित्सा नहीं है। केवल मात्र रोग के लक्षणों का दमन करना अर्थात् लाक्षणिक चिकित्सा करना और बैक्टीरिया (Bacteria) से होने वाले संक्रमण से बचाव करना ही चिकित्सा रूप में प्रयुक्त है। क्योंकि एलोपैथी में विषाणुजन्य कीट (Virus) को नष्ट करने वाली औषधियां लगभग न के समान हैं जबकि आयुर्वेद में रोगनाशक अनेक सफल औषधियां हैं। इस दृष्टि से प्रथम एलोपैथिक लाक्षणिक तथा बैक्टीरिया नाशक चिकित्सा का और पश्चात आयुर्वेदिक सफल सिद्ध चिकित्सा का वर्णन किया जायगा।

एलोपैथिक चिकित्सा—

१. प्रारम्भ में टेट्रासाइक्लिन ट्राइड्रोक्लोराईड (Tetracycline Hcl.) अथवा टेरासाईसन (Teramycin) का २५० मि.ग्रा. का १-१ कैपसुल प्रति ६ घण्टा के पश्चात देना चाहिए। यह बैक्टीरिया नाशक है।

२. विटामिन सी (Vitamin C) की ५०० मि.ग्रा. की गोली भोजनोपरान्त दिन में दो बार देनी चाहिए। इससे सेवन से शरीर में रोग निरोधक शक्ति बढ़ती है।

३. ज्वर और वेदना को कम करने के लिये एमिडो-पायरीन (Aminopyrin) की गोली दी जा सकती है। यदि ज्वर कम व वेदना अधिक हो तो केवल नाबलजीन (Novalgin) की गोली आवश्यकतानुसार दिन में एक से चार बार तक दी जा सकती है। यदि असह्य वेदना हो

तो नावलजीन अथवा एसजीपायरीन (Esgipyrin) का सूचीवेष भी किया जा सकता है।

४. स्थानिक उपचार के रूप में वेदनास्थल पर जाई-लोकेन आइन्टमेंट ५% (xylocaine Ointment 5%) का प्रयोग करें। इसके लगाने ही वेदना शान्त हो जाती है और काफी देर तक शान्त रहती है। इसका वेदना-शामक प्रभाव दूर होने पर वेदना पुनः प्रारम्भ हो जाती है।

इस प्रकार से एलोपैथी में लाक्षणिक चिकित्सा की जाती है। एलोपैथी में यह भी धारणा है कि समय पाकर रोगी के शरीर में प्रकृति की ओर से रोग निरोधक शक्ति (Self immunity) उत्पन्न होकर रोग हट जाता है। एलोपैथी में इसका कोई इलाज नहीं है।

आयुर्वेदिक चिकित्सा—

१. रोगी को खुले हवादार और प्रकाशमय कक्ष में नयन करना चाहिए। वस्त्रों तथा वर्तनों को मली प्रकार से (साबुन, सोड़ा, राख, डिटर्जेंट आदि के तथा गरम पानी के प्रयोग से) साफ करना चाहिए। पश्चात् उनको बाल-छड़, बच व निम्बपत्र आदि से धूपन करना चाहिए।

२. आहार में मूंग की दाल, दलिया, खिचड़ी व कस्टर्ड आदि देना लाभकारी है। उबालकर ठण्डा किया हुआ जल (३-४ किलोग्राम पानी में ३-४ लॉग डालकर और अश्वत्थत्वक् एक तोला डालकर उबालकर ठण्डा किया हुआ जल) पीने को दें। इससे तृषा तथा स्थानिक दाह शान्त होते हैं।

३. नींद न आने पर और बेचैनी की अवस्था में अश्वत्थत्वक् (पीपल के वृक्ष की छाल) के चूर्ण को पानी के साथ मिलाकर माथे पर लेप लगाना चाहिए।

४. अश्वत्थत्वक् चूर्ण २ माशा, रस मारिणक्य आधा रत्ती, रजतपत्र (चांदी के वर्क) १ से २ रत्ती, गुडूची सत्व १ माशा—यह एक मात्रा है। सभी द्रव्यों को खरल में मली भांति मिलाकर दिन में १-१ मात्रा ३ से ४ बार आवश्यकतानुसार दें। मधु में चटाकर ऊपर से मिश्री मिला कोष्ण दुध पिलावें।

यदि ज्वर अधिक हो तो दिन में २ बार १-२ रत्ती मात्रा में काले रङ्ग का झण्डु फार्मसी का बनाया हुआ

मृत्यञ्जय रस को साधारण जल के साथ दें। अथवा उत्तम प्रकार से निमित्त संजीवनी वटी को एक रत्ती मात्रा में मधु मिलाकर दिन में दो बार तक दें।

५. निम्बपत्र क्वाथ अथवा अश्वत्थत्वक् क्वाथ को स्थानिक उपचार के रूप में काम लाना चाहिए। इनमें से किसी एक के क्वाथ में कोई स्वच्छ व नरम कपड़ा भिगोकर थोड़ा निचोड़कर उसे दोनों पर केवल मात्र बार-बार स्पर्श करना चाहिये जिससे कि दाने साफ, स्वच्छ तो हो जावें परन्तु छिलने नहीं पावें। यह क्रिया प्रातः व सायं दिन में दो बार करनी चाहिये।

६. पञ्चमुखी रुद्राक्ष (ये सरल सुलभ हैं) को रोगी के कण्ठ में (कोई धागा डालकर) धारण करवाना चाहिये। यह इस रोग की विचित्र औषधि है।

यह अनेक बार की अनुभूत चिकित्सा है। इसके प्रयोग से रोगी के दाने पहले ही दिन से कुछ कालापन लेकर सूखकर बैठने लगते हैं। विशेष रूप से वेदना बहुत कम हो जाती है। दो-तीन दिन के पश्चात् विल्कुल सुख जाते हैं। रोगी निरोग होने लगता है।

रोगी के स्वस्थ हो जाने पर बाद में उसे कम से कम एक महीना तक 'मधुरान्तक वटी' को एक रत्ती मात्रा में प्रातः व सायं मधु में मिलाकर सेवन कराना चाहिये। इसे वटी के प्रयोग से रोग के बाद में शरीर में बचे हुए रोग का विषाक्त प्रभाव समूल नष्ट हो जाता है।

यह यशदायी व अनुभूत चिकित्सा है। एलोपैथी में चिकित्सा करवाने के पश्चात् उपद्रव रूप में स्थानिक वात नाड़ीगत वेदना व स्थानिक संज्ञानाश लेकर कई रोगी चिकित्सार्थ मेरे पास आये जिनके दाने तो (खुरण्ड उतरने के बाद) साफ हो चुके थे।

इन उपद्रव युक्त परेशान रोगियों को भी अवस्थानुसार उपरोक्त आयुर्वेदिक चिकित्सा से लाभ हुआ। ऐसे निराश व मायूस रोगियों की रोग स्थिति अनुसार स्थानिक उपचार करना चाहिए। कई बार ऐसे रोगियों में स्थानिक वेदना के साथ-साथ शोथ भी रहता है ऐसी स्थिति में दशाङ्ग लेप में चतुर्थांश अश्वत्थत्वक् चूर्ण को मिलाकर और गोघृत (दशमांश) मिलाकर साधारण जल की सहायता से उबालकर लेप तैयार कर लगवें।

महाराष्ट्र राज्य द्वारा प्रमाणित—

—गंगा आयुर्वेद निकेतन—

शुद्ध शिलाजीत, रस, रसायन, भस्म, गुग्गुलु, बटो टेबलेट तथा
बहुमूल्य योगों के निर्माता एवं होलसोल रिटेल विक्रेता

आज ही सूचीपत्र मंगाये

फोन नं २८८ (VIR)

चन्दनसार रोड, विरार (बम्बई)

नोट—बम्बई में होम डिलीवरी की सुविधा है।

सफल ऐलोपैथिक डाक्टर बनें !!

ऐलोपैथिक चिकित्सा पद्धति सारे संसार में उन्नति कर चुकी है। इस कारण लोग ऐलोपैथिक चिकित्सा में अधिक विश्वास करते हैं। वह चाहते हैं कि उन्हें मिनटों में रोग से छुटकारा मिल जाए। अगर आप सफल ऐलोपैथिक डाक्टर बनकर यश तथा धन कमाना चाहते हैं तो आप जुलाई १९८१ में प्रकाशित “ऐलोपैथिक मैडीकल प्रेक्टिशनर” लेखक डाक्टर महेश्वर प्रसाद उमाशंकर पंचम संस्करण मंगवाकर अवश्य पढ़ें।

इस पुस्तक में ऐलोपैथिक चिकित्सा के कठिन शब्दों के अर्थ, नापतोल, पैमाने, तापमान, संयोग विरुद्ध दवाओं को मिलाकर प्रयोग करने का निषेध, औषधियों की मात्रा, बच्चों को औषधि देने पर बहुमूल्य जानकारी, औषधि निर्माता कंपनियों के पुरे पते और ४५० के लगभग रोगों के कारण, लक्षण तथा उनकी ऐलोपैथिक के ६००० इन्जेक्शनों, टेबलेटों, फिक्श्चरों, कम्बीनेशन, थेरापी, मरहमों, लोशनों तथा कैप्सुलों से चिकित्सा विस्तारपूर्वक लिखी गयी है। इसके अतिरिक्त, गर्भ परीक्षा, गर्भ गिराना, परिवार नियोजन, एलर्जी से पैदा विकार, स्नायु दुर्बलता, विटामिनों की कमी से होने वाले रोग, एलर्जी, विकार व कष्ट तथा विषों और विषले जीवजन्तुओं के काटने की चिकित्सा पर विस्तारपूर्वक जानकारी दी गयी है।

मूल्य—२०.०० (बीस रुपये) केवल, डाक-खर्च ४.०० अलग।

नोट—आप इस पुस्तक को मंगवाकर आरम्भ से अन्त तक एक मास तक पढ़ें। यदि पसन्द आ जाए तो रख लें वरना वापिस भेजकर मूल्य वापिस मंगवा लें।

—मैसर्स मैडीकल हाउस—

३६५६, कुतुबरोड, दिल्ली-११०००६

दीपावली के पावन पर्व पर
श्री महालक्ष्मी जी एवं श्री गणेश जी का
विशुद्ध चाँदी का सिक्का

उपहार में प्राप्त करें । नियम तुरन्त मंगावें ।

श्री ज्वाला आयुर्वेद भवन, अलीगढ़
द्वारा निर्मित

आयुर्वेदिक कैपसूल

एवम्

औषधियां

जो

- ★ हानि रहित
- ★ आशु गुणकारी
- ★ तत्काल फलदर्शी
- ★ विशुद्ध आयुर्वेदिक
- ★ कुशल चिकित्सकों द्वारा

आधुनिक निर्माणशाला में निर्मित

इनका

अपनी चिकित्सा में उपयोग कर

शत-प्रतिशत सफलता प्राप्त कर यश एवं धन को प्राप्त करें ।

मूल्य सूची एवं विवरण पत्रिका के लिये आज ही लिखें ।

चिकित्सक, चिकित्सक एजेंसी ले कर लाभ उठावें ।

श्री ज्वाला आयुर्वेद भवन

मामू भांजा रोड, अलीगढ़

आमवात

श्री शिवकुमार वैद्य शास्त्री आयुर्वेद बृहस्पति, रावत पाड़ा, आगरा ।

खाया हुआ आहार सर्वप्रथम रस के रूप में परिणत होता है । उसके पश्चात् रक्त आदि धातुएँ क्रम से बनती चली जाती हैं, किन्तु जब आहार रस के रूप में परिणत होकर अग्नि की मन्दता के कारण रक्त में परिणत न होकर रस रूप में ही रहा जाता है तब उस शेष रहे कच्चे रस को ही आम सम्बोधन किया जाता है । यह कच्चा रस आमाशय में संचित होता रहता है । साथ में शरीर में विचरण करने वाली तथा अपनी संचालन शक्ति के द्वारा शरीरगत दोष धातु और सर्व इन्द्रियों को गति देने वाली वायु अपक्व रस के साथ मिलकर दुषित हो अपना संचालन कार्य भलीभाँति न कर शरीर की सन्धियों (जोड़ों) में शोथ पीड़ा आदि उत्पन्न करके शरीर को जकड़ देते हैं । तब इन दोनों के मिल जाने को अर्थात् आम एवं दुषित वायु से मिलकर जो रोग उत्पन्न हो जाता है उसे ही आमवात रोग कहा जाता है । इस रोग के द्वारा शरीर की सन्धियों एवं सर्व शरीर में जकड़ने एवं तोड़ने की सी पीड़ा उत्पन्न हो जाती है, तब इसे आमवात रोग कहा जा सकता है । जब इस रोग के साथ ज्वर आदि भी मिल जाते हैं, तब आमवात रोग के पुरे लक्षण उत्पन्न हो जाते हैं । आमवात रोग की उत्पत्ति के कारण तथा लक्षण स्पष्ट रूप से यहाँ लिखे जाते हैं—

दूध, मछली आदि संयोग विरुद्ध भोजन करने, व्यायाम आदि के द्वारा किसी प्रकार का परिश्रम न करने से अग्निमन्द बने रहने से, भोजन में चिकने एवं गुरुपाकी आहारों का अधिक दिन तक सेवन करते रहने से, खाये हुए पदार्थों का कच्चा रस आमाशय में संचित होते रहने से, गीले, भीगे एवं सीलन भरे गृह में निवास करने से, गरमी एवं धूप से तपे शरीर पर तत्काल शीतल जल से स्नान कर डालने से, गरमी से तपे शरीर में एकदम शीतल जल पीने से, रात्रि को शीतल एवं वर्षा की खुली वायु



में बिना वस्त्र नग्न शरीर शयन करने आदि उपर्युक्त सर्व कारणों से कुपित एवं दुषित वायु के द्वारा कफ एवं पित्त भी कुपित हो जाते हैं ।

तब यह कुपित हुए आमवात दोष रस बढ़ाने वाले स्रोतों को अवरुद्ध करके हाथ, पैर, शिर, टखने, रिक्त स्थान जानु और घुटनों की सन्धियों में पीड़ायुक्त शोथ ज्वर के साथ उत्पन्न कर देते हैं । यही लक्षण आमवात रोग के मुख्य रूप से होते हैं । शास्त्रों में इस प्रकार से वर्णन किया गया है—

युगपत्कुपितावाम बातौ स्वीय प्रकोपनः ।

आमवातं जनयतः संशोथं सन्धिं रुग्रहम् ॥

सर्वाङ्गकाङ्क्षं सन्धिस्थं शोथातिगृहगौरवम् ।

ज्वरा पाकाग्नि मोघं च तृष्णा चामानिकृतिः ॥

आमवात रोग के उपद्रव—

मन्था (गरदन करने की नर्त) कमर पीठ, हाथ, कंधे, टखने और उनकी सन्धियों में शोथ उत्पन्न होकर बिच्छू के डक मारने की जैसी पीड़ा उत्पन्न हो जाती है । दुषित

आम, वायु के साथ मिलकर शरीर के जिस भाग में जाता है, वहां ही बिच्छू काटने जैसी घोर वेदना पैदा कर देता है। इस रोग की उत्पत्ति होने पर जठराग्नि अधिक मन्द होकर मुख से सार अधिक आती रहती है, नाक से पानी गिरता है, अरुचि, शरीर में भारीपन मूत्र संख्या में अधिक होने लगते हैं, नींद नहीं आती है, प्यास अधिक लगती है, वमन होती है, बेहोशी होती है, मलावरोध होता है, आंतों में गड़गड़ाहट, अफरा आदि कष्ट होते हैं। जिस आमवात में पेशी की पीड़ा अधिक हो उसे वात प्रधान समझना चाहिए जिसके शरीर में दाह लालीपन हो उसे पित्त प्रधान आमवात तथा जिसके शरीर में गीले कपड़े से लिपटा हुआ सा और शरीर में सन्नस-नाहट अधिक हो उसे कफ प्रधान समझना चाहिए। वो और तीन दोषों के मिले लक्षण होने को दो दोषों वाला अथवा तीन दोषों वाला आमवात मानना चाहिए।

आमवात चिकित्सा से पूर्व की आवश्यक एवं स्मरणीय बातें—
लंघन, स्वेदन, विरेचन, तिक्त, अग्निदीपक और तीक्ष्ण पदार्थों द्वारा चिकित्सा करना आवश्यक होता है। स्वेदन रूक्ष ही करना चाहिए। स्नान, दूध, दही, चावल, अरहर की दाल, कढ़ी, तेल, गुड़ खटाई इत्यादि का सेवन उपर्युक्त रोग के रोगी के लिये सर्वथा त्याज्य है।

चिकित्सा विधि -

अब यहां आमवात रोग नाशक प्रयोगों की निर्माण विधि लिखी जाती है—

आमवातगजकेशरी रस—शुद्ध पारद, शुद्ध गंधक, लोह भस्म, ताम्र भस्म, ताग भस्म, भुना सुहागा, शुद्ध शिंगिया विष, लौंग, जायफल, जावित्री, दालचीनी, होंग भूनकर, सोंठ, संधा नमक, जीरा भूनकर सब द्रव्य १-१ तोला, तेजपात ६ माशे, बड़ी इलायची के दाने ६ माशे, त्रिफला १॥ तोला। प्रथम कूटने योग्य औषधों का सूक्ष्म चूर्ण अर्थात् वस्त्रपूत चूर्ण करके रखलें, फिर एक पक्के खरल में पारद गंधक की कज्जली बिना चमक की तैयार कर उसमें उपरिलिखित सब भस्मों में मिला घोटकर एक कर लें। इसके वस्त्रपूत की हुई औषधों का चूर्ण मिला घी ग्वार के रस में एक घण्टा घोटकर २-२ रस्ती की गोलियां तैयार कर लें। इसको १ से २ गोली तक प्रातः सायं अथवा तीन समय अदरक स्वरस एवं शहद में मिला चटावें। शीघ्र लाभ के लिये प्रातः सायं इसके ऊपर से

महारासनादि क्वाथ बनाकर पिलाना चाहिए।

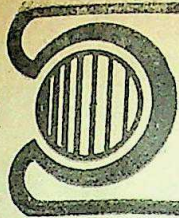
आमवातारि गुटिका—शुद्ध पारद, शुद्ध गंधक, तुल्य भस्म, सुहागा भुना, लोह भस्म, ताम्र भस्म, मिर्चकाली, सेंधानमक, प्रत्येक १ तोला। इन सबसे हुना अर्थात् १४ तोला शुद्ध गुग्गुलु निशोथ एवं चित्रक छाल चूर्ण २-२ तोला। प्रथम कूटने योग्य औषधों का वस्त्रपूत चूर्ण कर लें, फिर पारै गंधक की कज्जली बना उपरिलिखित भस्मों एवं वस्त्रपूत चूर्ण और गुग्गुलु मिला इसमें जितने घृत में कूटकर गोली बनाने योग्य हो सके डालकर इसकी कुटाई प्रटाई करके १-१ माशे की गोलियां बना तैयार कर लें। प्रातः सायं १-१ गोली खाकर ऊपर से त्रिफला भिगोया हुआ जल पी लें। अथवा झोटाकर रखा हुआ जल शस्नादि क्वाथ या मंजिष्ठादि अर्क के साथ सेवन करायें।

वात रोग नष्ट हो जाता है। यह रस रेचक एवं पाचक वातगज केशरी रस—शुद्ध आंवलासार गंधक, शुद्ध गुग्गुलु, त्रिफला चूर्ण प्रत्येक ५ तोला, इनका चूर्ण कर ५ तोला अण्डी के तेल में अच्छे प्रकार से कूटकर मिला तैयार कर लें। इसमें से ६-६ माशे प्रातः सायं २१ या ४० दिन तक सेवन कराने पर कष्ट साध्य आमवात रोग भी नष्ट हो जाता है एवं निर्मूल हो जाता है।

पिप्पलादि क्वाथ—पीपल छोटी, पीपलामूल, चव्य, चित्रकमूल और सोंठ प्रत्येक ३ माशे को २० तोला जल में क्वाथ बना २॥ तोला शेष रह जाने पर एरण्ड तेल १ तोला मिलाकर पिलाने से अथवा ६ माशे मधु मिलाकर पिलाने से आमवात रोग नष्ट हो जाता है।

ममीर गज केशरी रस—शुद्ध कुपील, अहिफेन, मिर्च काली और हिगुल शुद्ध प्रत्येक ६-६ माशे को अदरक के स्वरस में घोटकर १-१ रस्ती की सुखकर रह जायें इतनी बड़ी गोली तैयार कर लें। १ से २ माशे तक प्रातः सायं पान का रस और शहद में अथवा मधु या अन्य उचित अनुपान के साथ सेवन कराने से आमवात, सन्धिवात तथा बहुमूत्र आदि सर्व वात रोग नष्ट हो जाते हैं।

पुनर्नवादि चूर्ण—पुनर्नवामूल, गिल्लोय, सोंठ, सोया, विघारा, कचूर, हरड़ बड़ी और गोरखमुण्डी सब समान भाग लेकर चूर्ण तैयार कर लें दिन में ३ बार ६ माशे से १ तोला तक सेवन करने। पर आमवात रोग निश्चय रूप से निर्मूल हो जाता है। इसी प्रकार अजमोदादि चूर्ण का सेवन कराने से भी आमवात रोग नष्ट हो जाता है।



मोटापा दूर करने का उपाय

वेद्य मानुप्रताप आर० मिश्र बी० एस० ए० एम०, डी० एस० सी० ए०, आयुर्वेद मध्यमा
विवेचक—श्री वाला हनुमान आयुर्वेद महाविद्यालय, लोढा ता० विजापुर (महेसाना) उत्तर गुजरात

संहिताकाल में स्थूल्य की समस्या उतनी व्यापक प्रतीत नहीं होती है क्योंकि आचार्यों ने एक लक्षण के रूप में ही इसका वर्णन किया है। सम्भवतः उस काल में स्वस्थवृत्त के नियमों का पालनपूर्ण तत्परता से करके लोग इस कष्टप्रद अवस्था का निराकरण कर लेते होंगे। आचार्य माधव ने इसका रोग रूप में संकलन कर अपनी मौलिकता का परिचय दिया है। सम्भवतः इनके समय में यह अवस्था आहार-विहार प्रमाद के कारण व्यापक रूप में एक गम्भीर चुनौती के रूप में उपस्थित हो चुकी थी।

वर्तमानकाल में कृशता की अपेक्षा स्थूलता एक समस्या बन गई है। स्थूलता के कारण ही रक्तचाप अधिकता, प्रमेह, हृदय रोग, श्वास, सन्धिवात, आमवात तथा नपुंसकता आदि व्याधियों की वृद्धि तो हुई ही है। परन्तु इसके साथ ही कितने नवयुवक नवयुवतियों को स्थूलता होने से उनका शरीर घेड़ौल बन जाता है इसके परिणामस्वरूप उनको शादी भी होना मुश्किल हो जाता है। अगर किसी कारणवश उनकी शादी भी हो गई तो भी उनका वैवाहिक जीवन शान्तिपूर्ण जीना तो मुश्किल हो ही जाता है। इस समस्या के निराकरण हेतु यह लेख को पढ़कर आप अपने आहार-विहार में परिवर्तन लायेंगे तो आपका मोटापा अवश्य ही कम होगा और आप अपना जीवन सुखमय बनायेंगे। यही हमारी अमिलाषा है। आइये अब आगे मेदवृद्धि के कारण लक्षण और चिकित्सादि पर विचार मिमर्श करें।

मेदोरोग के कारण—

(१) जिसके माता-पिता मोटे हैं उनके बच्चे भी मेदस्वी होंगे। इसका उल्लेख आचार्य चरक ने इस प्रकार किया है। तदति स्थूल्यम् बीज स्वभावाच्चोप जायते। इसका अर्थ है कि माता पिता के बीज के अनुसार स्वभावतः शरीर स्थूल हो जाता है। इसे अधिक स्पष्ट करते

हुए आचार्य चक्रपाणि ने लिखा है कि “बीज स्वभावात् इति स्थूल माता पितृजन्यत्वात्।” स्वभावतः स्थूल माता पिता के बीज से उत्पन्न सन्तान स्थूल होगी।

प्रत्यक्ष में देखने को मिलता है कि पुरुषों की अपेक्षा स्त्रियां अधिक मेदस्वी होती हैं। साधारणतया किसी भी आयु में मेद बढ़ सकता है। किन्तु चालीस वर्ष की आयु के पश्चात् मेद वृद्धि अधिक होते देखा गया है।

(२) घी, तैल जैसे स्निग्ध पदार्थों के सेवन से, मांस मछली और अण्डा जैसे अति पोषिक पदार्थों के सेवन से, शक्कर, मिठाई, विस्कुट, चाकलेट जैसे अति मधुर पदार्थों के सेवन से, सेव, केला, द्राक्षा, नारंगी, संतरा आदि फलों का अतिमात्रा में सेवन करने से, अति मद्यपान करने से शरीर में मेद की वृद्धि होती है।

(३) बार-बार भोजन करने से तथा अतिमात्रा में भोजन करने से शरीर में मेद की वृद्धि होती है।

(४) व्यायाम न करने से दिन में सोने से तथा खाने के बाद तुरन्त सोने से भी शरीर में मेद की वृद्धि होती है।

(५) चिन्ता न करने से तथा आराम से जीवन बिताने से शरीर में मेद की वृद्धि होती है।

(६) आधुनिक चिकित्सा विज्ञान की दृष्टि से पीयूष ग्रन्थि, उपवृक्क ग्रन्थि, वृषण, ग्रन्थि, चुल्लिका ग्रन्थि जैसे अन्तःस्रावी ग्रन्थियों की क्रिया वैपम्यता के कारण शरीर में मेद की वृद्धि होती है।

मेदोरोग की सम्प्राप्ति—

उपरोक्त कारणों के अति सेवन से मेद बढ़ जाता है और वह मार्गाविरोध उत्पन्न कर देता है जिसके कारण एक तरफ अन्ध धातुओं को पोषण नहीं मिलता और दूसरी तरफ मार्गाविरोध होने के कारण वायु का अधिक प्रकोप हो जाता है। प्रकुपित वायु कोष्ठाग्नि को अधिक प्रदीप्त करता है जिसके परिणामस्वरूप मुख अधिक

लगती है। आहार के पाचन के बाद जो अन्य धातुओं का आहार बनता है उसमें मे अधिकांश मेद धातु ही बन जाती है। जिससे अन्य धातुओं को पोषण नहीं मिलता। इस प्रकार पुनः वात प्रकोप पूर्वक यह चक्र चलता रहता है और शरीर में मेद की वृद्धि होती रहती है। इसे मेदो-रोग, स्थूल रोग, मोटापा और मोक्षविता कहते हैं।

लक्षण—

- (१) सम्पूर्ण शरीर में स्निग्धता की वृद्धि होती है।
- (२) नितम्ब, उदर तथा स्तन प्रदेश में विशेषतः मेद का संचय होता है।
- (३) अशक्ति हो जाती है। क्योंकि मेदो-रोग में मेद की ही पोषण मिलता है। इसके अतिरिक्त अन्य धातुओं को पोषण न मिलने से कारण रोगी में अशक्ति आती है।
- (४) साधारण परिश्रम करने से श्वास फूलता है।
- (५) तृष्णाविव्यता होती है।
- (६) मोह, स्वप्नाविव्यता एवं म्लानि होती है।
- (७) मधुन शक्ति का हास होता है। इसका कारण यह है कि शरीर में वीर्य की मात्रा कम हो जाने से तथा मेद से उसके मार्ग में अवरोध उत्पन्न हो जाने से वह मधुन करने में असमर्थ होता है। मधुन करने में कठिनाई होती है। क्योंकि स्त्री के पेट पर मेदस्वी पुरुष का पेट टिक जाता है जिससे समागम नहीं होने पाता।

(८) भूख अधिक लगती है और रोगी भूख को सहन करने में असमर्थ रहता है। आभ्यन्तर रक्त संचार अधिक होने के कारण जठराग्नि तीक्ष्ण हो जाती है। जठराग्नि तीक्ष्णता का कारण कोष्ठ में वायु की अधिकता भी है।

(९) स्वेदाविव्यता होती है। इसके परिणामस्वरूप मेदस्वी के शरीर में से दुर्गन्ध आती है। इसका कारण मेद वातु की वृद्धि है। मेद का मूल स्वेद है। जब मेद की वृद्धि होती है तो उसके साथ ही साथ स्वभावतः स्वेद की भी वृद्धि होगी। अधिक प्रमाण में स्वेद उत्पन्न होने के कारण ही शरीर में दुर्गन्ध आती है।

(१०) आधुनिक चिकित्सा विज्ञान की दृष्टि से मेद वृद्धि के कारण अरुचि, थकावट, परिश्रमजग्य श्वासकृच्छता, सम्पूर्ण शरीर में विशेषतः शानु एवं कटि में शूल, हृदय रोग, त्वचा में उपसर्ग, गुल्म, सन्नि शोथ, मधुप्रमेह तथा रक्तचाप वृद्धि आदि रोग हो सकते हैं।

मेदो-रोग में शारीरिक परीक्षण—

मेदो-रोग में आधुनिक चिकित्सा विज्ञान की दृष्टि से ब्लड कोलेस्ट्रॉल की परीक्षा करनी चाहिए। आयुर्वेदीय भाषा में ब्लड कोलेस्ट्रॉल की जगह रक्तगत स्निग्धता अथवा रक्तगत वसा शब्द का प्रयोग करें तो अति उत्तम होगा। स्वस्थ मानव के रक्त में इसकी स्वाभाविक मात्रा १०० सी०सी० (मिलीलीटर) स्वस्थ रक्त में १५० से २५० मिलीग्राम कोलेस्ट्रॉल की मात्रा होती है। जो रक्त की कोशिकाओं और रस में बराबर-बराबर रहती है। रक्त कोशिकाओं में यह स्वतन्त्र रूप से रहती है जबकि रक्त रस में इसका ७० प्रतिशत भाग कोलेस्ट्रॉल इथर के रूप में रहता है। एक ७० किलोग्राम स्वस्थ मनुष्य के रक्त में कोलेस्ट्रॉल की कुल मात्रा ४ से ६ ग्राम रहती है। इसलिए रक्त में कोलेस्ट्रॉल की मात्रा प्रति १०० मिलीलीटर में १५० मिलीग्राम से कम नहीं होनी चाहिये। साथ ही किसी मनुष्य में यह मात्रा बढ़कर प्रति १०० मि०ली० पर ३०० मिलीग्राम से अधिक कदापि नहीं होनी चाहिए। अगर प्रति १०० मिली लीटर पर ३०० मिलीग्राम से अधिक कोलेस्ट्रॉल हो तो वह मेदो-रोग का सूचक है।

मेदो-रोग का चिकित्सा सूत्र—

स्थूल्य की चिकित्सा बताते हुए आचार्य चरक ने कहा है कि 'चापतर्णाम् चेष्टं स्थूलानाम् कर्शनम् प्रति।' अर्थात् अत्यन्त मोटे व्यक्तियों को कृश बनाने के लिए आहार गुरु देना चाहिए और उसे अपतर्ण कराना इष्ट है। चरक ने और भी कहा है कि—

वातघ्नः श्लेष्मघ्नः पित्तघ्नः शूलघ्नः मेदोहराणि च।

रूक्षोष्ण दस्तयस्तीक्ष्ण रूक्षान्युद्वर्तनानि च॥

—च० सू० अ० २१/२२

वायु श्लेष्मा तथा मेद को नष्ट करने वाले अन्नपान तीक्ष्ण रूक्ष एवं उष्ण वस्तियाँ, रूक्ष उवटन का प्रयोग करें।

श्रमचिन्ताव्यवायाध्व क्षोद्र जागरण प्रियः।

हन्त्यवश्यमतिस्थूलं यवदयासाक भोजनः॥

—चक्रवर्त

श्रम, चिन्ता, स्त्री संग, मार्ग गमन, शहद का सेवन, रात्रि जागरण, जो और सान्ना के भोजन से स्थूलता अवश्य दूर होती है। स्थूल्यता निवारण हेतु निद्रा कम करना चाहिए तथा मधुन, व्यायाम एवं चिन्ता क्रमशः बढ़ानी

चाहिये। प्रातःकाल उठकर सर्वप्रथम गृह का श्रवण और भरण पीना चाहिए। चव्य (चाभ), जीरा, सोंठ, कालीमिर्च, पीर, हींग, संधव एवं हरे को समान भाग लेकर कपड़-छन चूर्ण तैयार करके आधा से एक ग्राम पानी के साथ दिया जाय तो अवश्य मोटापा दूर होता है।

विडंग, सोंठ, यवक्षार, लोह मसम और आंवला के समान भाग चूर्ण को तैयार करके ५०० मि०ग्राम से ७२५ मि०ग्राम तक गृहद के साथ दिया जाय।

त्रिफला, त्रिकटु, तिल और नमक के समभाग चूर्ण का मिश्रण २ ग्राम यथावश्यक पानी के साथ लिया जाय तो मोद का नाश होता है। मात्र कत्था का चूर्ण २ ग्राम प्रातः शीतजल के साथ सेवन किया जाय।

श्रेष्ठ मोद नाशक योगों में विडंगाच्छलोह, लोह रसायन, चित्रकमूल चूर्ण, पंचतित्त घृत, आरोग्यवर्धनी रस, शिला-चन्द्रोदय वटी, चन्द्रप्रभा वटी, अमृतादि गुग्गुल, पंचतित्त गुग्गुल, दशांग गुग्गुल, त्रिफला गुग्गुल, नवक गुग्गुल, भृंग-राजासव, लोहारिष्ट, पुनर्नवारिष्ट, विडंगारिष्ट, वर्धमान पिप्पली रसायन, रसोन क्षीरपाक आदि उल्लेखनीय हैं।

अनुभूत चिकित्सा—

इस लेख में एक स्वानुभूत केस प्रस्तुत करता हूं। ११ जून १९७८ को चिकित्सालय से रात को १० बजे मैं वापस घर आया। एकाएक उच्च रक्तचाप के आक्रमण से मैं बेहोश हो गया। घर वालों ने मुझे अहमदाबाद के गुप्रसिद्ध बी० एस० हास्पिटल में दाखिल किया। डाक्टरों के तत्कालिक चिकित्सा में रात को तीन बजे मैं होश में आया। डाक्टर महोदय ने कुछ दवा लिखकर दिया और आराम करने की सलाह देकर रात को ही मुझे हास्पिटल से विदा किया। मैं घर आया और डाक्टर महोदय की लिखी हुई दवा खाना प्रारम्भ किया तो दवा फायदा करने के बदले में नुकसान करने लगी। दवा खाने के बाद अशक्ति तथा चक्कर काफी आता था मैं डाक्टर महोदय को पुनः मिला। अपनी सारी राम कहानी सुनाई। उन्होंने कहा कि दवा से अशक्ति एवं चक्कर आयेगा ही। इसका कोई इलाज मेरे पास नहीं है। मैं घर आया। डाक्टर महोदय की लिखी दवा खाना बन्द कर दिया। मैं जानता था कि उच्च रक्तचाप होने का कारण मोदवृद्धि है। इसकी मूलगामी चिकित्सा आयुर्वेद के पास ही है। इसलिए शास्त्र का अध्ययन करने के बाद मोद को

घटाने के लिए पथ्याय्य का पालन करना प्रारम्भ किया। सादा जीवन उच्च विचार का सूत्र अपनाते हुए मोदोदर गुग्गुल एवं आरोग्यवर्धनी वटी की दो-दो गोली प्रातः सायं दोपहर गृहद मिश्रित जल के साथ लेना प्रारम्भ किया। दो महिना में मेरा चार किलोग्राम वजन घट गया। वजन से मोद कम हुआ। मोद कम होने से स्वयं उच्च रक्तचाप मिट गया। तभी से फिर मुझे उच्चरक्तचाप नहीं हुआ।

मोदवृद्धि का नाश करने हेतु प्रतिवर्ष शीतऋतु में वर्धमान पिप्पली का प्रयोग करता हूं। पन्द्रह दिन तक प्रतिदिन क्रम से दो पिप्पली बढ़ाते हुए गाय के दूध के साथ पिप्पली के चूर्ण को उबालकर प्रातः सेवन करता हूं और पुनः दो पिप्पली को क्रमशः घटाते हुए पन्द्रह दिन तक सेवन करता हूं। जब प्रातः पान किया हुआ दूध एवं पिप्पली सम्पूर्णतः पच जाता है तब दूध और भात में आवश्यकतानुसार मिथी अथवा शक्कर मिलाकर खाता हूं। इसके अतिरिक्त अन्य आहार वर्धमान पिप्पली प्रयोग करते समय नहीं लेता। इस प्रकार शीतऋतु में दो कोर्स करने से वर्ष भर में बढ़ा हुआ मोद कम हो जाता है। वर्धमान पिप्पली के प्रयोग से बिना किसी तकलीफ के प्रति कोर्स में १ से ४ किलोग्राम तक वजन घटते हुए मैंने अन्य रोगियों में देखा है।

अन्त में मोदवृद्धि को दूर करने के लिए अगर रोगी मात्र औषधि पर ही आधार रखता है तो उसे विशेष लाभ नहीं होता और वह चिकित्सक एवं आयुर्वेद दोनों को ही बदनाम करता है।

मोदोदरोग में पथ्य—मोदरोग में लघु, उष्ण, कटु, तिक्त द्रव्यों का सेवन हितावह है। जी, चना, गेहूं, साग, कोबी, ज्वार, बाजरा, प्रियंगु, कुल्थी, मूंग, अरहर, हरी पत्ती वाली भाजियां, परबल, लोकी, तरौई, करेला, कुदरू, ककड़ी, खेकसा, आंवला, पोदीना आदि का सेवन स्थूल्यता में करना इष्ट है। अधिक शारीरिक परिश्रम, अधिक मानसिक परिश्रम, चिन्ता, मथुन, मुसाफिरी, व्यायाम, रात्रि जागरण आदि मोदोदरोग में हितकारी विहार हैं।

मोदोदरोग में अपथ्य—मोदोदरोग में गुरु, मधुर, शीत, स्निग्ध द्रव्यों का सेवन वर्जनीय है। मिठाई, तैल, घी, मक्खन, दूध, पुलाव, खीर, हलुआ, आलू, केक, पेस्ट्री, पुडिंग, शाखड़, आइस्क्रीम, पनीर, जैम, पिष्टमय पदार्थ, शराब, मांस, सब्जी अण्डा, नमक, चाबल, मक्का आदि का अतिमात्रा में उपयोग करने से मोद की वृद्धि होती है।

धन्वन्तरि

स्वाधीनता के 34 वर्ष

उपलब्धियां और भविष्य

- हमने आधुनिक और आत्मनिर्भर अर्थ व्यवस्था का आधार तैयार किया है ।
- हमने खाद्यान्न में स्वावलम्बन प्राप्त किया, अपने औद्योगिक क्षेत्र का विस्तार किया और विज्ञान तथा प्रौद्योगिकी में महत्वपूर्ण प्रगति की ।

1985 तक

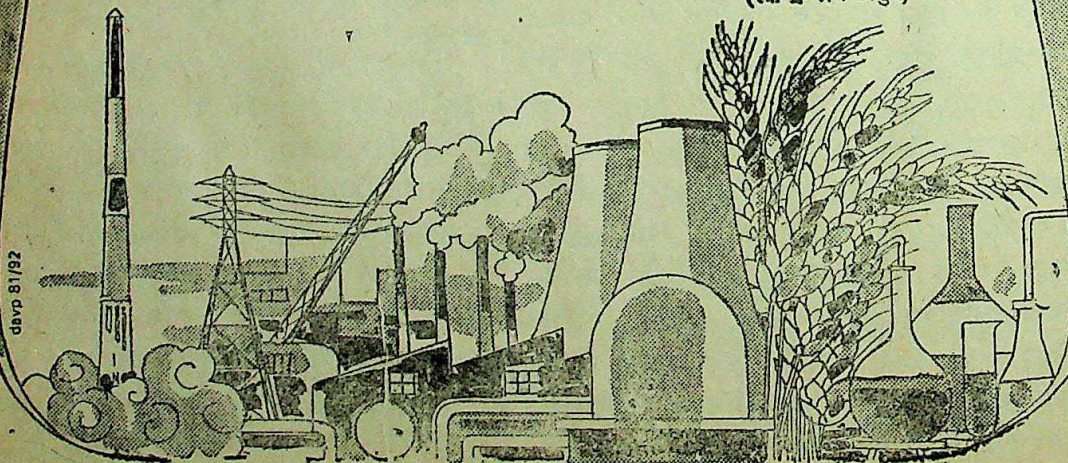
हमारा उद्देश्य है कि निम्न गरीबों के छोटे भाग को गरीबी के इस स्तर से ऊपर उठाया जाए और अभाव ग्रस्त गांवों में पीने का पानी पहुँचाया जाए ।

और 2000 ई० तक

कुछ रोग निवारण तथा जन्म दर 36 से घटाकर 21 प्रति हजार की जाय ।

‘वह दिन आएगा, दृढ़ विश्वास रखें ।’

(स्वीन्द्र नाथ ठाकुर)



dayp 8/1/92

उदररोग चिकित्सा व सावधानियां

श्री चन्द्राजीराव इंगले आयुर्वेद बृहस्पति, २५६ टाईप-२, बी०एच०ई०एल०, खेलार (भांसी) उ० प्र० ।



भोजन के पाचन में जठराग्नि का विशेष महत्व है । जठराग्नि निम्नलिखित प्रकार की होती है—

१. मन्दाग्नि—कफ प्रकृति वालों की मन्दाग्नि होती है । यह कफ रोगों को उत्पन्न करती है । इससे भूख कम लगती है ।

२. तीक्ष्णाग्नि—पित्त प्रकृति वालों की अग्नि तीक्ष्ण रहती है । यह भोजन का पाचन करती है व गर्मी के रोग पैदा करती है ।

३. समान्नि—यह श्रेष्ठ मानी जाती है । यह सब खाये हुये पदार्थों का यथायोग्य पाचन करती है ।

४. विषमाग्नि—यह अग्नि वात प्रकृति वालों में पाई जाती है । यह कभी अन्न को पचाती है और कभी नहीं । यह बादी रोग पैदा करती है ।

५. भस्माग्नि—शरीर के भीतरी कफ में अत्यधिक कमी आ जावे तो वायु की प्रेरणा से महातीव्र अग्नि होकर भस्माग्नि कहलाता है । यह भस्मक रोग उत्पन्न करती है । यह हानिकारक है क्योंकि भस्माग्नि वाले पुरुष को यदि निश्चित समय पर भोजन प्राप्त नहीं हुआ तो वह पसीना, प्यास, दाह, मूर्च्छा आदि उत्पन्न करके मनुष्य का प्राणांत तक कर सकती है । इस रोग में मनुष्य एक साथ कई रोटियां खा जाता है ।

अतः चिकित्सकों को अग्निबल विचार कर चिकित्सा करनी चाहिये अन्यथा चिकित्सा निष्फल हो जाती है ।

उदर रोग चिकित्सा में प्रयुक्त होने वाली औषधियों के प्रकार

१. दीपन—जो औषधियां अग्नि प्रदीप्त करें तथा आम को न पचावे वे दीपन कहलाती हैं । जैसे बड़ी सौंफ ।

२. पाचन—जो आम को पचावे तथा अग्नि को प्रदीप्त न करे । जैसे—नागकेशर

३. चित्रक—जिन औषधियों में उदरोक्त दोनों गुण हों वे चित्रक कहलाती हैं । जैसे—चित्रक

४. रेचन—यह वह औषधि है जो कि पक्वापक्व अन्नादि तथा वातादि दोषों को पतले कर गुदामार्ग से बाहर निकाले ।

औषध सेवन काल—

१. पित्त अथवा कफ के कोप पर, कफ पर विरेचनार्थ, पित्त पर विरेचनार्थ, कफ पर वमन के लिए तथा वातादि दोष, स्नेहादि योग से पतला करने के लिए रोगी को निराहार प्रातः ही औषधि सेवन करनी चाहिये ।

२. यदि गुदा सम्बन्धी अपान वायु कुपित हुआ हो तो भोजन करनेसे कुछ पूर्व औषधि मक्षण करनी चाहिए ।

३. यदि अरुचि का रोग हुआ हो तो अनेक प्रकार के अन्नादि तथा उत्तमोत्तम मद्य तथा चोष्य पदार्थों के साथ औषधि दो ।

४. यदि नाभि का समान वायु कुपित हुआ हो या मन्दाग्नि हो तो अग्नि प्रदीपक औषधि भोजन के साथ मिलाकर सेवन करें ।

सावधानियां—१. अजीर्ण नाशी दवाओं का सेवन बहुत सोच-समझकर करना चाहिये । बहुत दिनों तक लगातार इनका सेवन करने से इनकी आदत पड़ जाती है । फिर बिना औषधि सेवन के भोजन हजम नहीं होता । लेकिन त्रिफला इस दोष से मुक्त है ।

२. सदैव विरेचन का उपयोग करना भी उचित नहीं । विरेचन तीव्र हो या मृदु वैद्य की सलाह से लें ।

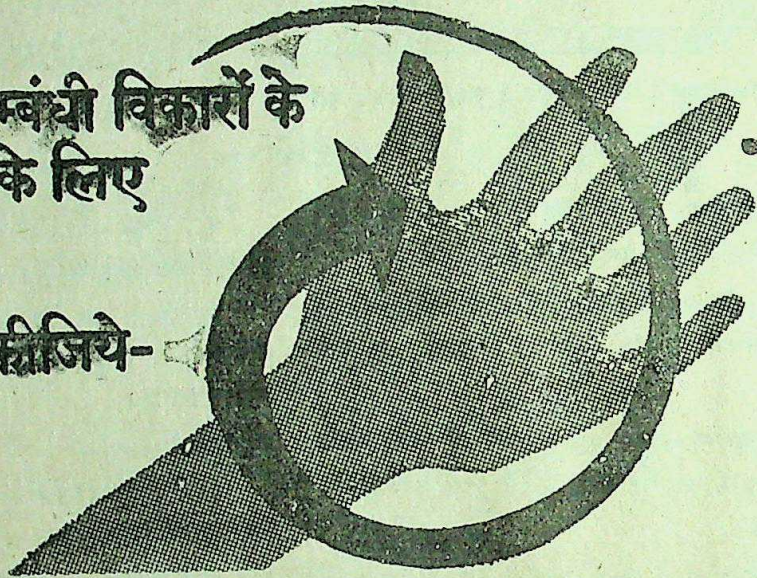
३. मानसिक कारणों से जैसे—शोक, चिन्ता, भय आदि से कब्ज हो तो इन कारणों को दूर करना चाहिये ।

४. औषधि स्नेह व रुक्षता को ध्यान में रखकर देनी

धन्वन्तरि

त्वचा सम्बंधी विकारों के
उपचार के लिए

प्रयोग कीजिये-



संघ का

स्केबीज़न

प्रभावकारी त्वचा ऐंटीसेप्टिक

त्वचा के विकारों के शीघ्र और प्रभावकारी नियंत्रण के लिए
एक नया-तुला फार्मूला- स्केबीज़न खुजली में उत्तम
पहूँचाता है रोग को फैलने से रोकता है और
रुत की रोकथाम करता है। त्वचा को
स्वस्थ होने में सहायता करता है।

खुजलीके जन्तुओं से रक्षा।
एक्जिमा, दाद और खुजली आदिमें
प्रभावकारी इलाजके लिए
स्केबीज़न का प्रयोग कीजिए।

१० और २५ ग्राम
के ट्यूब में उपलब्ध।



इंफंइ

फार्मास्यूटिकल सर्विस लि.

संकेत के तहत तैयार की गई

एक संतुलित फार्मूला:

स्ट्रुव सुल्फर (गंधक) आई. पी.	४०%
ज़िंक आक्साइड आई. पी.	४०%
मल्लोनिनिलोमाइड आई. पी.	४०%
बैजिल बैजोफेट आई. पी.	४०%
बैजिल एमिस्ट	४०%
पैराफॉन आधार	क्यू. एम्स.



मूत्राघात या मूत्रावरोध

डा० गजेन्द्र सिंह छोंकर आयुर्वेदाचार्य ए०, एम०बी०एस०, एम०ए०एम०एस०
संस्थापक एवं व्यवस्थापक—ओ३म् आयु रक्षक फार्मसी, सादाबाद (मथुरा) उ० प्र०

—: ☼ :—

मूत्र-मल आदि के वेग के आघात से अवरोध या धारण करने से कुपित हुए वातादि दोष मूत्राघात या मूत्रावरोध उत्पन्न करते हैं।

मूत्राघात का अर्थ है मूत्र का अभाव, इस स्थिति में रोगी को मूत्र आता ही नहीं। उसे मूत्र का निर्माण ही नहीं होता।

मूत्रावरोध उस स्थिति को कहते हैं जिसमें मूत्र तो भरा रहता है लेकिन इच्छा करने पर भी मूत्र का विसर्जन नहीं होता है।

मूत्रावरोध की स्थिति अत्यन्त ही भयंकर कष्टप्रद एवं असह्य होती है। इसे एलोर्थी में Renal colic pain कहते हैं।

मूत्राघात माधव निदान की दृष्टि से १३ प्रकार का होता है—

१. वात कुण्डलिका—रूक्षता से अथवा मूत्रमलादि वेगों के आघात से कुपित हुआ वायु वस्ति में आकर मूत्र में प्रवेश कर पीड़ा करता हुआ कुण्डलिका के आकार का होकर घूमता है। उस कठिन व्याधि को वातकुण्डलिका कहते हैं।

२. अष्ठीला—जिस मूत्राघात में वायु आध्मान करती हुई वस्ति और गुदा को अवरुद्ध कर चलने वाली और उठी हुई तीव्र पीड़ा करने वाली तथा मूत्र मार्ग का अवरोध करने वाली अष्ठीला (ग्रन्थि) उत्पन्न कर देती है उसे अष्ठीला कहते हैं।

३. वात वस्ति—जो अज्ञानी मनुष्य मूत्र के वेग को धारण करता है उसकी वस्ति स्थान में रहने वाली वायु वस्ति के मुख को अवरुद्ध कर देती है जिससे मूत्र का अवरोध हो जाता है और वस्ति स्थान तथा कुक्षि में पीड़ा

होती है। उसे वात वस्ति का लक्षण मानते हैं। यह रोग कष्ट साध्य है।

४. मूत्रातीत—जो बड़ी देर तक मूत्र के वेग को धारण करता है उसको मूत्र शीघ्रता से नहीं आता अथवा मन्द-मन्द वेग से मूत्र होता है। इस अवस्था को मूत्रातीत रोग कहते हैं।

५. मूत्र जठर—मूत्र के वेग को धारण करने से उदावर्त को उत्पन्न कर देने वाला कुपित अपानवायु उदर को अत्यन्त पूर्ण कर देता है उससे नाभि के नीचे आध्मान हो जाता है और तीव्र पीड़ा होती है तथा इस आध्मान से गुदा और वस्ति का मार्ग रुक जाता है इसको मूत्र जठर रोग कहते हैं।

६. मूत्रोत्संग—जिस मनुष्य की वस्ति में या मूत्र नाड़ी या शिश्न के मुण्ड में प्रवृत्त हुआ मूत्र रुक जाता है अथवा बलपूर्वक नहाने से अथवा बल लगाकर मूत्रोत्संग करने से रक्त के साथ धीरे-धीरे मूत्र निकलता है और उनमें पीड़ा होती है अथवा नहीं भी होती है उसे मूत्रोत्संग कहते हैं।

७. मूत्र क्षय—किसी का शरीर सूक्ष्म तथा बलान्त हो गया हो उसके वस्ति स्थान में रहने वाला पित्त तथा वायु कुपित होकर पीड़ा तथा दाह सहित मूत्रक्षय कर देता है उसे मूत्रक्षय कहते हैं।

८. मूत्र ग्रन्थि—वस्ति के भीतर मुख पर अकस्मात् जो गोल स्थिर छोटी सी पथरी के समान पीड़ा करने वाली ग्रन्थि (गांठ) उत्पन्न हो जाती है उसको मूत्र ग्रन्थि कहते हैं। अथवा वात और कफ से दूषित हुआ मूत्र वस्ति के द्वार पर कठिन ग्रन्थि उत्पन्न कर देता है। उससे गिरा हुआ मूत्र कष्ट से बाहर निकलता है उसे मूत्र ग्रन्थि कहते हैं।

६. मूत्र शुक्र—जो मनुष्य मूत्र के वेग होने के समय मूत्र का अवरोध करके स्त्री प्रसंग करता है उसका धीर्य कुपित वायु से उद्धृत होकर अपने स्थान से ध्रष्ट होकर मूत्र के प्रथम या पश्चात् मल मिले हुए जल के समान निकलता है उसे मूत्र शुक्र के लक्षण कहते हैं।

१०. उष्ण वात—अधिक व्यायाम करने से, अधिक मार्ग चलने से, अधिक ताप में रहने से इन सब कारणों से कुपित हुआ पित्त वस्ति में प्राप्त होकर वायु से घिरकर वस्ति, किशन तथा गुदा में दाह करता है और हल्दी के समान रक्तवर्ण का अथवा रक्त सहित कष्ट से मूत्र का नीचे की ओर स्राव होता है उसे उष्ण वात कहते हैं।

११. मूत्र साद—पित्त अथवा कफ अथवा दोनों जब वायु के संग मिलकर वस्ति में कुपित हो जाते हैं तब कष्ट से रक्त, पीत या श्वेत वर्ण का और घना मूत्र निकलता है। उसमें दाह होती है तथा गौरौचन, शंख तथा चुने के समान श्वेत वर्ण का मूत्र होता है सूखा हुआ अनेकों वर्ण का मूत्र होता है उसे मूत्रसाद के लक्षण कहते हैं।

१२. विड्विधात—रुख तथा दुर्बल मनुष्य का वात कुपित होकर जब मल को आवृत कर लेता है तब वह मल मूत्र बाहिनी नाड़ियों में प्राप्त हो जाता है और मूत्र में मिल जाता है जिससे बिष्ठा मिला हुआ और बिष्ठा के गन्ध वाला बड़े कष्ट से मूत्र होता है उसे विड्विधात कहते हैं।

१३. वस्ति कुण्डल—यदि शीघ्र-शीघ्र मार्ग चलने से, अधिक उपवास करने से, अधिक परिश्रम करने से, आघात हो जाने से अथवा किसी अन्य प्रकार से वस्ति के पीड़ित हो जाने से अपने स्थान से हटकर वस्ति स्थूल या फूलकर गर्भ-के समान हो जाती है। जिसमें सूज, कम्पन वा संचालन दाह इनसे पीड़ित होकर बिन्दु-बिन्दु करके मूत्र का स्राव होता है और वस्ति को दबाने से मूत्र धारा रूप में बहता है तथा स्तम्भन और पीडन होती है। इससे रोगी दुखी होता है। इसको अति कठिन शस्त्र और विष के समान दुःखप्रद वस्ति कुण्डल रोग कहते हैं।

इस रोग में जब पित्त का अधिक प्रकोप होता है तब उसमें दाह, सूज और मूत्र में विवर्णता होती है। जब कफ की अधिकता होती है तब गुल्मा, शोथ और स्निग्धता युक्त श्वेत वर्ण का गाढ़ा मूत्र निकलता है।

साध्यासाध्यता—जिसमें वस्ति का मुख कफ से अव-रुद्ध हो गया हो और पित्त बद्ध गथा हो वह कुण्डलिका असाध्य है। जिसमें वस्ति का मुख खुला हो और जो कुण्डली की भांति नहीं हुई हो वह वस्ति कुण्डलिका साध्य है। जो वस्ति जब कुण्डली की भांति हो जाती है तब उसमें तृष्णा मोह और स्वास हो जाता है। वह भी असाध्य है।

मूत्रावरोध के अर्ण्य कारण भी हैं—

१. उग्र २. जीर्ण कारण दो विभागों में होते हैं।

१. उग्र कारण—पुरुषों में प्रोस्टेट ग्रन्थि की वृद्धि भी विशेष मूत्रावरोध का कारण है। इसमें मूत्र नलिका का संकोच या संकीर्णन उग्र मूत्र नलिका प्रदाह और टेविस डीसेलिस उग्रावस्था के कारण होते हैं। गर्भच्युत गर्भाशय या श्रोणि अन्तर्गत अवुंद, हिस्टीरिया और डिस्सेमिनेटेड स्क्लेरोसिस और शिशुओं में मूत्रनलिका बहिर्द्वार की निरुध्रता और निबद्ध प्रकर्श, मूत्राशयिक या मूत्रनलिका स्थित अशमरी के कारण मूत्रावरोध की उग्रावस्था की स्थिति प्रतिभासित होती है।

२. अमूर्तता और अल्प मूत्रता निम्न स्थितियों में भी पाई जाती है—

१. अल्प मात्रा में जल पीने से अमूर्तता की स्थिति उत्पन्न होती है।

२. शरीर में जल की अल्पता, अल्प रक्तादावाहक, वृक्क नलिकाओं में तीव्र विनाश का होना, वृक्क पाक तथा हृत्क्रियाप्राप्य। इन सभी अवस्थाओं में वृक्कों में रक्त कम मात्रा में पहुंचता है या वृक्कों के निःस्यन्दन दाब घट जाता है जिससे वृक्क से मूत्र छनने का कार्य मन्द पड़ जाता है। ऐसी स्थिति में अमूर्तता स्वाभाविक ही है।

३. वृक्क, यकृत या हृदय रोगों में शरीर में शोथ हो जाता है और शरीर के विभिन्न अंगों में जल का संचय होने लगता है। इस स्थिति की उत्पत्ति सवर्ण संचालक हार्मोन जो अधिवृक्कवाह्यक में बनता है तथा मूत्रावरोधी हार्मोन जो पिच्युटरी में बनता है। यह स्थिति अल्पमूर्तता को उत्पन्न करती है।

चिकित्सा

मूत्राघात के रोगों को प्रथम स्नेहन और स्वेदन

कराकर स्निग्ध विरेचन देना चाहिए और पीड़ायुक्त मूत्राघात में उत्तरवस्ति देनी चाहिये—

१. श्वेत जीरा ६ ग्राम और कलमी शोरा ६ ग्राम, दोनों को रीसकर चूर्ण बनालें और ठण्डे या ताजी पानी से फंकी करा दें। बहुत ही शीघ्र मूत्रावरोध ठीक होता है।

२. श्वेत पपंटी १/२ ग्राम और हज्जलसहृद भस्म १/२ ग्राम, चन्दन.दि वटी १ गोली इन तीनों दवाओं को एक साथ मिश्रित कर ताजा पानी से सेवन करने से मूत्रावरोध रोग में लाभ होता है। अनुभूत है।

३. शिशुओं को मूत्रावरोध व मलावरोध रोग में इनकी ही माताओं का दूध लेकर और बराबर का पानी मिलाकर पिलाने से शीघ्र लाभ होता है। यह बच्चों की अचुक दवा है।

४. गोधुरादि गुग्गुलु की १ गोली प्रातः, दोपहर और सायंकाल गोधुरादि क्वाथ से लेने पर लाभप्रद है।

५. ओ३म आयु रक्षक फार्मेली की—ओ३म आयु-वैदिक पेनिसिलिन टेबलेट १ गोली से २ गोली तक ताजे पानी से देना लाभप्रद एवं अचुक दवा है।

६. उशीरासव १२ ग्राम और १२ ग्राम जल मिलाकर सेवन से मूत्राघात को विशेष लाभ पहुंचता है।

७. वीरतर्वादि क्वाथ—१ ग्राम से ३ ग्राम लेकर पीयें, लाभ करता है, शारंगवर का योग है। मूत्राघात व मूत्रावरोध और सभी मूत्र सम्बन्धी विकारों में अत्यन्त ही लाभप्रद, मेरा अनुभूत है।

इसी वीरतर्वादि क्वाथ में अड़सा, सिलाजीत और मिला लिया जाय तो और भी अत्यन्त लाभप्रद है।

८. दशमूल क्वाथ, ६ गोधुरादि क्वाथ १२५ मि० ग्राम से २५० मि० ग्राम, १०. चन्द्रकला रस भी बहुत ही लाभप्रद है। ११. शतावर्यादि योग भी बहुत ही लाभप्रद है। १२. उशीरादि चूर्ण भी लाभप्रद है।

पथ्य—पुराने शालिधान चावल, पेठा, परवल, ककड़ी, खीरा, शारियस का पानी, ईल का रस।

अपथ्य—विरुद्ध भोजन, मैथुन, विष्टम्भरी पदार्थ। प्रोस्टेट ग्रन्थि को निवृद्धि के लिए आयुर्वेद में बहुत ही महत्वपूर्ण चिकित्सा है। पलास क्षार २५० मि० ग्राम से ५०० मि० ग्राम तक दें, लाभ होता है।

पृष्ठ ३७ का शेषांश

चाहिए। जैसे कुछ लोगों के शरीर में रुक्षता आ जाती है तो उन्हें "पंचसकार" चूर्ण से लाभ नहीं होता अतः उन्हें रात्रि में घृत मिश्रित दुधपान करना चाहिए अथवा ईसब-गोल की भुसी लेनी चाहिए।

५. उदर बस्ति (एनिमा) देने के बाद चिकित्सा सद्यः फलदायी होती है।

६. नीबू, पोदीना, हरा धनियां, अदरक आदि दें।

७. कम से कम माह में एक उपवास करना चाहिए।

८. तले हुए पदार्थों का सेवन कम करें।

९. बिना छने मोटे आटे की रोटियां बहरी सब्जियां कब्ज रोकने में सहायक हैं। प्रातः अमरुद बीज सहित चबा-चबाकर सेवन करें। अमरुद के बीज मल निष्कासन में सहायक होते हैं। रात को भोजन कम करें। पपीते का सेवन करायें। यह रेचक होता है।

कुछ सरल व सफल नुस्खे—

१. कब्ज—३० ग्राम त्रिफला रात को चीनी, फ्रां

या मिट्टी के वर्तन २५० मि० लि० पानी में भिगो दें।

प्रातः नाश्ता न लें। त्रिफला जल लें। दस्त का वेग मालूम हो तो तुरन्त दस्त जायें। दोपहर तक त्रिफला के प्रभाव से पेट के मल का निष्कासन हो जायेगा। तत्पश्चात् भोजन करें। पुरानी कब्ज वालों को १५-२० दिन में स्थाई लाभ हो सकता है। त्रिफला नेत्रों के लिए हितकारी है।

२. अग्निमांघ—त्रिफला ३० ग्राम, यण्ठीमधु १० ग्राम, असगन्ध १० ग्राम, शतावरी १० ग्राम। इन सबका कपडछन चूर्ण तैयार करें। ३ ग्राम चूर्ण मधु मिलाकर चाटें। सेवनकाल—दिन में ३ बार भोजन से आधा घण्टे पूर्व सेवन करें। मन्दाग्नि की हर स्थिति में लाभकारी है।

मन्दाग्नि के लक्षण निम्नलिखित हैं—

दस्त ठीक न आना, कभी बिबन्ध होना, कभी दस्त लगना, क्षुधाहीनता, उदर वायु संवय, पेट का भारीपन, डकार आना, कै छाती में जलन, मुंह में पानी आना, आलस्य, दुर्गन्धित श्वास, सिर का दर्द, अनिद्रा आदि।

गरीब का पक्ष ही सरकार का पक्ष है ।

पहल सरकार की
सेवा जनता की

किसान भाइयों के लिए—

गन्ने का अधिक दाम तथा किसान मित्र सेल की स्थापना ।

हरिजन भाइयों के लिए—

निजी पूँजी के बिना भी अपने उद्योग धन्धे चलाने की व्यवस्था तथा सबसे बड़ी १८४ करोड़ रुपये की विशेष योजना—पहले से ६ गुनी बढ़ी

बृद्ध लोगों के लिए—

पेंशन की राशि ५० रुपये से बढ़ा कर ६० रुपये

मजदूर भाइयों के लिए—

सरकारी कारखानों में प्रबन्ध में भागीदारी सुनिश्चित और खण्डसारी तथा अन्य मजदूरों की श्रुततम मजदूरी निर्धारित

सफाई मजदूरों के लिए—

जब तक इन्हें वेतन नहीं तब तक कोई दूसरा खर्च नहीं

बिद्यार्थियों के लिए—

पाँच करोड़ रुपये का विशेष कोष तथा चार साल में पहली बार परीक्षाओं का समय से संचालन

अल्प संख्यकों के लिए—

१९८१ के अन्त तक उर्दू को दूसरी राज्य भाषा का दर्जा तथा राज्य एकीकरण समिति का गठन

कर्मचारियों के लिए—

संयुक्त परामर्श-दात्री समिति का गठन, अन्तरिम सहायता तथा नकदीकरण अवकाश नियम और उबार

शिक्षकों के लिए—

६००० उर्दू शिक्षकों का स्थायीकरण

वर्ष एक-उपलब्धियां अनेक

सूचना एवं जन सम्पर्क विभाग, उत्तर प्रदेश द्वारा प्रसारित

सर्व सुलभ घरेलू वस्तुओं द्वारा विभिन्न रोगों की स्वानुभूत चिकित्सा

आयुर्वेदाचार्य श्री पं० करुणाशंकर वाजपेयी आयुर्वेद रत्न, ए० एस० बी०,
अध्यक्ष—श्री बजरंज व्याधि मोचन फार्मसी, महारानीगंज, (रायबरेली) उ० प्र०



१. तुरन्त सिचकी बन्द—एक बड़ी झलायची को छिलके सहित कूटकर पिलाने से हिचकी तुरन्त बन्द हो जाती है।

२. खूनी पेचिश—सीफ १ तोला, बेलगिरी १ तोला, घनियां १ तोला, मिश्री ३ तोला। इन सबका चूर्ण तैयार कर लें। इसमें से ६-६ माशा की मात्रा में दिन में ३ बार ठण्डे पानी के साथ लें। खूनी पेचिश के रक्त बन्द करने के लिए अचूक औषधि है।

३. जीर्ण एवं दुस्साध्य श्लीषद नाशक योग—एरण्ड-मूल, काले घतूरे के पत्र, सम्भालू के पत्ते, पुनर्नवा, सह-जन की छाल और सरसों समभाग पीसकर लेप करने से यह नष्ट हो जाता है।

४. शीघ्र पतन—लजालू के बीज २ माशा, मिश्री ६ माशा यह एक मात्रा है। इस प्रकार प्रातः सायं लगातार १५ दिन सेवन करने से कुदरती रुकावट पैदा होती है।

५. स्तम्भन कारक योग—काले घतूरे के बीजों का तैल (पाताल यन्त्र द्वारा निकाला हुआ) पैर के तलुओं में मालिश कर स्त्री सम्भोग करने से बहुत स्तम्भन होता है।

६. बड़ी दुद्धी की जड़ को चबाकर रस को मुंह में २-४ मिनट रखने पर कृमि नष्ट होकर वेदना शीघ्र शांत हो जाती है।

७. बिच्छू का विष तुरन्त गायब—रीठे के फल के छिलके को तम्बाकू की तरह चिलम में रखकर पिलाने से बिच्छू का जहर तत्काल उतर जाता है।

८. दन्त शूल पर—अगर किसी की डाढ़ में कीड़ा लग गया हो तो हूलहूल के पत्तों का रस दाढ़ में भर देने से कीड़ा मर जाता है और दर्द भी दूर होता है।

९. १५ मिनट में बन्द पेशाब जारी—खरबूजे का छिलका २५ से ५० ग्राम तक ठंडे जल में महीन पीस छान कर पिलाने से १५ मिनट में पेशाब हो जाता है। यदि आधा घण्टे तक पेशाब न हो तो पुनः दे सकते हैं।

१०. सबल वायु नाशक अनुभूत प्रयोग—पीली हरड़ का छिलका १ छटांक, घनियां १ छटांक, मिश्री १/२ छटांक सबको एक में कूट छानकर शीशी में रख लें। प्रातः सायं ६ माशा चूर्ण जल के साथ सेवन करें। १५ दिन में लगातार सेवन करने से अचूक लाभ होता है।

११. किसी अंग से बहता हुआ रक्त तत्काल बन्द—बरगद के दूध की ५-७ बूंदें दिन में ३-४ बार देने से रक्त का बहना फौरन बन्द हो जाता है।

१२. अण्डकोषों की सुजन—एरण्डी (एरण्ड) की गिरी को भेड़ के दूध में पीसकर अण्डकोषों में लेप करने से सुजन शीघ्र नष्ट हो जाती है।

१३. दो तीन दिन में खाज खुजली से आराम—नीबू के रस में हरताल और गन्धक घोटकर खाज में लगाने से दो तीन दिन में खाज खुजली में आराम हो जाता है।

१४. कंठ स्वर के बैठ जाने पर—झरबेर की छाल का टुकड़ा मुख में रखकर चूसते रहने से २-३ दिन में लाभ हो जाता है।

१५. पका फोड़ा फोड़ना—आक के दूध में थोड़ी सज्जी और चूना मिलाकर लेप करें। शीघ्र ही वगैर शस्त्र के वह फूटकर बहने लगता है।

१६. आधा शीशी का दर्द—कटहल की जड़ का काड़ा बनाकर नाक से ४-५ बूंद सुकड़ने से आधा शीशी रोग एक ही दिन में आराम हो जाता है।

१७. कैंसर कल्याण देबसेट (बटी)—सोमाञ्जन मूल

त्वक् घनसत्व १ भाग, घमासा घनसत्व १ भाग, स्वर्णक्षीरी घनसत्व १ भाग, आकाशबल्ली घनसत्व १ भाग, कांचनार गुग्गुलु १ भाग। इन पांचों चीजों को समान मात्रा लेकर पत्थर के खरल में खूब घोंटें। अच्छी तरह से घुट जाने पर कांचनार की छाल के स्वरस की ३ भावनायें देकर छाया शुष्क कर १०-१० ग्रेन की मशीन से टेबलेट बनवा लें या गोली बनवा गजवूत कार्क की शीशी में रख लें।

सेवन विधि—एक-एक टेबलेट दिन में ३ बार (सुबह, दोपहर, शाम) गाय या बकरी के दूध के साथ सेवन करें।

गुण—इसके सेवन करने से अर्बुद (Cancer), कंठ-माप्ता, गलगंड, गंडमाला, अपच, विद्रधि, रक्तविकार आदि विकारों में आश्चर्यजनक लाभ होता है। दो सप्ताह के सेवन करने से ही रोगी में आश्चर्यजनक लाभ प्रतीत होने लगता है। यह टेबलेट सभी प्रकार के कैंसर रोग पर अत्यन्त उपयोगी है।

नोट—साथ में शोभाजन सूचीविष हर तीसरे दिन फूले की गहरी मांसपेशी गत देने से यह हठौला रोग शीघ्र काबू में आने लगता है। पध्य—रोगी को गाय या बकरी के दूध या फलों पर रखना चाहिए।

१८. दस्त शीघ्र बन्द—बबूल के बाँड़े को १ तोला की मात्रा में लेकर जल के साथ घोटकर पिलाने से दूसरी दवाओं से न बन्द होने वाले दस्त शीघ्र बन्द हो जाते हैं। दिन में दो-तीन बार सेवक करावें।

१९. पेरों की विवाई पर—पीपल बृक्ष की छाल का रस अथवा दूध लगायें।

२०. किसी भी प्रकार के जहर के असर को नष्ट करना—४ मासे नौसादर जल के साथ खाने से सभी प्रकार के जहर का असर समाप्त हो जाता है।

२१. श्लीपद (फोल पांव) पर—संहिजन की जड़ की छाल पानी में पीसकर गरम कर लेप करने से श्लीपद में शीघ्र फायदा होता है।

२२. दांत का दर्द—संहिजन का गोंद दांत के नीचे रखने से दर्द फौरन दूर हो जाता है।

२३. पुराना कर्णश्राव—हल्दी चुर्ण १ भाग और सफेद फिटकरी चुर्ण २० भाग दोनों को घोट पीसकर पाउडर बना लें। नली द्वारा कान में छिड़कने से प्राचीन कर्णश्राव शीघ्र नष्ट हो जाता है।

२४. दाद—बबूल के फूलों को पुराने सिरके में पीस कर लगाने से दाद जड़ से नष्ट हो जाती है।

२५. सेहूआ सुधार—गन्धक और यवक्षार को सरसों के तेल में मिलाकर लेप करने से (सिध्म) सेहूआ शीघ्र नष्ट हो जाता है।

२६. शरीर में बड़ी हुई भेद कम करना—१ तोला भर अदरक के स्वरस की १ तोला भर शहद के साथ मिलाकर प्रतिदिन पीना चाहिये।

२७. दाढ़ दांत के दर्द पर जादू—प्याज के बीज चिलम में रखकर घूँघ्रपान कराने से या बीजों को दाढ़ में दबाकर रखने से तुरन्त दर्द बन्द हो जाता है।

२८. भयानक नकसीर—गूलर की छाल पानी में पीसकर माथे पर लगाने से या तालू पर बांधने से बकसीर शीघ्र बन्द हो जाती है।

२९. असाध्य हिचकी बन्द—बहेड़े का पिसा छना चूण ४ भागा १ तोला शहद में मिलाकर चाटने से असाध्य हिचकी में भी आराम हो जाता है।

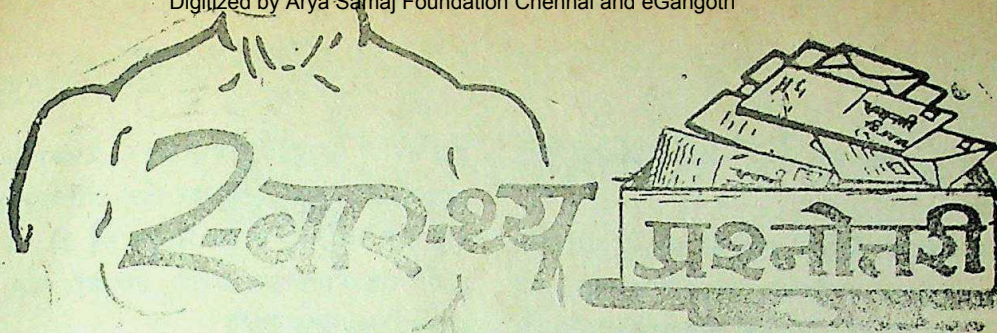
सावधान

कतिपय ग्राहकों के पत्रों से ज्ञात हुआ है कि हमको भेजे गये औषधियों एवं चिकित्सोपयोगी उपकरणों के आदेश पत्रों का सामान उन्हें अन्यत्र कहीं से प्राप्त हुआ है। आप कोई भी सामान मंगायें उसका बिल मिलने पर देख लें कि उस पर निर्मल आयुर्वेद संस्थान, दाऊ मेडीकल स्टोर्स छपा है या नहीं। तथा वी. पी. कहां से आई है। हमने इन्हीं संस्थाओं से वी. पी. भेजी हैं या भेजेंगे। इसके अतिरिक्त किसी अन्य फर्म से आपको वी. पी. मिलती है तो उसे हरगिज न छुड़ायें तथा उनका बिल आदि जो आपको मिले हैं वे हमें रजिस्टर्ड लिफाफा द्वारा भेज दें। इस सूचना के पढ़ने से पहले ही आप किसी ऐसी ही जाल-साजी का शिकार हो गये हैं तो आपको जो बिल आदि मिले हैं वे पूर्ण विवरण के साथ रजिस्टर्ड लिफाफा द्वारा अवश्य भेज दें। आपके सहयोग के लिए आभारी रहेंगे।

दाऊदयाल गर्ग सम्पादक—“धन्वन्तरि”

निर्मल आयुर्वेद संस्थान, अलीगढ़

दाऊ मेडीकल स्टोर्स, अलीगढ़



कविराज श्री वैद्य वेदप्रकाश गुप्ता जी० आई० एम० एम०, ६-ई कृष्णानगर, नई दिल्ली-५१

प्रश्न—अमरजीत खोसला फिरोजपुर से लिखते हैं कि मुझे शीघ्रपतन का रोग है आयु ३० वर्ष है, वीर्य निकलते समय बहुत तकलीफ होती है। ऐसा अनुभव होता है जैसे आग लग गई हो।

उत्तर—उष्ण कटु पदार्थों के खाने, अजीर्ण, अनिद्रा, अधिक मैथुन की इच्छा या चिन्ता से वीर्य पतला होकर उत्तेजना होने पर निकल जाता है तब ऐसा अनुभव होता है जैसे कोई गरम पानी निकल रहा है।

स्वर्ण बंग १ रस्ती, हल्दी चूर्ण १ भागा, दोनों को मिलाकर मधु से प्रातः सायं लें। उसके बाद दुध पीयें।

रात्रि को मुलहठी, मक्खन में मिलाकर खावें। ऊपर से अल्प दुध लें।

पथ्य—जी, चना, मूंग, अरहर, तक, करेला, जामुन, खजूर खावें।

प्रश्न—अवधेश कुमार साहेबवरी सैदपुर बदायूँ से लिखते हैं कि मेरे पिता जी की आयु ६० वर्ष की दायें हाथ (बाजू) और पांव (टांग) में पक्षाघात हो गया है। एक वर्ष हो गया, अवस्था बहुत चिन्ताजनक हो जाने पर उन्हें निम्न औषधियों का प्रयोग करवाया। इससे कुछ बोलने लगे हैं।

१. बृहत् वातचिन्तामणि रस, बृहत् कस्तूरी भैरव रस, योगेन्द्र रस, मुक्तापिष्टी सबको मिलाकर मधु से खाने को। २. महानारायण तैल, प्रसारिणी तैल मिलाकर ३. अश्वगन्धारिष्ट, दशमूलारिष्ट भोजन के पश्चात्। कृपा आप चिकित्सा बतायें।

उत्तर—मेरे अनुभव में पक्षाघात के रोगी को जब तक सान्त्विक शान्ति प्राप्त नहीं होती तब तक कोई भी

औषधि पूर्ण लाभ नहीं पहुंचाती। चिकित्सा ठीक ही कर रहे हैं। इसमें नं० १ की औषधि मधु से देने के पश्चात् महारास्तादि काढ़ा १ तोला और दें। वृ० वात चिन्तामणि रस, योगेन्द्र रस आदि मूयवान औषधियां हैं। किसी विश्वस्त स्थान से यथा निर्धार आयु. संस्थान से मंगायें।

पथ्य—गाय का दूध, घी, पुराने चावल, गेहूं, तिल, लहसुन, मूंग, खजूर, मुनक्का, अंजीर, पूर्ण विश्राम, तैल भर्दन, उष्ण जल मानसिक शक्ति।

अपथ्य—रूख जल, परिश्रम, आलू, मूली, गाजर, पत्र शाक, शीतल जल।

प्रश्न—श्री विहारी लाल नागपाल दिल्ली लिखते हैं मुझे पांच साल से हाईड्रोसील (फोटों में पानी भर जाना) की तकलीफ है। डाक्टर लोग इसका आपरेशन करवाने को कहते हैं। कृपया कोई आयुर्वेदिक योग बतायें।

उत्तर—आयुर्वेद में सूत्रतावृद्धि (हाईड्रोसील) कहा जाता है। इसकी चिकित्सा शल्यकर्म (आपरेशन) द्वारा ही सम्भव है।

कुछ लाभार्थ—नारायण तैल की वस्ति सप्ताह में दो बार लें। बकरी के दूध में गेहूं पीसकर गरम करके सेंक करके बांध दें। वातारि रस (वृद्धि रोगाधिकार) ४ रस्ती सोंठ मिला एरण्डमूल क्वाथ से लें।

पथ्य—पुराना चावल, गेहूं, जी, मूंग, परबल, करेला, मट्ठा, गोदुग्ध, घी।

अपथ्य—वैशाखरोध, गरिष्ठ पदार्थ।

प्रश्न—चन्द्रिका प्रसाद तिवारी जेवरा मिवासी ने अपनी माता और पत्नी के रोग के सम्बन्ध में लिखा है। फोस्टकार्ड में जो कुछ लिखा है वह संक्षिप्त है उससे रोग निदान सम्भव नहीं हुआ। रोग के सम्बन्ध में लक्षण चिकि-

त्सा रोगी की भूख और टट्टी इत्यादि के पूर्ण विवरण लिखे जाने चाहिये ।

आपकी धर्मपत्नी जिसकी आयु ३५ वर्ष है उसे शीत लगकर उवर आने पर कमोक्कीन आदि दिया गया । यह भोजन से पूर्व ही बी गई । अब गर्मी से आंख चकाचौंध सी लगती है, खुहार सा लगता है, नीबू कुनकुना जल देने से आराम मिलता है । अतः उपचार लिखें जिससे गर्मी, सिर चकराना बन्द हो जाये ।

उत्तर—आपने यह नहीं लिखा कि भूख कैसी लगती है टट्टी कैसी आती है । कमोक्कीन के उपद्रवों की शान्ति के लिए एक दिन सम्पूर्ण दूध ही पीवें । पानों की प्यास लगने पर भी दूध या फलों का रस पिलायें । एक या दो दिन में कमोक्कीन का प्रभाव दूर हो जायेगा ।

प्रश्न—श्री कासमअली बेहलोम लिखते हैं कि ३० वर्ष के एक रोगी के पेट में हर समय दर्द रहता है इसके साथ ही कमर, जोड़ों और घुटनों में भी होता रहता है यह दर्द जग उठने लगता है तब अधिक होता है भोजन के पश्चात् टट्टी जाना पड़ता है मल थोड़ा सा ही आता है थोड़ी देर के पश्चात् पुनः टट्टी जाने की इच्छा होती है ।

उत्तर—रोगी को संयद्गुणी रोग है । यह मृदाग्नि के कारण है । इस रोग में दिन में हाजत बनी रहती है, रात में नहीं होती, वेग बहुत आते हैं भोजन करते ही वेग आरम्भ हो जाता है, शरीर दुर्बल और रक्तहीन होता है कमर में दर्द होना उसके पश्चात् आंख जब रोग अधिक दिन का हो जाये तो जोड़ों में जाकर उनमें भी दर्द शुरू कर देता है ।

चिकित्सा हेतु—जल परिवर्तन, अर्थात् आबोहवा का बदलना आवश्यक है तभी औषधि के प्रयोग का लाभ होगा । मुख्य कार्य आस का पाचन करवाना है जो अग्निबर्धक औषधियों द्वारा ही सम्भव है । शारीरिक एवं मानसिक विश्राम करें ।

चित्रकादि वटी २ से ४ गोली, तक दिन में तीन बार मुख में रखकर चूस लें या जल से लें । प्रातः सायं खाली पेट मधु से ४ रत्ती की मात्रा । पंचामृत पर्यंटी २ रत्ती, प्रवालपिष्टी २ रत्ती मात्रा ४ रत्ती । दूध लेकर दही बना लें । उस दही का मट्ठा बना लें । मट्ठा बनाने का तरीका एक पाव दही में १ छटाक जल मिलाकर बिलोयें उसमें

एक चम्मच लवणमास्कर मिला लें उसका सेवन पर्यंटी के पश्चात् करें । मट्ठा की मात्रा दिन प्रतिदिन बढ़ाते जायें । यदि पाव भर दही अधिक मालूम पड़े तो उसे दो बार लें अर्थात् एक मात्रा का अन्तर डालकर प्यास लगने पर उवाला हुआ जल पीवें ।

पथ्य—मूंग का यूप, परबल, कच्चे केला की सब्जी, गाय या बकरी का दूध, अनार, सेव, जामुन, खजूर, जीरा, सोंठ, कालीमिर्च, इन्द्र जौ, ईसवगोल, सैधानमक ।

अपथ्य—मिर्च, खट्टा, अधिक नमकीन, कांजी, चाय, काफी, अरबी, आलू मिण्डी, शराब इत्यादि बन्द करें ।

प्रश्न—जयप्रकाश वेगुलराय (बिहार) लिखते हैं मैं २८ वर्ष का दुबला पतला युवक हूं ३ (तीन) मास से खुजली से पीड़ित हूं खुजली वाला स्थान लाल रंग के पीव से युक्त होता है । एलोपैथी चिकित्सा करवाने तथा पीली कटैया के तैल से ठीक हो गया परन्तु पूरा ठीक नहीं हुआ सारिवाद्यासव पी रहा हूं, शरीर में बराबर खुजलाहट होती रहती है । सिर के बाल भी सफेद हो रहे हैं उसे काला करने का स्थाई उपचार लिखें ।

उत्तर—कण्डु रोग की परीक्षित अनुभव वाली औषधि एकमेव पथ्य है ।

अधिक मात्रा में गुग्गुल, घृत, तैल, मरिच, लवण, अजीर्ण, विवन्ध, धूप में चलना, नया अन्न, अम्ल रस द्रव्यों का प्रयोग, भय से पीड़ित कारण है जिनको दूर करने से साधारण चिकित्सा से ही कण्डु दूर हो जाती है । कण्डु में त्वचा और रक्त ही प्रधान दुष्य है दोष कफ पित्त है । दोषों के धातुओं में रक्तगत होने के कारण खुजली और पूय होती है । इसकी चिकित्सा में तैल मर्दन औषधि सिद्ध और पथ्य पर पर्याप्त ध्यान देना उचित है ।

लेप—आंवलासार मन्धक, कपूर, तुल्य १०० पानी से घृत को धोकर उसमें सभी औषधियां मिला लेप करें । २ घण्टा पश्चात् स्नान करें । साबुन न लगायें ।

गन्धक रसायन, प्रवालपिष्टी २-२ रत्ती-१ मात्रा-मधु से प्रातः सायं लें । रात्रि सोते समय कंटकारी तैल की मालिश करें ।

पथ्य—पुराना चावल, पुराना गेहूं, जौ, मूंग, अरहर, परबल, करैला, गोदुग्ध, घृत, ककड़ी, खीरा का सेवन करें ।



डा० गुलशन कुमार आचार्य, पालमपुर (हिमाचल प्रदेश)

प्रश्न—१. बोर्ड आफ इलैक्ट्रो होम्योपैथिक सिस्टम आफ मेडीसिन पटना, बिहार की रजिस्ट्रेशन किन-किन प्रदेशों में चिकित्सा करने के लिए मान्य है ?

१. मैं बोर्ड आफ इलैक्ट्रो होम्यो० सिस्टम आफ मेडीसिन पटना से पंजीकृत हूँ। मेरा पंजीकरण सन् १९८० में हुआ है। क्या मैं महाराष्ट्र में प्रेक्टिश कर सकता हूँ ?

३. राजकीय आयुर्वेदिक एण्ड यूनानी चिकित्सा परिषद् बिहार प्रदेश पटना से प्राप्त प्रमाणपत्र कौन कौन से राष्ट्रों में प्रेक्टिश करने को मान्य हैं ?

—वैद्य भंवरसिंह राजपूत, वज्राज टेम्पो. लि.

पो० आकुर्डो, पुणे-३५ महाराष्ट्र

उत्तर—१. बोर्ड आफ इलैक्ट्रो होम्यो० सिस्टम आफ मेडीसिन पटना की रजिस्ट्रेशन कोई मान्यता नहीं रखती है अतः इसके आधार पर किसी भी प्रदेश में चिकित्सा कार्य नहीं किया जा सकता है।

२. नहीं, अपने प्रथम प्रश्न का उत्तर देखिये।

३. प्रमाणपत्र से अभिप्राय आपका सूचीकृत प्रमाणपत्र से और राष्ट्रों से तात्पर्य प्रदेशों से प्रतीत होता है। इसका उत्तर यह है कि बिहार बोर्ड से सूचीकृत होने पर आप केवल बिहार प्रदेश में चिकित्सा करने के लिए अधिकृत मात्र है, दूसरे प्रदेश में नहीं।

प्रश्न—१. दी नेशनल मेडिकल कालेज एण्ड हास्पिटल भोलानगर, शाहदरा, दिल्ली-३२ के प्रमाणपत्र इन होम्योपैथिक, आयुर्वेदिक, एलोपैथिक व रजिस्ट्रेशन को केन्द्र तथा प्रदेश सरकारें मान्यता देती हैं या नहीं ? यह कालेज चार सौ रुपये शुल्क लेकर अनुभव के आधार पर पंजीकरण करता है। क्या यह रजिस्ट्रेशन सही है ?

२. आयुर्वेदरत्न के आधार पर पंजीकरण के पश्चात् क्या अन्य किसी प्रकार की औपचारिकता औषधालय खोलने के लिए पूर्ण करना आवश्यक है। इन औपचारिकतानों को

पूर्ण करने के लिए किस विभाग या अधिकारी से सम्पर्क करना होगा ? —डा. जे. पी. पटवारी रानी बाजार, बीकानेर

उत्तर—१. इस कालेज को कोई मान्यता नहीं है, इस द्वारा प्रदत्त प्रमाणपत्र या रजिस्ट्रेशन सही नहीं है।

२. कैसी औपचारिकतायें यह आपने स्पष्ट नहीं लिखा। चिकित्सा कार्य करने के लिए पंजीकृत होना ही पर्याप्त है। परन्तु जो स्थान व्यवसाय अधिनियम के अन्तर्गत आते हैं, वहाँ पर औषधालय (क्लिनिक) खोलने पर शाप एक्ट के अधीन अपने औषधालय का रजिस्ट्रेशन कराना होता है जिसका साधारणतः शुल्क एक रुपया वार्षिक होता है इसके लिए आप अपने यहाँ के श्रम तथा व्यवसाय अधिकारी से सम्पर्क करें।

प्रश्न—मैं हिन्दी साहित्य सम्मेलन के हिन्दी विश्व-विद्यालय की आयुर्वेद उपाधि प्राप्त करना चाहता हूँ, इसके लिए क्या करना है ? —मुशीलकुमार बी० ए०, चम्बा

उत्तर—इसके लिए आप परीक्षायोजक, हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग या प्राचार्य-भारतेन्दु महाविद्यालय पालमपुर हिमाचल प्रदेश को लिखकर विस्तृत जानकारी अर्जित करें।

प्रश्न—अधिकांश आयुर्वेद चिकित्सक अपने नाम के साथ अंग्रेजी में Ay. R या R. M. P. लिखते हैं। कृपया बताने का कष्ट करें कि यह उपाधि किन के लिये है ? मैं भी आयुर्वेद चिकित्सक हूँ। क्या मैं भी यह उपाधि प्राप्त कर सकता हूँ यह उपाधि कैसे मिलती है जानकारी दें।

—लाल वसुन्धर सिंह, सधवानी (बिलासपुर)

उत्तर—जो भी व्यक्ति सरकारी बोर्ड-परिषद से चिकित्सक के रूप में पंजीकृत है वह अपने नाम के साथ Ay. R या R. M. P. या R. A. P. या R. M. P. (Ay) लगा सकते हैं। यह उपाधि नहीं है। यह तो सरकार से पंजीकृत होने का सूचक है। इन असरों से अभिप्राय निम्न है—

Ay. R.—रजिस्टर्ड इन आयुर्वेद

R. M. P.—रजिस्टर्ड मेडिकल प्रेक्टिशनर

R. A. P.—रजिस्टर्ड आयुर्वेदिक प्रेक्टिशनर

R. M. P. (Ay)—रजिस्टर्ड मेडिकल प्रेक्टिशनर इन आयुर्वेद ।

प्रश्न—१. मैं वैद्य विहार में उत्तीर्ण हूँ, मुझे अस्थायी प्रमाणपत्र मिल चुका है । क्या इस आधार पर मेरा रजिस्ट्रेशन हो सकता है ?

२. क्या मैं मध्यप्रदेश में पंजीकृत होकर महाराष्ट्र में चिकित्सा कार्य कर सकता हूँ ?

—मोहनलाल एस० सोलानी, रायपुर—मध्यप्रदेश

उत्तर—१. हाँ, आपका पंजीकरण राजस्थान अथवा मध्य प्रदेश में हो सकता है । शीघ्र करवा लीजिये ।

२. नहीं, महाराष्ट्र में चिकित्सा कार्य करने के लिए महाराष्ट्र बोर्ड से पंजीकरण कराना अनिवार्य है ।

प्रश्न—१. दिल्ली, कानपुर, पटना, बरेली आदि में घन लेकर उपाधियाँ तथा रजिस्ट्रेशन प्रमाणपत्र बिलाये जाते हैं, क्या यह शासन द्वारा मान्य होते हैं ।

२. हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग की सही जानकारी दें । —जीवानन्द वैद्य, प्रताप बाजार अमृतसर

उत्तर—१. नहीं ।

२. श्री परीक्षायोजक, हिन्दी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग, उत्तर प्रदेश अथवा प्राचार्य, भारतेन्दु महाविद्यालय पालमपुर से सम्पर्क कर सही जानकारी प्राप्त करें ।

प्रश्न—६ मैं विहार स्टेट से सूचीबद्ध हूँ । अब मैं अपना पंजीकरण कराना चाहता हूँ कृपया विधि बतायें ?

२. मैं विहार के सूचीकरण के आधार पर हिमाचल प्रदेश में अपना पंजीकरण कराना चाहता हूँ । कृपया जानकारी दें, कि इस हेतु प्रार्थनापत्र किसे भेजना है ?

—डा० खेमसिंह राणा

स्थान स्पष्ट नहीं, तह० नूरपुर (कांगड़ा) हि० प्र०

उत्तर—१. कृपया इसके लिए निबंधक, विहार बोर्ड को लिखें, परन्तु मेरे विचार में सम्प्रति सूचीबद्धता के आधार पर पंजीकरण होना बन्द है ।

२. विहार के आधार पर आपका हिमाचल प्रदेश में पंजीकरण नहीं हो सकता है, अतः प्रार्थनापत्र भेजने का प्रश्न ही नहीं उठता है ।

प्रश्न—मैं मध्य प्रदेश के वन विभाग में सेवारत हूँ । मेरी शिक्षा बी० ए० है । मेरी हादिक अभिलाषा आयुर्वेद रत्न करने की है । परीक्षा सम्बन्धी जानकारी दें ।

—एच० एस० सूर्यवंशी फारेस्टर, परासिया (छिन्वाड़ा)

उत्तर—आप अपनी हादिक अभिलाषा सहर्ष पूर्ण कर सकते हैं, इसके लिए श्री परीक्षायोजक हिन्दी साहित्य सम्मेलन प्रयाग अथवा प्राचार्य—भारतेन्दु महाविद्यालय पालमपुर हिमाचल प्रदेश से सम्पर्क करें ।

प्रश्न—१. मैंने सन् १९७६ में कानपुर यूनिवर्सिटी से बी० ए० एम० एस० उत्तीर्ण कर चिकित्सा कार्य कर रहा हूँ । मेरा विचार फार्मसी चलाने का है । क्या मैं इस व्यवसाय में सफल हो सकूँगा ?

२. आयुर्वेदिक औषधियाँ निर्माण के लिए क्या कोई लाइसेंस लेना होता है ? यदि हाँ, तो उसका शुल्क क्या है और इस हेतु किसको आवेदित करना है ? पूरी जानकारी दें । —डा० विजयकुमार सिंघल लखसर (सहारनपुर)

उत्तर—१. आप फार्मसी चला सकते हैं सफलता आपकी लगन, अधिक परिश्रम तथा औषधियों की शुद्धता, गुणवत्ता पर निर्भर है ।

२. जी हाँ, लाइसेंस है जिसका वार्षिक शुल्क ६०) रु० है इसके हेतु आपको निम्न पते पर आवेदन करना होगा—असिस्टेंट ड्रग्स कंट्रोलर आयुर्वेद यूनानी सेवा निदेशालय, आयुर्वेद भवन, सरोजनी नायडू रोड, लखनऊ ।

—आरोग्य सेवा प्रसाद रूप औषधि कोर्स—

श्री ऋषि आरोग्य सेवाश्रम विशुद्ध आयुर्वेदिक पद्धति से अपने रोगियों की सेवा सफलता पूर्वक करता है । दूर के रोगियों के आग्रह पर औषधि कोर्स तैयार किये हैं, जो डाक द्वारा भेजे जा सकते हैं । रोगी अपना हाल लिखकर भेजें अथवा सूचीपत्र से देखकर दवा मंगावें । चिकित्सक वधुओं को अधिक माल व कमीशन नहीं मिलेगा । पत्र व्यवहार हेतु बीस पैसे का टिकट तथा पेशगी पांच रुपया सहित आर्डर कर सकते हैं ।

श्री ऋषि आरोग्य सेवाश्रम

नसराना, पो० सासनी (अलीगढ़) उ० प्र०



आयुर्वेदिक चिकित्सा पद्धति को "पारम्परिक चिकित्सा" कहना समाप्त

भारत सरकार के अवसर सचिव श्री हिम्मत सिंह बकालिया ने अपने पत्र संख्या आर १२०११/३/८०-आई० एस० एम० दिनांक १५ जुलाई १९८१ के द्वारा जोकि सेंट्रल काउन्सिल आफ इण्डियन मेडिसिन, १-ई/६ स्वामी रामतीर्थ नगर, नई दिल्ली-५५ के रजिस्ट्रार श्री सतीश शर्मा द्वारा प्राप्त हुआ है, सूचित किया है कि आयुर्वेद, सिद्ध, यूनानी एवं होमियोपैथी चिकित्सा पद्धतियों तथा प्राकृतिक चिकित्सा और योग विद्यओं को अब से फिर "भारतीय चिकित्सा पद्धति तथा होमियोपैथी" कहा जायेगा। इस प्रकार से आयुर्वेद से द्वेष रखने वाले कतिपय एलोपैथिक डाक्टरों की अधिकारियों के साथ मंजना एवं प्रभाव से आयुर्वेद के ऊपर जो काली छाया छाती प्रारम्भ हुई थी वह हमारे नेतागणों, अधिकारियों के प्रयास से तथा अनेकों वैद्य सभाओं के आन्दोलनों से हट गई है। भारत सरकार के इस कदम का हम स्वागत करते हैं।

—सम्पादक 'धन्वन्तरि'

भारतीय द्रव्य गुण परिषद्

भारत में सर्वप्रथम "भारतीय द्रव्यगुण परिषद्" का गठन किया गया है। इस परिषद् के माध्यम से भारतीय वनोपधियों के अनुसन्धान, मानकीकरण एवं विनिश्चय तथा वाङ्मयात्मक अध्ययनों पर समयानुसार विचार कर इसके प्रचार एवं प्रसार में सहायता मिलेगी। आयुर्वेद चिकित्सा पद्धतियों पर कार्य करने वाले समस्त वैज्ञानिकों के विचार-विनिमय का एक मंच होगा।

आयुर्वेद के मूर्धन्य विद्वान् आचार्य विश्वनाथ द्विवेदी एवं आचार्य प्रियव्रत शर्मा जी के नेतृत्व में परिषद् का गठन किया गया। भारतवर्ष के समस्त प्रान्तों के द्रव्यगुण विषय के गणमान्य लोग इसके सदस्य मनोनीत किये गये हैं।

परिषद् की प्रथम बैठक द्रव्यगुण विभाग, चिकित्सा विज्ञान संस्थान, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय में सम्पन्न

हुई। परिषद् के प्रारम्भिक सदस्यों का चयन किया गया, जो कि निम्नलिखित हैं—

अध्यक्ष—आचार्य विश्वनाथ द्विवेदी (वाराणसी)

मंत्री—डा० झारखण्डे ओझा (वाराणसी)

कोषाध्यक्ष—डा० सत्यनारायण सुमन (वाराणसी)

सम्पर्क मंत्री—डा० भगवान सिंह

सदस्य—

१. प्रो० प्रियव्रत शर्मा (वाराणसी)

२. डा० कैलाशपति पाण्डे (वाराणसी)

३. डा० राजनारायण सिंह (लखनऊ)

४. डा० नित्यगोपाल बन्धोपाध्याय (पटना)

५. डा० रामपाल शास्त्री (जयपुर)

६. डा० विद्यापति जोशी (हरिद्वार)

७. डा० रामतीर्थ गोयल (पटियाला)

८. डा० रामेश्वर पाण्डे (नागपुर)

९. डा० विनोद कुमार जोशी (वाराणसी)

१०. डा० सत्यदेव दुबे (वाराणसी)

११. डा० गुरुप्रसाद शर्मा (वाराणसी)

वैद्यराज श्री पिण्डावाला प्रान्तीय आयुर्वेद मण्डल के अध्यक्ष निर्वाचित

उज्जैन—मध्य प्रदेशीय आयुर्वेद मंडल के अध्यक्ष पद पर उज्जैन के सुप्रसिद्ध चिकित्सक, श्री धन्वन्तरि आयुर्वेद चिकित्सा महाविद्यालय के संस्थापक एवं भूतपूर्व प्राचार्य वैद्यराज डा० कृष्णचन्द पिण्डावाला ए० एम० एस०, आयुर्वेदाचार्य के निर्वाचन पर नगर के गणमान्य नागरिक आयुर्वेद के स्नातकों व शिक्षकों तथा आयुर्वेद, होम्योपैथी और एलोपैथी के चिकित्सकों द्वारा उन्हें हार्दिक बधाइयाँ दी गईं तथा पुष्प मालाओं से अभिनन्दन किया गया।

आप भारतीय चिकित्सा केन्द्रीय परिषद्, भारतीय चिकित्सा एवं होम्योपैथी की केन्द्रीय अनुसन्धान परिषद्, काउंसिल आफ स्टेट बोर्ड्स एण्ड फेकल्टीज आफ इण्डियन मेडिसिन, अ० मा० चिकित्सक परिषद्, अ० मा० आयुर्वेद

महा सम्मेलन की स्थाई समिति, नि० भा० आयुर्वेद विद्यापीठ की केन्द्रिय समिति, आल इण्डिया नेशनल इन्टीग्रेटेड मेडीकल एसो० की केन्द्रीय तथा प्रांतीय कार्यकारिणी समिति, म० प्र० देशी औषधि परिषद् (म० भा० क्षेत्र) म० प्र० आयुर्वेद तथा यूनानी चिकित्सा पद्धति एवं प्राकृतिक चिकित्सा बोर्ड, मध्य प्रदेशीय आयुर्वेद मण्डल, म० प्र० शासकीय आयुर्वेद महाविद्यालय शिक्षक एसो०, उज्जैन जिला आयुर्वेद मण्डल, श्री अवन्तिका देशी चिकित्सक मण्डल आदि अनेकों संस्थाओं में समय-समय पर अध्यक्ष, कार्यवाहक अध्यक्ष, उपाध्यक्ष, कोषाध्यक्ष, क्षेत्रीय सचिव, सचिव, संयुक्त सचिव, कार्यकारिणी समिति के सदस्य, उप समितियों के चेयरमैन, तथा मान्य सदस्य आदि के रूप में विभिन्न पदों पर कार्यरत रहे हैं।

साहित्यकार पत्रकार श्री मुकुल जी बिहार सरकार द्वारा राजकीय स्तर पर वरिष्ठ हिन्दीसेवी के रूप में सम्मानित

समाचार है कि डाक्टर द्वारा प्रकाशित 'आयुर्वेद-विकास के यशस्वी सम्पादक श्री शम्भूनाथ वलिवाल मुकुल' बिहार सरकार द्वारा राजकीय स्तर पर दीर्घकालीन हिन्दी सेवा के लिए राज्य के वरिष्ठ हिन्दी-सेवी के रूप में गत १० अगस्त १९८१ को एक मध्य समारोह में सम्मानित किये गये। सम्मान समारोह का आयोजन भारतीय नृत्यकला मन्दिर, छप्पूवाग पटना में किया गया था। बिहार सरकार के राजभाषा विभाग द्वारा आयोजित इस समारोह का उद्घाटन मुख्य मन्त्री डा० जगन्नाथ मिश्र ने किया। अध्यक्षता वयोवृद्ध स्वनामधेय साहित्यकार पं० छविनाथ पाण्डेय ने की। बिहार के राज्यपाल श्री किदवई ने माल्यार्पण बाद प्रमाणपत्र एवं अन्यान्य सामग्री प्रदान कर आपका हार्दिक सम्मान किया।

अ० भा० प्राकृतिक चिकित्सा परिषद्

अखिल भारतीय चिकित्सा परिषद् का १५वाँ वार्षिक अधिवेशन बंगलूर, हुबली में दिनांक ११-१२ व १३ अक्टूबर ८१ को होना निश्चित हुआ है। प्रतिनिधि शुल्क रु० ५ मात्र भेजकर आप नीचे बिस्ले पते से रेलवे कन्सेशन फार्म भेज सकते हैं—

मन्त्री—अखिल भारतीय प्राकृतिक परिषद्

१५-राजघाट कालोनी, जहाँ दिल्ली

इण्डियन एकेडमी आफ सेक्सोलौजी

उपरोक्त संस्था की स्थापना दिनांक ६ मई १९८१ को हुई और इसका प्रथम उद्घाटन समारोह बम्बई के वेस्टेण्ड होटल, बम्बई में हुआ। सर्व प्रथम श्री पी० पी० मिश्र ने मङ्गलाचरण किया। वैद्य सुरेश चतुर्वेदी ने संस्था के महत्त्व पर प्रकाश डाला। मुख्य अतिथि डा० बी० के० गोयल शेरीफ जी ने दो दिने जलाकर संस्था का उद्घाटन किया और अपने अध्यक्षीय भाषण में उन्होंने कहा कि इस प्रकार की संस्थाएँ समाज के अन्दर चल रही कुरीतियों को दूर करने में बड़ी ही सहायक हो सकती हैं और समाज को योग्य दिशा प्रदान कर सकती हैं। डा० के० के० दाते, डा० बी० एन० पुरन्दरे, डा० सी० एल० जवेरी, डा० जी० जे० भट्ट, डा० जे० डी० पाठक तथा डा० डी० डी० गोड ने संस्था के प्रति अपनी शुभकामनाएँ व्यक्त कीं और संस्था के महत्त्व पर प्रकाश डाला।

अन्त में डा० सी० एस० अग्रवाल ने अपने भाषण में संस्था के कार्यों की दिशा पर प्रकाश डालते हुए आज के युग में इसका महत्त्व प्रतिपादित किया।

शंकर स्वास्थ्य संस्थान

इलाहाबाद २० जून। गरीब जनता के लिए कम से कम मूल्य पर शुद्ध और प्रभावशाली आयुर्वेदिक औषधियाँ निर्माण करने के उद्देश्य से तुलारामबाग, इलाहाबाद में स्थापित श्री शंकर स्वास्थ्य संस्थान की औषधि निर्माणशाला का उद्घाटन विगत २६ जून ८१ को डा० दयाशंकर पाण्डेय, क्षेत्रीय आयुर्वेद अधिकारी द्वारा सम्पन्न हुआ।

युवा सच्राट श्री संजय गांधी की स्मृति में निःशुल्क परामर्श

२७ जून, १९८१ लखनऊ युवा आयुर्वेद डाक्टर एसोशियन उत्तर प्रदेश के प्रादेशिक उपाध्यक्ष डा० जगदीश प्रसाद अवस्थी ने एक प्रेस बिज्ञप्ति में बताया कि एसोसियेशन ने दो मास तक पेट के रोग और गुप्तरोगों से पीड़ित मरीजों की निःशुल्क परामर्श देगा।

तहसील आयु० सम्मेलन, जीन्द

आज दिनांक १४-६-८१ को त० आ० स० जीन्द का निर्वाचन वैद्य श्री रामजी की अध्यक्षता में हुआ निम्नलिखित पदाधिकारी तथा कार्यकारिणी चुनी गई—

प्रधान—वैद्य तारासिंह गायल जीन्द

कार्य
श्री
१.
२.
३.
४.
५.
६.
७.
८.
९.
१०.

के स
फार्मे
के अ
आयु
शर्मा
स्वयं
व्यक्त
चिकि
आयु
वेद

वेद्य
यदा

उपप्रधान—१. वैद्य रामचन्द्र आर्यजीन्द

२. वैद्य रमेशचन्द्र जींद

महामंत्री—वैद्य आदर्श कुमार गुप्ता जींद

संयुक्त मंत्री—वैद्य हवा सिंह राठी जलालपुरा

प्रचारमंत्री—वैद्य सत्यनारायण शर्मा, बरसाना

कोषाध्यक्ष—वैद्य कृष्णलाल कपूर जींद

लेखा परीक्षक—वैद्य मदन लाल पुरी जींद

कार्यकारिणी के ११ सदस्य चुने गये।

श्री धन्वन्तरि आयुर्वेद मण्डल, निहाल सिंह वाला

१. सरपरस्त—श्री वैद्य अवतार चंद शर्मा (विलासपुर)

२. प्रधान—श्री वैद्य जगरूप सिंह जी (धूकोट)

३. उपप्रधान—श्री वैद्य रामस्वरूप जी (माकिछके)

४. मंत्री—वैद्य हरबंसलाल जोशी (हिम्मतपुरा)

५. उपमंत्री—श्री जगरूपसिंह जी (रमाना)

६. खजंची—श्री रणजीत सिंह जी जोड़ा

७. प्रचार मंत्री—श्री गुरुदयाल सिंह जी (मीनीया)

कार्यकारिणी सदस्य

८. श्री वंशन सिंह जी (कल्याण)

९. श्री हरीसिंह जी (राजगढ़)

१०. श्री मुख्तियार सिंह जी चक्कर

वैद्य सभा, जबलपुर

स्थानीय वैद्य सभा एवं मध्य प्रदेश आयुर्वेद मण्डल के संयुक्त तत्वावधान में एक असाधारण बैठक नवशक्ति फार्मसी, ससना बिल्डिङ्ग में सम्पन्न हुई। जिनमें वैद्य सभा के अध्यक्ष कविराज डा० जी० पी० शुक्ल एवं अ० भा० आयुर्वेद महासम्मेलन के संगठन मंत्री वैद्य कर्दयन्लाल शर्मा ने पं० द्वारिकाप्रसाद शर्मा राजवैद्य जयपुर वालों के स्वगस्थ होने पर भात्मिक श्रद्धाञ्जलि अर्पित करते हुए व्यक्त किया कि वैद्यराज जी देश व प्रदेश के गणमान्य चिकित्सकों में से एक थे। उन्होंने कई वर्ष तक प्रदेश के आयुर्वेदिक बोर्ड की अध्यक्षता करते हुए नगर में आयुर्वेद महाविद्यालय की स्थापना कराई।

शोक श्रद्धाञ्जलि

विगत दिनों एक शोक सभा का आयोजन कर राजवैद्य पं० द्वारिका प्रसाद शर्मा जयपुर वालों को शोक श्रद्धाञ्जलि अर्पित की गई। आप मध्य प्रदेश के प्रसिद्ध चिकित्सक थे जिनसे मध्य प्रदेश के भूतपू

मन्त्री श्री रविशंकर शुक्ल, भगवन्तराव मण्डलोई एवं श्री द्वारिकाप्रसाद मिश्र चिकित्सा लेते थे। आपका यश दूर दूर तक फैला था। आप महाकौशल आयुर्वेद यूनानी बोर्ड के अध्यक्ष रह चुके हैं। वर्तमान शा० आयुर्वेद महाविद्यालय का प्रारम्भ पहिले आयुर्वेद बोर्ड में आपने ही चालू कराया था। आपने कल्प चिकित्सा में काफी ख्याति अर्जित की थी। उपरोक्त विचार, संघ के संयोजक डा० सिद्ध गोपाल गुप्त 'पुरोहित' संभाग सचिव एस० के० श्रीवास्तव जिलाध्यक्ष डा० आर० एस० श्रीवास्तव डी० राजेश पाठक, डा० एच० पी० डेडरिया, डा० पी० आर० अठनेरे एवं डा० श्रीमती कुशला दुवे ने व्यक्त किये।

स्व० श्री नारायण लाल जी जोशी

दिनांक १८-८-२१ को स्थानीय वैद्य समाज मन्दसौर की शोक सभा श्री अरविन्द स्टोर पर वैद्य श्री विष्णु प्रसाद जी वटवाल की अध्यक्षता में सम्पन्न हुई जिसमें वैद्यरत्न श्री नारायण लाल जी जोशी जिनका दिनांक ११-८-८१ को देहावसान हो गया, नगर के वैद्यों की ओर से श्रद्धाञ्जलि अर्पित हो गई।

वैद्य लक्ष्मीनारायण गुप्त का गोलोकवास

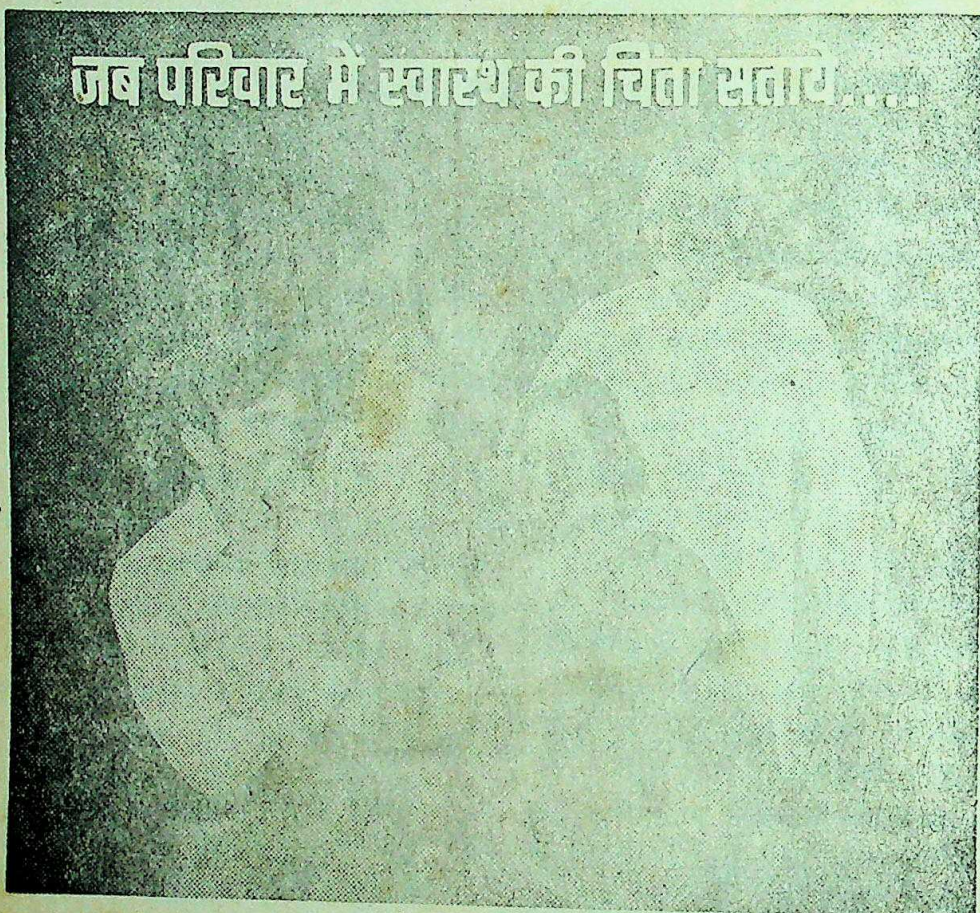
श्री गंगानगर। स्थानीय श्री राधेश्याम आयुर्वेद भवन के संचालक एवं सुविख्यात वयोवृद्ध चिकित्सक वैद्य लक्ष्मीनारायण गुप्त का श्री वृन्दावनवास में ६८ वर्ष की अवस्था में १४ अप्रैल १९८१ को गोलोकवास हो गया। आपके आकस्मिक निवन पर जिला वैद्य सभा, आर्य शिक्षण संस्थान और अनेक संस्थानों ने शोक प्रस्ताव पास कर हार्दिक संवेदना व्यक्त की। श्री गंगानगर के आयुर्वेदिक प्रतिष्ठानों ने आपके साम्मान में अवकाश रखा।

डा० विपिन उपाध्याय का आकस्मिक निधन

अखिल राजस्थान चिकित्सक सभ के अध्यक्ष डा० विपिनप्रकाश उपाध्याय का वम्बई जाते समय हृदय गति रुकने के कारण रत्नलाम में दिनांक ५ जून १९८१ को आकस्मिक निधन हो गया। डा० उपाध्याय के आकस्मिक निधन पर एक शोक सभा का आयोजन किया गया तथा परमपिता परमेश्वर से दिवंगत आत्मा को शान्ति प्रदान करने एवं शाक संतप्त परिवार को शक्ति प्रदान करने के लिए दो मिनट का मौन रखा गया। शोक सभा का आयोजन सभ उपाध्यक्ष डा० आर० एन० झा ने किया।

धन्वन्तरि

जब परिवार में स्वास्थ्य की चिंता सताये...



...तो सिफारिश संहु

केसरी जीवन

केसर युगों से जांचा-परखा आयुर्वेदिक शक्तिवर्धक है जिसे बच्चों से लेकर बूढ़ों के रोगों में प्रयोग किया जाता है।

केसरी जीवन व्यवस्था में रससिद्ध, अभ्रक भस्म तथा अन्य शक्तिवर्धक और वायुनाशक औषधियाँ मिलाकर बनाया है।

केसरी जीवन चूँकि आमले पर आधारित है इसलिए यह विटामिन 'सी' का भंडार है और सर्दी और खांसी दूर करने में सहायक होता है। कैल्शियम की कमी और रक्त के अभाव में लाभकारी है। ललाटे और दबाव की परिस्थितियों में केसरी जीवन के प्रयोग की विशेष रूप से सिफारिश की जाती है।

केसरी जीवन शक्ति और रोज प्रदान करता है।

केसरी जीवन कब्ज, अम्लता और अपच दूर करने में सहायता करता है।

६ से १० ग्राम तक सुबह की दूध के साथ लेने से बड़े अच्छे परिणाम प्राप्त होते हैं।



११५ और ४५० ग्राम के
कैसरी जीवन में मिश्रित है।



संहु

चिकित्सा में उपयोगी यन्त्र शस्त्र संचय

हाइड्रोस्टिक सैंट—इस सैंट द्वारा नाक, कान तथा को बन्दर से देखते हैं। टार्न के ऊपर कान देखने का लाल, नाविका प्रेक्षण यन्त्र तथा गला व जवान देखने की जीवी, तीनों में से कोई सा एक फिट हो जाता है। बिना सैंल पूरे सैंट का मूल्य केवल ७८.००, वाउलेंड हाइड्रॉवर यन्त्र दर्पण रहित ११४.००।

आमाशय प्रक्षालनी नलिका—विष के खा लेने पर मृत हो आमाशय प्रक्षालन को मूल्य १३.७५।

नमक का पानी बढ़ाने का यन्त्र (Saline Apparatus)—द्वैजा में नमक का पानी बढ़ाने को। मूल्य ७.५०।

सोतीमन्ना देखने का शीशा—प्लास्टिक का हैंडिल छोटा शीशा ३.७५, बड़ा ४.७५, धातु का हैंडिल सर्वोत्तम १.७५, बड़ा साइज ८.७५।

स्टेथिस्कोप

भारतीय सर्वोत्तम डबल चैस्ट पीस २४.५०, उत्तम सिगिल चैस्ट पीस १७.५०, साधारण १२.५०।

स्टेथिस्कोप रखने का थैला—सम्पूर्ण चमड़े का दो जेब वाला मूल्य २२.५०। जिप (जंजीर) या बहत लगा एक जेब का साधारण ११.५०।

बैल टार्न—चिकित्सकों के लिए घने, नाक आदि की परीक्षा करने को खेल सहित केवल १४.००।

धमनीमीटर (तापमापक यन्त्र)—भारतीय ४.२५।

धमनी संश्लेष (Artery Forceps)—स्टेनलैस स्टील १ इन्च ८.५०, ६ इन्च ११.००।

सूचिका संश्लेष (Needle Holder)—त्वचा को सीते समय सुई को इसीसे पकड़ा जाता है। इसके बिना सीवन कर्म सम्भव नहीं। स्टेनलैस स्टील का १४.५०।

बाग्य सीवन कर्म को—नायलोन का पैकिट २.२५, रेशमी १ गुच्छी २.२५, सफेद या काली १ रीस १०.५०।

कंटैगट—मांसपेशियों के सीवन कर्म को ६.५०।

सूचिका (Needle) सीवन कर्म के लिए—६ सुई का पैकिट १०.५०।

जीरो वर लिखने की पेन्सिल—मूल्य केवल १.५०।

मसूड़े खोलने का चाकू—स्टेनलैस स्टील का सीधा

४.५०, स्टेनलैस स्टील का फोल्डिंग १.००।

इन्जेक्शन सिरिज—सम्पूर्ण कांच की १ मि.लि. की ५.७५, ५ मि.लि. की ७.७५, १० मि.लि. की १०.३०।

रेकाइड सिरिज—२ मि.लि. का ११.००, ५ मि.लि. की १२.००, १० मि.लि. की १८.५०।

ल्यूरोलाक भारतीय—२ मि.लि. ७.५०, ५ मि.लि. ११.००, १० मि.लि. की १३.५०।

नाइलीन की सिरिज—२ मि.लि. ३.००, ५ मि.लि. ५.००, १० मि.लि. ६.५०।

इन्जेक्शन की सुई (नोडिस)—एक दर्जन १०.००, बढ़िया जापानी एक दर्जन ३३.००।

परवाल उखाड़ने की चीमटी (Cilia Forceps)—मूल्य ४.५०, स्टेनलैस स्टील ७.००।

एनिमा सिरिज (बस्ति यन्त्र)—रबर का भारतीय उत्तम ११.५०, प्लास्टिक का ६.००।

गला व जवान देखने की जीवी (Tongue Depressure)—स्टेनलैस स्टील सीधी ६.२५, एन टाइप स्टील ७.५०।

गरम पानी की बेली—मूल्य १४.५०।

बरफ की बेली—मूल्य ७.७५।

कान धोने की पिचकारी—धातु की एक बीस (२५ मिलि.) १७.५०, २ बीस (५० मिलि.) की २३.००, ४ बीस (१०० मिलि.) की ३०.००।

आवरोशन करन का चाकू—इसमें हैंडिल प्रयुक्त होता है तथा काटने वाला ब्लेड प्रयुक्त होता है जो कि खपाव होने पर बदला जा सकता है। ६ ब्लेड सहित ११.०५, स्टेनलैस स्टील का ६ ब्लेड सहित १३.७५।

विद्युत्तरी—इसका फलाक पतला तथा तिरछा होता है। इसके द्वारा भेदन किया जाता है। स्टेनलैस स्टील की सीधी ४.२५, स्टेनलैस स्टील की फोल्डिंग ८.५०।

चीमटी—स्टेनलैस स्टील ४" ३.७५, ५" ४.७५। दांतों में दवा डालने की चीमटी स्टील ८.००।

चाकू—स्टेनलैस स्टील का सीधा ४.९५, स्टेनलैस स्टील का फोल्डिंग ८.५०।

दांत उखाड़ने का जम्हा—मूल्य १५.५०, स्टेनलैस स्टील का २६.००।

आर्या समाज रत्न

१—आपके पते में यदि कोई परिवर्तन हो गया है तो उसकी सूचना हमें देकर पता ठीक करना न जिससे 'अथर्वतारि' नियमित भिरता रहे।

२—आपको 'अथर्वतारि' का जो भी अंक मिलता है उससे पूर्व का अंक आपकी मिला है या नहीं यह देखना यदि नहीं मिला है तो उसी समय पत्र लिखकर माग लें। एक साथ कई अंकों के न मिलने की शिकायत की प्रति हम परामर्श नहीं कर सकते।

३—किसी भी कारण पत्र लिखने समय अपनी ग्राहक महग अवश्य लिखें जो कि रैपर में आपके पते से पूर्व लिखी गयी है। इससे हमें आपके पत्र पर कार्य-वाही करने में सुविधा एवं सीजता होगी।

४—आगामी मार्च का अंक 'मुख एवं कण्ठरोग चिकित्सा' होगा। यह अगस्त एवं सितम्बर १९२१ का संस्करण होगा।

सकल दवाओं की सुपरिचित—

तीन दवायें

ॐ अथर्वतारि कंपसुन—(अति के लिए)

३० कंपसुन की १ बोली ८५००

ॐ अथर्वतारि वरी—(दवाओं पर लगाने की)

३२ बोली की बोली ४००

ॐ अथर्वतारि वृत्त—(दवाओं पर लगाने की)

२५ मिली की बोली ३५०

तीनों दवाओं का एक सेट १५ दिन के लिए १५००

ॐ—हमारे रोगियों पर परीक्षण सहज दवायें।

संगाने का पता—

निर्मल आयुर्वेद संस्थान

साधु भागजा रोड, अलीगढ़।

Registered with the Registrar of Newspapers of India under R. N. 2197

अथर्वतारि

प्रकाशक

निर्मल आयुर्वेद संस्थान

अलीगढ़

वर्षांक पूर्य १९२१

आयुर्वेद
सर्वाधिक
प्रचलित
सचित्र हिन्दी
'मासिक पत्र'



श्री

सुखे एनं कण्ठ
रोग चिकित्सांक
आगत + सितम्बर १९५१

मूल आयुर्वेद



मुख एवं कण्ठ रोग चिकित्साङ्क

भाग ५५

अगस्त + सितम्बर १९८१

अङ्क ८ + ९

क्या ! किसका !! कहाँ !!

विशेष सम्पादक
कवि. डा. गिरिधारी लाल मिश्र
एम. एस. सी. (ए), ए. एम. बी. एस.
एम. ए. एम. एस., आयु. वाच.
साहित्यायुर्वेद रत्न
प्रधान चिकित्सक—
केदारनाथ आयुर्वेदिक हॉस्पिटल
तेजपुर-७८४००१ (असम)

—: सम्पादक एवं प्रकाशक :—

दाऊदयाल गर्ग

निर्माण आयुर्वेद संस्थान, अलीगढ़

अङ्क ८ + ९ वर्ष ५५

वार्षिक मूल्य १७.००

इस अङ्क का मूल्य-४.००

मोरा प्रिंटिंग प्रेस, मामू मांजा
रोड, अलीगढ़ के आदेश से निर्मल
आयुर्वेद संस्थान अलीगढ़ के लिये
राकेश एण्ड कं०, प्रेस, मथुरा
द्वारा मुद्रित ।

सम्पादक एवं प्रकाशक

दाऊदयाल गर्ग

मुख एवं कण्ठ रोग चिकित्सा के विशेष सम्पादक आयु. वाच०

डा० गिरिधारी लाल मिश्र का सक्षिप्त व्यक्तित्व एवं कृतित्व

—दाऊदयाल गर्ग ६.

सम्पादकीय —विशेष सम्पादक ७.

मुख रोग विज्ञान —कवि० गिरिधारी लाल मिश्र ८.

ओष्ठगत रोग एवं चिकित्सा " " १३.

दन्त-एक अध्ययन —वैद्य श्री राजकुमार सिंह कुशवाहा १७.

दन्तमूलगत कतिपय रोग और उनकी चिकित्सा

—कवि० बंश वेदप्रकाश गुप्त बी०आई०एम०एस० १९.

कुमिदन्त —डा० रणवीर सिंह शास्त्री एम०ए०, पी०एच०डी० २३.

पायोरिया —डा० शिव पूजन सिंह कुशवाहा एम० ए० २५.

पायोरिया —हकीम नूर मौहम्मद बंश विशारद २७.

दन्तनाड़ी रोग एवं चिकित्सा —कवि० गिरिधारी लाल मिश्र २८.

प्रज्ञादन्त " " २९.

दन्त उद्धरण " " ३०.

दन्त रोगों की होमियो चिकित्सा—डा० प्रकाशचंद्र गंगराडे आ. बारिधि ३२.

विभिन्न दन्त रोगों पर सफ़ाई विद्रु प्रयोग—वैद्य बरवारीलाल आयु. मिश्र. ३३.

दन्त रोगों पर पंच ब्रह्मसूत्र —विशेष सम्पादक ३५.

जिह्वागत रोग एवं चिकित्सा " " ३७.

गलशुण्डी —श्री सिद्ध गोपाल शुक्ल पुरोहित ४१.

सर्वधेर (मुखपाक) —डा० रतन लक्ष्मण बंदाचार्य ४३.

तालु शोथ —कवि० डा० गिरिधारी लाल मिश्र ४५.

तालु का कैंसर " " ४६.

कण्ठ शोथ " " ४७.

कण्ठगत रोग एवं चिकित्सा " " ४८.

स्वरभंग रोग एवं चिकित्सा " " ५१.

गल शोथ " " ५२.

गल ग्रन्थि शोथ —डा० पुण्यनाथ मिश्र आयु० ५५.

तुण्डिकेरी या टांसिल —डा० विमला अग्रवाल ५६.

मुख एवं कण्ठ रोगों पर आयुर्वेद सिद्ध की चतुर्वंश विन्तु

— डा० गिरिधारी लाल मिश्र आयु० वाच० ६१.

आपनों से अपनी बात

पहिले परीक्षा करें एवं बोनस कूपन योजनायें

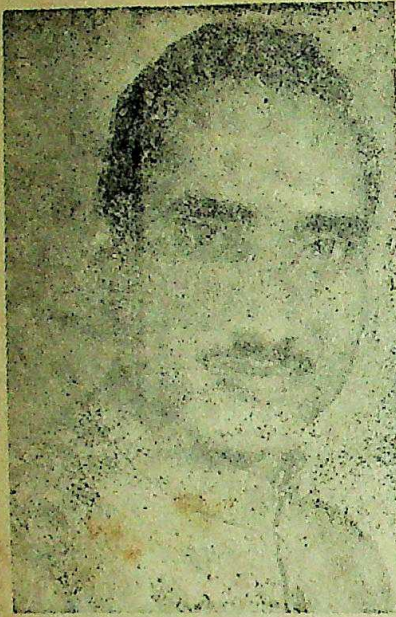
- ० 'धन्वन्तरि' के गत अंक में हमने विराट उपहारी योजना प्रस्तुत की थी जिससे अनेक ग्राहकों ने लाभ उठाया। अब उस योजना की अवधि समाप्त हो गई है। विनम्र निवेदन है कि कृपया उपहार के लिए अब आग्रह न करें।
- ० पहिले परीक्षा करें—गत वर्ष की भांति इस वर्ष भी ३१ दिसम्बर १९८१ तक के लिए "पहिले परीक्षा करें" योजना आपके समक्ष प्रस्तुत कर रहे हैं। इसका विस्तृत विवरण इसी अंक में पृष्ठ ६५-६६ पर देखें।
- ० बोनस कूपन—कमीशन काट कर जिनका आर्डर १०१ रुपये से अधिक का होगा उनको ५% बोनस कूपन दिया जायेगा। विस्तृत विवरण पृष्ठ ६६ पर देखें।
- ० सावधान—कतिपय ग्राहकों के पत्रों से ज्ञात हुआ है कि हमका भेजे गये आयुर्वेदक कैपसूल, पेटेंट औषधियों एवं शास्त्रोक्त औषधियों तथा चिकित्सोपयोगी उपकरणों के आदेश पत्रों का सामान उन्हें अन्यत्र कहीं से प्राप्त हुआ है। आप कोई भी सामान मांगते समय बिल मिलने पर देख लें कि उस पर 'धन्वन्तरि', निर्मल आयुर्वेद संस्थान, एवं डाऊ मौडीकल स्टोर्स छपा है या नहीं। तथा जी. पी. किस फर्म से आई है। यदि उपरोक्त दोनों फर्मों के अतिरिक्त किसी अन्य फर्म से आपको वी० वी० प्राप्त होती है तो उसे हरगिज न छुड़ायें, वापिस कर दें।
- ० हमें भेजे गये आदेशपत्रों पर अपना पूरा नहीं लिखें—हमें भेजे गये आदेशपत्र का सामान कोई अन्य फर्म सप्लाय न कर सके इस हेतु निवेदन है कि अपने आदेशपत्रों में आप अपना पूरा पता नहीं लिखें—केवल मात्र अपना नाम, 'धन्वन्तरि' की स्न् १९८१ की ग्राहक संख्या और पोस्ट आफिस का या गांव का नाम ही लिखें। अपना मुहल्ला, तहसील या ताल्लुका, जिला आदि नहीं लिखें। आपकी ग्राहक संख्या से हम आपका पूरा पता ज्ञात कर लेंगे लेकिन अन्य फर्म हमारे आर्डर को सप्लाय नहीं कर पायेगी। आपके इस सहयोग के लिए आभारी रहेंगे। यदि आप आदेशपत्र के साथ एडवांस भेज रहे हैं तो प्रत्येक से पत्र भेजने की आवश्यकता नहीं। अपना आर्डर भी अनिआर्डर कूपन में ही लिख दें।
- ० अपना आर्डर रजिस्टर्ड पत्र द्वारा भेजें—यदि आप अपना आर्डर रजिस्टर्ड पत्र द्वारा भेजते तो हैं रजिस्ट्रेशन शुल्क २.२५ हम बिल में कम कर देंगे।
- ० आर्डर के साथ कृपया एडवांस अवश्य भेजें—इस बार बोनस कूपन केवल उन्हीं को दिया जायेगा जिनका पूरा रुपया या कम से कम २० रुपया एडवांस प्राप्त होगा। इस कारण अपने आर्डर के साथ एडवांस अवश्य भेजें।
- ० चिकित्सोपयोगी उपकरणों पर भी बोनस कूपन—गत वर्ष बोनस कूपन की यह योजना हमने केवल औषधियों पर ही रखी थी लेकिन इस वर्ष ३१ दिसम्बर १९८१ तक प्राप्त चिकित्सोपयोगी उपकरणों के आर्डर पर भी, जिनका कि मूल्य १५१ रुपये (एक सौ इक्यावन रुपये) से अधिक हो जाता है तथा जिनके साथ कम से कम २० रुपये एडवांस भी भेजा गया है ५% बोनस कूपन देंगे। ध्यान रखें बिना एडवांस के किसी आर्डर पर बोनस कूपन नहीं दिया जायेगा।

भवदीय

डाऊदयाल गर्ग—सम्पादक—'धन्वन्तरि'

पता इस प्रकार लिखें

निर्मल आयुर्वेद संस्थान, डी ७८ औद्योगिक नगर, अलीगढ़-१६
डाऊ मौडीकल स्टोर्स, डी ७८ औद्योगिक नगर, अलीगढ़-१६



मुख एवं कण्ठ रोग चिकित्साङ्क के विशेष सम्पादक आयु० वाच० डा० गिरिधारी लाल मिश्र का संक्षिप्त व्यवित्तव एवं कृतित्व

नाम—कवि० डा० गिरिधारी लाल मिश्र । पुत्र स्व० पं० राधाकृष्ण
मिश्र जन्म स्थान—नेछवा (सीकर), जन्मतिथि ६-८-१८४६
स्थायी पता—तिवाड़ी भवन (गंगा बक्स जी तिवाड़ी का
मकान) विहारी मार्ग, सीकर, राजस्थान ।

दत्तकपुत्र—अपने नाना जी एवं श्री गंगाबक्स जी तिवाड़ी (गुरु
जी) के दत्तक पुत्र एवं उत्तराधिकारी

शैक्षणिक योग्यताएँ—(ए. एम. बी. एस., एम. ए. एम. एस.,
एम. एस-पी. (ए.) आयुर्वेद वाचस्पति, आयुर्वेद रत्न, साहित्य रत्न,
साहित्यालंकार, ज्योतिष विशारद, योग विशारद ।

लेखानुभव—धन्वन्तरि, आयुर्वेद विकास, सुधानिधि, आयुर्वेद महासम्मेलन पत्रिका आदि में विगत दस
वर्षों से सारगर्भित गवेषणात्मक लेख प्रकाशित होते रहे हैं । विशेषतः उक्त पत्रिकाओं के विगत १० वर्षों के लगभग
सभी विशेषाङ्कों में विशेष लेख प्रकाशित । विशेष सम्पादक—सुधानिधि के स्वांस रोग चिकित्साङ्क के यशस्वी
सम्पादक तथा १९८१ के काम समस्या अङ्क के सम्पादक ।

विशेषज्ञ—स्त्री पुरुषों के समस्त प्रकार के गुप्त रोग, अम्माशयिक व्रण (Peptic ulcer) अम्लपित्त,
संप्रहृणी, उदरवात, श्वेत प्रदर, स्वास, यक्ष्मा, नासार्श, चर्मी रोग एवं वात व्याधि आदि रोगों के सफल चिकित्सक ।

सम्मानित पद अन्तर्राष्ट्रीय—अन्तर्राष्ट्रीय आयुर्वेद सम्भाषा परिषद पटियाला में भाग ले चुके हैं ।

अखिल भारतीय—अखिल भारतीय आयुर्वेद सम्मेलन के सन् १९६५ से आजीवन सदस्य तथा सन्
१९७२ में आगरा अधिवेशन में असम प्रान्तीय संगठन मन्त्री, १९७५ में पाण्डिचेरी अधिवेशन में अखिल भारतीय
आयुर्वेद महासम्मेलन के कार्यकारणी सदस्य, पुनः शिमला अधिवेशन १९७७ तथा जयपुर अधिवेशन १९८१ में
प्रान्तीय संगठन मन्त्री मनोनीत किये गये । महासम्मेलन के वार्षिक अधिवेशनों की सम्भाषा परिषदों में भाग
लेते आ रहे हैं, सुपुष्टवक्ता, अप्रतिभ लेखक ।

पूर्वोत्तर भारत अध्यक्ष—असम, नागालैंड, मेघालय, अरुणाचल, मिजोरम, मणिपुर, त्रिपुरा प्रान्तों के
अखिल भारतीय सा. स. आयुर्वेद स्नातक संघ के अध्यक्ष ।

असम प्रान्तीय मन्त्री—असम राज्य आयुर्वेद महासभा, गौहाटी जो अखिल भारतीय आयुर्वेद महा-
सम्मेलन दिल्ली की अङ्गभूत शाखा है ।

स्थानीय—युवक परिषद तेजपुर के भूतपूर्व अध्यक्ष, चिन्मय मिश्र के सहसचिव तथा जिला वैद्य
सम्मेलन के संरक्षक, अन्य विविध संस्थाओं के अध्यक्ष एवं सचिव पद से अनेक बार सम्मानित ।

प्रधान चिकित्सक—केदारमल मेमोरियल आयुर्वेदिक होस्पिटल, तेजपुर (असम) (पूर्वांचल भारत का
सुविशाल चिकित्सा केन्द्र जो अन्तरंग, बहिरंग, रसायनशाला, पैथोलोजी लेबोरेटरी, बनीषधि उद्यान, पुस्तकालय,
योग चिकित्सा केन्द्र आदि सभी विभागों से सुसज्जित है) जहां पूर्वांचल के सात प्रान्तों के रोगी चिकित्सार्थ आते
हैं । प्रतिदिन की रोगी संख्या ५०० के लगभग होती है ।

—दाऊदयाल गर्ग 'सम्पादक—धन्वन्तरि'

सम्पादकीय

आयुर्वेद विश्व का प्राचीनतम सर्वाङ्गपूर्ण चिकित्सा विज्ञान (Medical Science) है जो अपने स्वर्णकाल में अष्टाङ्ग आयुर्वेद के रूप में पगलि की पराकाष्ठा पर प्रतिष्ठित था। अष्टाङ्ग आयुर्वेद के आठ अङ्ग— १. शल्य (Surgery) २. शालाक्य (E.N.T.) ३. कायचिकित्सा (Medicine) ४. सूतविद्या (Neurology) ५. कौमारभृत्य बालरोग (Paediatrics) ६. प्रसूति विज्ञान (Gynaecology) ७. विष विज्ञान (Toxicology) तथा ८. रसायन-बाजीकरण (Metabolism & Sexology) है जिनका ज्ञाता ही 'आयुर्वेदज्ञ' कहलाता था। आज के युग में आधुनिक चिकित्सा विज्ञान जिस तरह शल्य चिकित्सा में उन्नत है प्राचीनकाल की शल्य विषयक उपलब्धियाँ जहाँ व्यक्ति का सिर काटकर उस पर दूसरे व्यक्ति या पशु का शिर प्रत्यारोपण के समक्ष आधुनिक उपलब्धियाँ बहुत कम हैं। इतिहास साक्षी है। तथागत भगवान् बुद्ध ने 'अहिंसा परमोधर्म' की आड़ में शल्य विज्ञान को आसुरी चिकित्सा कहकर राजाज्ञा द्वारा शल्य चिकित्सा पर प्रतिबन्ध लगा दिया। शल्य क्रिया में रक्त आदि के बहने को हिंसा मानकर शल्य चिकित्सा का अन्त कर दिया।

प्रस्तुत लघु विशेषाङ्क का विशेष विषय 'मुख रोग विज्ञान' है जो अष्टाङ्ग आयुर्वेद का द्वितीयाङ्ग शालाक्य तन्त्र का उपाङ्ग कहा जा सकता है। शालाक्य तन्त्र की परिभाषा देते हुए आचार्य सुश्रुत लिखते हैं—

शालाक्यं नामोष्ठजत्रुणतानां श्रवण नयन वदनघ्राणादि संश्रितानां व्याधीनामुपशमनार्थं ।

उर्ध्वजत्रु रोगों की परिगणना देते हुए नेत्र रोग ७६, कर्ण रोग २८, नाक रोग ३१, शिरोरोग ११ तथा मुखरोग ६७ अर्थात् २१३ गदन से ऊपर के अङ्गों के रोगों का विशद विवेचन चिकित्सा के साथ होना, शालाक्य तन्त्र कहलाता है। इस तन्त्र में इतनी सूक्ष्मता के साथ विवेचन होना इसकी विशिष्टता की स्पष्ट करता है।

प्राचीनकाल से ही विशेषज्ञों की परम्परा चली आ रही है तथा आयुर्वेद के अष्टाङ्गों का सामान्य ज्ञान प्राप्त कर ही 'आयुर्वेदज्ञ' अपने-अपने विषय के विशेषज्ञ कहलाते थे। शल्य तन्त्र (Surgery) के प्रमुख विशेषज्ञ आचार्य सुश्रुत के शब्दों से स्पष्ट है कि विदेहाधिप द्वारा प्रणीत शालाक्य तन्त्र अपने विषय का परिपूर्ण ग्रन्थ था—जो सम्प्रति उपलब्ध नहीं है।

निखिलेनोपदिश्यते यत्र रोगा प्रथकविधाः । शालाक्य तन्त्राभिहिता विदेहाधिप कीर्तिता ॥ — सु उ अ. १

तथा निमित्त के अतिरिक्त शालाक्य विशेषज्ञों की परम्परा में—कपिल, भद्र, शीतक, चाक्षुष्य, विदेह, सात्यकि, गार्ग्य, गालव, काकायन, कृष्णात्रेयश्रीज आदि शालाक्य विशेषज्ञों के नाम उल्लेखनीय हैं किन्तु खेद है कि आज इनके ग्रन्थ उपलब्ध नहीं हैं। अतः वर्तमान में आयुर्वेद के शालाक्य विषय का परिपूर्ण ज्ञान देने वाला प्रमुख ग्रन्थ व संप्रदाय नहीं है तथा गेद्य वर्ग के द्वारा भी यह अङ्ग उपेक्षित होने के कारण रोगी आधुनिक चिकित्सा की शरण में चला जाता है।

आधुनिक चिकित्सा ग्रन्थों में भी शालाक्य तन्त्र विषयक विशद वर्णन उपलब्ध है जो तीन विभागों में विभाजित है—(१) नेत्र चिकित्सा विज्ञान (Eye disease), (२) कर्ण-नाक-गले के रोग [E. N. T.] और (३) दन्त चिकित्सा [Dental Surgery]—अतः इन तीनों के समुदाय को शालाक्य तन्त्र कहा जा सकता है। शालाक्य तन्त्र विषयक ज्ञान का आज कुछ विस्तार ही हुआ है तथा यह दिनानुदिन अनुसन्धानों द्वारा प्रगति के पथ पर अग्रसर है।

प्रस्तुत लघु विशेषांक का कलेवर लघु होने के कारण संक्षेप में ही रोगों का वर्णन किया जा रहा है पर जितना वर्णन भी उपलब्ध है आधुनिक विज्ञान के वर्णन को देखते हुए काफी है यथा आधुनिक विज्ञान द्वारा प्रतिगतिन लगभग सभी रोगों का समावेश आयुर्वेदीय सप्तपष्टि मुख्यामय (मुख के ६७ रोग) में पते हैं। मैंने ६७ रोगों की तालिका के समक्ष रोगों के आधुनिक चिकित्सा विज्ञानानुसार प्राप्त नाम भी दिये हैं तथा घेरी हार्दिक इच्छा थी, इस विषय पर आयुर्वेदीय एवं एलोपैथिक ग्रन्थों के महत्तम आधुनिक चिकित्सा विज्ञान की उपविधियों का आयुर्वेदीकरण करके प्रस्तुत करने, क्योंकि आधुनिक चिकित्सा विज्ञान में वर्णित सम्पूर्ण आत्मिक तन्त्र विषयक ज्ञान का समावेश आयुर्वेद में पते हैं, अतः अन्य चिकित्सा पद्धतियों की उपादेय उपलब्धियों को आयुर्वेद में आत्मसात् कर आचार्य भाव भिन्न की उदारता (किरंग रोग—किरंग देश के युवतियों से भारतीयों को होने के कारण 'किरंगिण्या प्रसातः' प्रवेश में उत्पत्ता से आयुर्वेद में निदान चिकित्सा का समावेश करना) का अनुसरण करने पर विशेषाङ्क का कलेवर लघु होने के कारण तथा सम्पादक महोदय द्वारा यथाशीघ्र मासिकी प्रस्तुत करने के आग्रह पर मैंने केवल उनकी विधियों पर अपनी लेखनी की गति दी जिन विधियों पर मुझे कई लेख प्राप्त नहीं हुआ तथा लेख विस्तारमय ने उनका भी संक्षिप्त विवेचन मात्र केवल इस आवश्यकता की पूर्ति हेतु दिया गया है ताकि मुखरोग विषयक प्रमुख रोग का लघु अङ्क में संक्षिप्त वर्णन अवश्य आ जाय।

विशेषांक के लिए जिन महानुभावों ने लेख भेजकर सहयोग दिया है उनके प्रति तथा माननीय सम्पादक महोदय ने मुझे यह कार्य सौंपकर सत्प्रेरित किया उनके प्रति हृदय से कृतज्ञता प्रगट करते हुए आभारी हूँ। कई उपयोगी लेख विलम्ब से प्राप्त होने के कारण उनका उपयोग नहीं कर पाया उनके लिए श्री दाऊदयाल जो गर्व सम्पादक महोदय धन्वन्तरि से अनुरोध किया है कि अवशेष लेखों का प्रयोग साधारण अङ्कों में कर लें।

विनीत—कबिराज डा० विनिधारी लाल मिश्र

शरद् ऋतु में सेवन योग्य—

सम्पन्न व्यक्तियों के लिए तीन सहौषधियां

(ये व्यक्ति सम्पन्न हैं, पैसा खर्च कर सकते हैं उनके लिए तीन औषधियां)

१. तपुंसक्तवारि वटी—एक प्रकार के तपुंसकों को शान्तार जीवन बिताने के लिए इससे बढ़कर अन्य औषधि नहीं है, इसका कष्ट दिनों सेवन से पूर्ण यौवन आ जाता है। मू० ६० गोली २५.००।
२. कामशक्ति केशरी वटी—स्वर्ग, हीरा, पन्ना, माणिक्य आदि बहुमूल्य औषधियों से निर्मित यह औषधि सभी वीर्यवर्धक औषधियों में सर्वोत्तम है। मूल्य ६० गोली २५.००।
३. वसन्त कुमुभाकर रस—विशेष रूप से बनाया गया सर्वोत्तम है। मू० ६० गोली १५.००।
हमारा अनुभव है कि सम्पन्न व्यक्ति कामशक्ति केशरी वटी एक गोली, तपुंसक्तवारि वटी एक गोली तथा वसन्त कुमुभाकर रस एक गोली—तीनों को पिन्नाकर एक मात्रा बना लें, प्रातःसायं एक-एक मात्रा मलाई के साथ चाटों और ऊपर से मिश्री मिश्रकर दूध पीवें, चमत्कारिक लाभ होगा। तीनों औषधियां १ माह के लिए कमीशन वम करके विशेष रियायत में १५६.००, सेलटेक्स पोस्ट व्यय पृथक् होगा।
४. ३१ दिसम्बर ८१ तक अधिकतम रियायत करके एक माह को उक्त औषधियों का नेट मूल्य १५६ रुपये + विक्रीकर एवं होस्ट व्यय २० रुपये पृथक्—कुल १७६ रुपये का मनिआर्डर भेजने पर ६००० के स्थान पर ६६-६६ गोली तथा ७५० का वीनस कूपन भेजेंगे। बिना एडवांस वाले आर्डर पर ६६ गोली नहीं भेजेंगे।

निर्मल आयुर्वेद संस्थान, अलीगढ़

मुख्य योग विज्ञान

कवि. गिरिधारी लाल मिश्र

षट् सप्ताति नवमोगा दशाष्टादश कर्णजा ।
एकेत्रिंशत् प्राणमता शिरस्थेकादशेष तु ॥
संहितानामभिहिता सप्तषष्टि मुखामय ।

जिस तन्त्र में अष्टांग में पाये जाने वाले ७६ नेत्र
रोग, २८ कर्ण रोग, ३१ नासा रोग, ११ शिरोरोग तथा
६७ मुख रोगों का चिकित्सा सहित वर्णन है उस तन्त्र
को शालाक्य तन्त्र कहते हैं ।

मुख परिभाषा—

औष्ठौ च दन्तमूलानि दन्ता जिह्वा च तालु च ।

गलो मुखादिसकलं सप्तांगं मुखमुच्यते ॥

सप्तांग मुखमुच्यते—मुख शब्द से मुखगद्दर के सभी
अंगों का बोध होता है जो कि सात हैं—(१) औष्ठ
(Lips) (२) दन्तमूल (Gums) (३) दन्त (Teeth) (४)

जिह्वा (Tongue) (५) तालु (Palate) (६) गला
(Throat) (७) सकलमुख (Mucus membrane of
the buccal cavity) ।

सप्तषष्टि मुखामय—आचार्य सुश्रुत मुख रोगों की
संख्या ६५ मानते हैं जिनका विवेचन प्रस्तुत लघु विशेषांक
का विषय है । आचार्य वाग्भट ने मुख रोग ७५ माने हैं
पर उनके गहन अध्ययन से कई रोगों का समावेश एक
दूसरे रोग के लक्षणों में हो जाता है तो कुछ का वर्णन
वर्त्यतन्त्र में होना चाहिए । आचार्य सुश्रुत ही शल्य-शल्यक्य
के अधिकारी विद्वान हैं अतः उनके वर्गीकरण के आधार
पर ही अधोलिखित तालिका में ६७ मुख रोगों का नाम
एवं संकेत प्रस्तुत कर रहे हैं—

मुखरोग संख्या	रोग नाम	रोग लक्षण
औष्ठगत रोग—औष्ठप्रकोपगत		
१.	१-वातज (Cracked lip)	वायु के प्रकोप से औष्ठ खुरदरे, कड़े, सूखे, पीड़ायुक्त ।
२.	२-पित्तज (Herpes)	औष्ठ में जलन, पाक, स्राव एवं स्पर्श असह्यता ।
३.	३-कफज (Labidilis)	पीड़िकायें जो सर्षपाकृति की पीताभ नीलाभ कण्डूयुक्त ।
४.	४-सन्निपातज	फटे हुए होठ पीताभ-नीलाम तथा स्राव, शोथ पाकयुक्त ।
५.	५-रक्तज (Epithelioma)	रक्तवर्ण की पीड़िकाओं से युक्त फटे हुए होठ ।
६.	६-मांदांज (Papiloma)	ओठ गुह स्थल व मांस पिण्ड के समान उभरे हुए ।
७.	७-मेदोज (Macrochisla)	ओठ से स्फटिकवत् स्राव तथा कण्डू युक्त व्रण ।
८.	८-अभिघातज (Injured lips)	चोट लगने से फटे हुए कण्डू पीड़ायुक्त ओठ ।
दन्तमूलगत रोग—१६ (Gums diseases)		
९.	१-शीताद (Bleeding gums)	मसूढ़ों से रक्त निकलना, दांत का हिलना, मुख दुर्गन्ध ।
१०.	२-दन्त पुष्पुट (Gum boil)	ओठ के मसूढ़ों में महान शोथ तथा पाक, तीव्र वेदना ।
११.	३-दन्तवेष्ट (Pyorrhoea)	मसूढ़ों से पूय मिश्रित रक्त निकलना, मुख दुर्गन्ध करना ।
१२.	४-शोषिर (Gingivitis)	मसूढ़ों में शोथ, कण्डू, लालास्राव एवं तीव्र वेदना ।
१३.	५-महाशोषिर (Scurvy)	मसूढ़े पक जाते दांत हिलना, पूय एवं रक्त स्राव ।
१४.	६-परिदर (Gangren gums)	दांत का मांस गल जाना तथा थूक के साथ रक्त निकलना ।

रोग नाम	रोग लक्षण
१५. ७-उपकुण (Gum boil,	मसूढ़ों में शोथ दाह कण्डू घर्षण से मांस निकलना
१६. ८-विदमं	दन्तग्राम में घर्षण से व अग्निघातजन्य शोथ
१७. ९-खल्लीवर्धन (Extra tooth)	तीव्र वेदना के साथ एक दांत अधिक निकल जाना
१८. १०-अग्निमांसक (Inflammation of the back of the Gums)	हनु के पीछे दन्तमूल में तीव्रशोथ तथा एक कर्ण में असह्य पीड़ा तथा लालास्राव
१९. ११-दन्तनाडी (Sinus of the Gums)	पायरिया आदि में पूय दांतों की जड़ों में पहुंच कर नाड़ी रोग उत्पन्न करता है।
२०. १२-वातज दन्तनाडी	वातज में वेदना तीव्र होती है।
२१. १३-पित्तज	पित्तज में चुम्बन, ज्वर तथा पीला स्राव होता है।
२२. १४-कफज	कफज में मन्द वेदना, कठोरता एवं कण्डू होती है।
२३. १५-त्रिदोषज	दाह ज्वर मूर्च्छा मुख की शुष्कता त्रिदोष में होती है।
२४. १६-शाल्यज	किसी शल्य तिनका आदि अनुमार्ग में घुसने पर शीघ्र नाड़ी ब्रण होता है।

दन्तरोग-८ (Dental Diseases)

२५. १-दालन (Toothache)	दांत में दारण फाड़ने के समान वेदना होती है।
२६. २-कृमिदन्त (Dental caries)	दांतों में श्यावता, छिद्र होना व तीव्र वेदना होती है।
२७. ३-संजक (Fissured tooth)	दांत भंग (टूटना) होना, तीव्र वेदना मुख वक्रता होते हैं।
२८. ४-दन्तहर्ष (Odontitis)	दांत शीत, उष्ण, रुक्ष एवं अम्ल पदार्थ असह्य होते हैं।
२९. ५-दन्तशर्करा (Tartar)	दांत पर शर्करावत् मल जम जाना
३०. ६-कपालिका (Enamel)	दांत की शर्करा के साथ दांतों के बल्कल का विदीर्ण होना
३१. ७-श्याव दन्त	इस अवस्था में दांत का रंग नीला हो जाता है।
३२. ८-हनुमोक्ष (Dislocation of Jaw)	प्रकुपित वायु द्वारा हनुसन्धि का शिथिल हो जाना।

जिह्वागत रोग-५ (Diseases of Tongue)

३३. १-वातज (Cracked Tongue)	जिह्वा फटी हुई संशार्धान शाकपत्रवत् खुरदरी होना
३४. २-पित्तज (Red gloged Tongue)	जिह्वा पर लाल लाल कटि, दाह तथा पीताम होना।
३५. ३-कफज (Lukoplakia)	जिह्वा का स्थूल शाल्मलि कण्टकवत् मांसांकुरयुक्त होना।
३६. ४-आलस (Abscess of the Tongue)	जिह्वा मूलगत दाह पाक शोथ तथा जड़स्तम्भ
३७. ५-उपजिह्वा (Epiglottis)	जिह्वा शोथ द्वारा लसिकावाहिनी का अवरोध

तालुगत रोग-६ (Diseases of Palate)

३८. १-गल गुण्डिका (Elongated uvula)	गुण्डिकास द्वारा कौवा गिरना, गल शोथ
३९. २-तुण्डोकेरी (Tonsillitis)	वनकपासवत् स्थूल शोथ दाह पाक वेदनायुक्त
४०. ३-अध्रुप (Inflammation of Palate)	तालु में रक्तवर्ण, पीड़ायुक्त शोथ
४१. ४-मांसकच्छप (Tumour of Palate)	तालु भाग में कछने की पीठ के समान शोथ वेदना
४२. ५-ताल्वर्तुव (Cancer of the Palate)	तालु मध्य में बघाकार उन्नत शोथ होना
४३. ६-मांसघात (Fibroma)	ताल मध्य शोथ, तालुगत् मांस का दूषित हो जाना

रोग नाम	रोग लक्षण
४४. ७-तालुपुष्पुट (Euptis)	तालु में मृदयुक्त बदर कं समान शोथ
४५. ८-तालुशोष (Cleft)	तालु में शोष, अति विदारण, उग्र श्वास, ज्वर होना
४६. ९-तालुपाक (Abscess in the Palate)	तालु में तीव्र पाक, प्रयस्ताव, वेदना होना

गला रोग-१९ (Throat Disease)

रोहिणी (Diphtheria)

४७. १-वातज रोहिणी	कण्ठ में वात पित्त कफ दोष मांस और रक्त को दूषित
४८. २-पित्तज रोहिणी	कर कण्ठावरोध वाले मांसांकुरों को उत्पन्न करते हैं जो
४९. ३-कफज रोहिणी	वात पित्त कफ त्रिदोष रक्तज पांच प्रकार का है।
५०. ४-त्रिदोषज रोहिणी	
५१. ५-रक्तज रोहिणी	
५२. ६-कण्ठशालूक (Tumer in throat)	गले में बदराकृति ग्रन्थि कण्ठक होता।
५३. ७-अधिजिह्वा (Fpiglotitis)	जिह्वा के मूल भाग में शोथ पाक वेदना
५४. ८-वलय (Inflammation of throat)	गल सन्धि व गले में शोथ होकर अन्नमार्ग विरुद्ध
५५. ९-बिलास	गले में मर्मघाती शोथ श्वास कृच्छ्र एवं पीड़ा होना
५६. १०-एक वृन्द	गलापार्श्व में शोथ दाह कण्ठ ज्वर होना
५७. ११-वृन्द (Tumour in throat)	गलान्तर्गत समुन्नतवृन्द शोथ, दाह ज्वर तीव्र वेदना
५८. १२-शतघ्नी (A Kind of Tumer)	गले में कण्ठावरोधी मांसांकुर का उत्पन्न होना
५९. १३-गिलाय (Hard Tumer)	गले में आंवला के समान बड़ी ग्रन्थि का उत्पन्न होना
६०. १४-गल विद्रधि (Abscess)	सम्पूर्ण गले में व्याप्त शोथ जो सन्निपातज विकार है
६१. १५-गलीध	कण्ठ के अन्तर्गत अगलवत् शोथ होना
६२. १६-स्वरघन	स्वर भिन्न, गला शुष्क और मंगवत् प्रतीत
६३. १७-मांसताल	कण्ठदायक मांस शोथ जो कण्ठावरोध करे
६४. १८-विदारी	कण्ठ में मुई चुभने के समान वेदना

मुख रोग [सर्वसर]-३ (Stomatitis)

सर्वसर [मुखपाक] (Stomatitis)

६५. १-वातज मुखपाक	जो सम्पूर्ण मुख में उत्पन्न होता है तथा मुखगत सप्ताङ्गों में व्याप्त होता है
६६. २-पित्तजन्य मुखपाक	सम्पूर्ण मुख तोदयुक्त छालों से भरा रहता है
६७. ३-कफजन्य मुखपाक	मुख बाह्ययुक्त लालवर्ण छालों से भरा रहना
	मुख कण्ठयुक्त वेदना वाले छालों से भरा रहना

दृष्टव्य-१. ओष्ठ रोग सुश्रुत की अपेक्षा वाग्भट के मतानुसार चार अधिक है—(१) गलाबुंद (२) खण्डोष्ठ (Hare lip) (३) कपोलगत (४) गण्डालजी।

२. दन्त रोग में वाग्भट ने सुश्रुत वर्णित रोगों से दो अधिक बताये हैं—(१) चालन (२) दन्त भेद।

३. दन्तमूलगत रोग वाग्भट से सुश्रुत के निम्न-

लिखित तीन अधिक हैं—(क) दन्तवेष्ठ (ख) परिदर (ग) अधिदन्त।

४. जिह्वागत रोग में वाग्भट ने एक रोग 'अधिजिह्वक' अधिक माना है।

५. तालु रोग में वाग्भट से सुश्रुत ने एक रोग 'अध्रूष' अधिक माना है।

६. कण्ठगत रोग की संख्या समान होने पर भी एक-एक रोग दोनों में भिन्न-भिन्न है। सुश्रुत ने जहाँ अधिक-जिह्वक का वर्णन किया है वहाँ वाग्भट्ट ने गलगण्ड का।

७. सर्वसर रोगों में सुश्रुत से वाग्भट्ट ने पांच अधिक माने हैं जो रक्तज मानने से एवं वातादि का द्वन्द्व होने से एवं सन्निपातज होने से कहे गये हैं।

वास्तव में सुश्रुत संहिता के वर्गीकरण को मानना चाहिए कारण कि वाग्भट्ट ने जो वर्णन किया है उसमें कुछ रोग तो किसी रोग के लक्षणों में ही आ जाते हैं यथा चालन अथवा दन्तभेद आदि। कुछ का वर्णन शल्य तन्त्र में होता चाहिए जैसे गलगण्ड आदि।

मुख रोग के कारण (निदान)—मुख रोगों की उत्पत्ति का कारण साधारणतः एक ही समान माना गया है यथा—आनूप देश में पाये जाने वाले प्राणियों का मांस रस मत्स्य (मछली) महिष ब्राह्म, सुअर का मांस से कफ प्रकुपित होकर मुख रोग उत्पन्न करता है। यही कारण है कि मांसाहारियों को मुख विकार अधिक पाये जाते मछली आदि के कांटे के गले में फस जाना, गड़जाने व

दांत में फंस जाने के कारण वेदना से छटपटाते रोगी हमारी चिकित्सा में आते ही रहते हैं।

दधि, क्षीर, इक्षुरस, उड़द के अति सेवन से भी कफ वृद्धि होकर मुख रोग उत्पन्न होते हैं। श्वासेतर पर जिनकी कफ की प्रकृति है उनको दही आदि के सेवन से कण्ठ शोथ, गलगुण्डी, तुण्डीकेरी आदि रोग होते ही हैं। वाल्यावस्था कफ प्रधान अवस्था है यही कारण है कि बच्चों को मुख सम्बन्धी रोग गलगुण्डी, टांसिल, गल-शोथ, कण्ठशोथ आदि रोग अधिक पाये जाते हैं।

मुख शुद्धि व दातुन नहीं करना, दांतों में अन्न के कण फंसे रहने से तथा ठण्डा-गरम साथ-साथ खाने से, शिराव्यध, धूम्रपान, गण्डूष, नमक का अनुचित प्रयोग करने से मुखरोग उत्पन्न होते हैं।

अतः मुख को आश्रय करके जो रोग उत्पन्न होते हैं उनका उत्पादक कारण कफ है जो उपयुक्त प्रकोपक कारणों से प्रकुपित होकर वातादि को प्रकुपित कर मुख रोग उत्पन्न करता है। वैसे भी मुख बोधक कफ का अधिष्ठान माना गया है। अतः कफ की प्रधानता मुख रोगों में होनी स्वामाविक है।

ESTD 1969

महाराष्ट्र राज्य द्वारा प्रमाणित—

—गंगा आयुर्वेद निकेतन—

शुद्ध शिलाजीत, रस, रसायन, भस्म, गुग्गुलु, दटी टेबलेट तथा बहुमूल्य योगों के निर्माता एवं होलसोल रिटेल विक्रेता

आज ही सूचीपत्र मंगाये

फोन नं २८८ (VIR)

चन्दनसार रोड, विरार (बम्बई)

नोट—बम्बई में होम डिलीवरी की सुविधा है।

ओष्ठगत रोग एवं चिकित्सा

कवि गिरिधारी लाल मिश्र

ओष्ठ (Lips) — दो गुदगुदे अवयव हैं जो कि मुख द्वार पर ऊपर नीचे स्थित हैं जिनका बाह्यावरण त्वचा द्वारा तथा आन्तरिक आवरण श्लेष्मिक कला द्वारा निर्मित है। त्वचा से आच्छादित भाग आनन ही का अंश है और श्लेष्मिक कला से आच्छादित मुख का भाग है। ओष्ठ का लाल किनारा इन दोनों भागों के बीच में स्थित है। इनमें मांसपेशी, ओष्ठगत रक्त वाहिनियां पिच्छिल तन्तु, वसा और अनेक छोटी-छोटी ओष्ठगत ग्रन्थियां होती हैं जिनका आन्तरिक आवरण अपने-अपने तालुमूल पर श्लेष्मिक कला

सूत्र समूह द्वारा जुड़ा रहता है इनमें ऊपर ओष्ठ को जोड़ने वाला समूह बड़ा होता है। ओष्ठगत ग्रन्थियां श्लेष्मिक आवरण एवं मांसावरण के मध्य में स्थित रहती हैं जो गोल छोटे-छोटे मटर के आकार से मिलती-जुलती होती हैं जिनके मुख श्लेष्मिक आवरण पर सूक्ष्म छिद्र रूप में खुलते हैं इन ओष्ठों का आश्रय लेकर उत्पन्न होने वाले रोगों का आयुर्वेद में मुखरोगाधिकार में 'ओष्ठगत रोग' संज्ञा से अभिहित किया गया है। अधोलिखित तालिका में ओष्ठगत रोग ओष्ठ प्रकोप का निदान-चिकित्सा दृष्टव्य है—

ओष्ठ प्रकोप रोग-निदान-लक्षण

चिकित्सा

- (१) वातज वायु प्रकोप से ओष्ठ खुरदरे, रुखे, कड़े तथा Cracked पीड़ायुक्त होते हैं। प्रायः शीतऋतु में ओष्ठ Lips फटते हैं। कोष्ठबद्धता में अन्य वात प्रकोपक आहार विहार से वायु प्रकुपित हो ओष्ठों का आश्रय लेकर ओष्ठों में कर्कशता, कठिनता एवं स्तब्धता उत्पन्न करता है जिससे ओष्ठ में दरार पड़ जाती हैं और फटे हुए रहते हैं आधुनिक चिकित्सक इसे Cracked lips कहते हैं।
- (२) पित्तज उष्ण पदार्थों के प्रयोग एवं पित्त प्रकोपक आहार-विहार से प्रकुपित पित्त ओष्ठों का आश्रय लेकर पित्तज ओष्ठ प्रकोप रोग को उत्पन्न करते हैं जिससे ओष्ठ में जलन, पाक एवं स्राव तथा स्पर्श असह्यता होती है। सरसों के दानों के समान पिड़िकाओं से ओष्ठ भरे रहते हैं।
- (३) कफज कफ प्रकोप से ओष्ठ पर सवर्ण-मन्द वेदना युक्त पिड़िकायें उत्पन्न होती हैं पिड़िकायें सर्षपाकृति की पीताभ व नीलाभ होती हैं। जिनमें वेदना एवं कष्ट होता है तथा शीत सहन नहीं कर सकते।

स्नेहन करें—(क) चतुर्विध स्नेह (घृत, तैल, वसा, मज्जा) में मोम मिलाकर या—(ख) राल, मोम, देवदारु, गुग्गुल, कल्क, सिद्ध तैल का पिचु बनाकर ओष्ठ पर मलें।

नाड़ी स्वेदन—लवण सहित उपनाह बांधना।

प्रतिसारण—चन्दन, राल, देवदारु, मुलेठी, गुग्गुल के घृण द्वारा प्रतिसारण करना। आधुनिक औषधियां-बोरोग्लेसरीन व बोरोलीन मलहम लगाना हितकर है। आधुनिक चिकित्सा में शल्योपचार विधान है।

रक्तमोक्षण—जन्तुका द्वारा, शिरामोक्षण।

प्रतिसारण—लोध्र, राल, मुलेठी घी में मिलाकर ओष्ठों पर मलना चाहिए।

अभ्यंग—घी व वेसलीन मलना चाहिए वमन-विरेचन द्वारा दोष हरे एवं पित्तज विद्रधि के समान उपचार करें। भोजन में उष्ण पदार्थों का सेवन न करें।

रक्तमोक्षण एवं शिरोविरेचन करें, कफनाशक धूमनस्य गण्डूष करें, विडलवण व टंकरा को मधु में मिलाकर लगावें, घृतपान व लेप तथा स्वेदन करावें।

चिकित्सा

रोग नाम

ओष्ठगत रोग-लक्षण

(४) सन्निपातज ओष्ठ प्रकोप में त्रिदोष प्रकुपित होने से ओष्ठ का वर्ण कभी पीताभ, नीलाभ Herpes व श्वेत वर्ण का होता है दाने निकलते हैं Labialis जिनमें दुर्गन्धित पिच्छिल आव, वेदना, शोथ हाता है। ओष्ठ म्लान सूजे हुए तथा पाक हो जाने से बड़ी वेदना करते हैं।

(५) रक्तज रक्त प्रकोप के ओष्ठ में खजूर फल के समान Epithelioma वर्ण वाली अथवा रक्तवर्ण की पिडिकायें होती हैं जिनसे रक्त का स्राव एवं वेदना हाता है।

(६) मांसज ओष्ठ मांस दूषित होने से आठगुरु, स्थूल एवं Papilloma मांस पिण्ड के समान उभरे हुए होते हैं। अधिक विकृति होने पर ओष्ठ में कृमि पड़ जाते हैं। आधुनिक चिकित्सक इस अवस्था को Papilloma अथवा Epithelioma of the lips कहते हैं।

(७) मेदोज ओष्ठगत मेद के दूषित होने से ओष्ठ से घी के Mebro- तरल भाग व नीलाभ, कण्डूयुक्त कोमल तथा chelia स्फटिका के समान निर्मल स्राव होता है। घाव जल्दा सूखता नहीं बल्कि हमेशा गीला ही रहता है। आधुनिक चिकित्सक इस रोग को Mebrochelia कहते हैं जो तीन प्रकार का माना गया है—

(क) सहज—जिस वंश में अय रोग हो उसमें उत्पन्न बच्चों को होता है।

(ख) जन्मोत्तर—ओष्ठ के पूर्णतया विदीर्ण हो जाने पर ओष्ठ मोटे हो जाते हैं। यह विकृति प्रायः ऊपरी ओष्ठ पर होती है।

फिरंगज—यह अन्तिम अवस्था है जो फिरंग रोग के कारण होती है।

(८) अग्नि-अग्निघातज (चोट लगने से) ओष्ठ का घातज रंग क्षत के समान विदीर्ण रक्तवर्ण फटे एवं छिले हुए होते हैं। वेदना एवं कण्डू होती है।

रक्तमोक्षण एवं साल्वण स्वेद करें। फुत्सियों से मवाद आने पर घी व मधु लगावे। नाड़ी स्वेद करें। जिस दोष की अधिकता हो उसका शल्योपचार करना चाहिए।

पित्तज ओष्ठ रोगवत् चिकित्सा करें। जलौका द्वारा रक्त-मोक्षण करना चाहिए और पित्तज विद्रविवत् उपचार करना चाहिए। इस रोग को असाध्य कहा गया है।

शल्यत्रिया द्वारा दूषित मांस निकालकर व्रण शोधन पुरण विधि से चिकित्सा करें। आधुनिक चिकित्सा शास्त्र में छेदन एवं 'रेडियम' द्वारा चिकित्सा की जाती है। आयुर्वेद में जात्यादि तैल लगाना एवं प्रताप लंकेश्वर रस का सेवन करना लाभदायक है।

आयुर्वेद में इसे साध्य रोग कहा गया है।

स्वेदन—प्रथम स्नेहन करें

मेदन—चीर कर मेद को निकालें

अग्निकर्म—मेद निकालकर दग्ध करें

शोधन—वमन विरेचन करने तथा व्रण का शोधन करावें।
प्रतिसारण—प्रियंगु, लोध्र, त्रिफला मधु से शतघीत घृत में कल्या, कपूर, सिंदूर को मिलाकर लगाना व जात्यादि तैल में मोम तथा वेसलीन मिलाकर मलहम बनाकर लगाना तथा रसमाणिक्य, गन्धक रसायन, आरोग्यदधिनी, प्रताप लंकेश्वर, मंजिष्ठारिष्ट, खदिरारिष्ट का प्रयोग करना हितकर है।

इसकी चिकित्सा रक्तज व पित्तज ओष्ठ प्रकोपवत् ही करनी चाहिए। व्रणोपचार के लिए जात्यादि तैल व इरिमेदादि तैल का प्रयोग करना चाहिए।

ओष्ठगत रोग सुश्रुत की अपेक्षा वाग्भट्ट के अनुसार चार अधिक हैं

(१) जलाबुद वात कफ के प्रकोप से ओष्ठ में जुल के बुद- बुदों की भांति होता है। आधुनिक चिकित्सा को मधु में मिलाकर प्रतिसारण करना तथा गम्भर स्थिति

शास्त्र के अनुसार भी अंकुराबुंद रक्तवाहि-
काबुंद तथा तन्त्रिकारांतु अबुंद ओष्ठों में होते
हैं। श्लेष्मिक पुटी (Mucous Cyst) और
मिश्रित अबुंद भी इस स्थिति में पाये जाते हैं—

(२) गण्डालजी गण्ड स्थल में शोथ होता है जिसमें दाह
Abscess ज्वर होता है।

(३) कपोलगत कपोलगत शोथ कपोल व ओष्ठ की स्थूलता
व का समावेश Macrochelia में होता है
स्थूलता ओष्ठ की स्थूलता के पुनः पुनः आक्रमण से
और बढ़ जाती है।

(४) छण्डीष्ठ विस्तृत विवरण ऊर्ध्वजत्रु रोगांक में देखें।

ओष्ठ प्रकोप प्रायः अन्य रोगों की विकृति में सहायक रूप से ही अधिकांशतः होता है, अतः चिकित्सकों
का विशेष ध्यान उनकी ओर नहीं जाता तथा प्रायः प्रधान रोग उपशमन के साथ-साथ ही उपद्रवों का भी
प्रशमन हो जाता है।

प्रस्तुत तालिका में रोगानुसार ओष्ठ विकृति का उल्लेख रोग निदान में सहायतार्थ किया जा रहा है—

रोगानुसार

१. विषम ज्वर, न्यूमोनिया, जुकाम
२. आमाशय, आन्त्र व पाचन विकार
३. यकृत में व्रण होने पर
४. हृदय की कमजोरी में
५. अवसाद, हृदयावरोध, फुफ्फुस शोथ
६. हृदय के दक्षिण भाग के विस्तार में
७. फिरंग (Syphilis) रोग में
८. श्लेष्मशोफ (Myxoedema) में
९. उपदंश व पैतृक उपदंश में
१०. रक्ताल्पता (Aneamia) में
११. शीतपीत (Urticaria) में
१२. स्कर्वी (Scurvy) में
१३. रक्तवाहिनी व नाड़ीशोथ
१४. कोष्ठबद्धता व अजीर्ण में
१५. पित्ताधिक्य व व्रण शोथ में
१६. वाताधिक्य व वात प्रकृति रोगों में
१७. क्षय रोग में
१८. पुरानी खांसी व फेफड़ों के रोग में
१९. उन्माद रोग में
२०. बोनापन-बुद्धपन में

ओष्ठ विकार

ओष्ठों पर विस्फोट होते व फूट कर सूख जाते हैं
ओष्ठ सूखे रहते हैं या फट जाते हैं, नीलाभ होते हैं
ओष्ठ गहरे पीले हो जाते हैं
ओष्ठ नीलाभ हो जाते हैं व फोकापन रहता है
ओष्ठ नीलाभ हो जाते हैं
ओष्ठों पर कालिमा (Cyanosis) होता है
ओष्ठों पर तारकाकारविदार (Stellate Fissures) होते हैं
ओष्ठ मोटे हो जाते हैं
ओष्ठ पर सफेद दान तथा खुरण्ड व गांठ सी बन जाती हैं
ओष्ठ की प्राकृतिक लाली बदलकर पीले व फीके हो जाते हैं
ओष्ठों पर सूजन हो जाया करती है
ओष्ठ नीले-नीले हाकर सूज जाते हैं और फट जाते हैं
ओष्ठों की सूजन में (Chelitis) होती है
ओष्ठ नीलाभ हो जाते हैं
ओष्ठ लाल और शोथयुक्त होते हैं
ओष्ठ सूखे और विदीर्ण होते हैं
ओष्ठ छोटा-मोटा और खुरदरा हो जाता है
ओष्ठ नीलाभ हो जाते हैं
ओष्ठों से लाला बहती रहती है
जन्म से ही ओष्ठ मोटे होने हैं

ओष्ठ रोगों की चिकित्सा में उपयोगी अनुभूत योग

१. टंकण व शुभ्रा मसम को मधु से मिलाकर ओष्ठों पर लगाना हितकर है।

२. बोरिक एसिड, जिक ओक्साइड [सुहागा और जस्ता] को बेसलीन में मिलाकर लगाने ।
३. बोरिक एसिड व शुभ्रा [फिटकरी फूला] व एक्कीपलाविन को ग्लिसरीन में मिलाकर लगावें ।
४. बोरिक एसिड को गरम पानी में डालकर सेक करना भी हितकर है ।
५. शतघीत घृत का लेपन हितकर है, पर बेसलीन भी अच्छा प्रतिनिधि हैं ।
६. शतघीत घृत ५० ग्राम में कत्था २० ग्राम, कपूर तथा सिन्दूर दस-बस ग्राम को मिलाकर लगावें ।
७. मोंम, गुड़ और राल को घृत में षकाकर लगाने से समस्त ओष्ठ रोग दूर होते हैं ।
८. नीम के पत्ते पानी में उबाल कर प्रक्षालन करना हितकर है ।
९. यष्टिमधु तथा गन्धक [शुद्ध] को समान मात्रा में मधु से लगाना एवं खाना लाभदायक है ।
१०. रस माणिक्य, गन्धक रसायन, आरोग्य वर्धनी वटी, मन्जिष्ठाचरिष्ट, खदिरारिष्ट का सेवन करावें ।
११. जात्यादि तैल व हरिमेदादि तैल में मोंम मिलाकर मलहम बनाकर लगाना लाभदायक है ।

पथ्यापथ्य—वमन, विरेचन, लघन, स्वेदन, तृणधान्य
यव, मुद्ग कुलस्ययूष, पटील, ताम्बूल, खदिर, कर्पूर, घृत,
क्षारोदक भावित स्नेह जागलमांस रस पथ्य है ।

अपथ्य—अम्लरसयुक्त द्रव्य, रुक्मजन्त, अधोमुखप्रयम,
गुरु अभिष्यन्दी द्रव्य, आनुप मांस अपथ्य है ।

साध्यासाध्यता—ओष्ठ रोग प्रायः अन्य रोगों के उप-
द्रव रूप में होने पर प्रमुख रोग के शमन के साथ-साथ
शमन हो जाते हैं तथा शस्त्रकर्म असाध्यावस्था में हित-
कर हैं ।

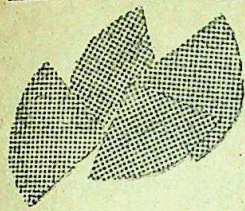
× × × ×

बापू ने कहा था

“सारे धर्म मूल में एक ही हैं, यद्यपि वे पेड़ क
पत्तों की तरह विस्तार और बाह्य रूप से एक
दूसरे से अलग हैं । कोई भी दो पत्ते एक से नहीं
होते । फिर वे आपस में नहीं लड़ते, बल्कि
हवा में साथ-साथ खुशी से नाचते हैं और एक
साथ मिलकर मधुर संगीत बनाते हैं ।”

आज उनके जन्म दिवस पर क्या हम उनके वचनों के अनुसार चलने का व्रत लेगें ।

सूचना एवं जन सम्पर्क विभाग, उत्तर प्रदेश



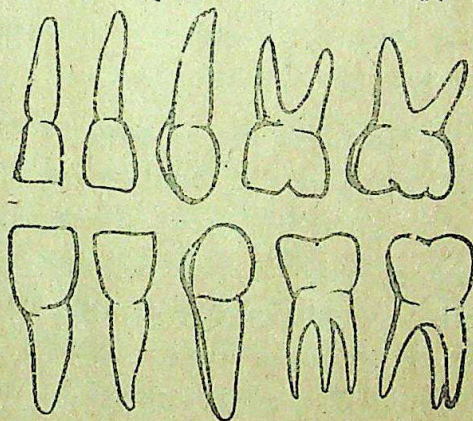
दन्त

एक अध्ययन

वैद्य श्री राजकुमार सिंह कुरावाहा

अस्थायी दांत

अस्थायी दांत प्रत्येक हनु में १०-१० होते हैं और प्रत्येक आधे हनु में पांच-पांच दांत होते हैं। साधारणतया यह प्रत्येक बालक में ६ माह की आयु के बाद निकलना प्रारम्भ होते हैं। प्रायः सर्वप्रथम अधोहनु के दो कर्त्तनक (Incisors) निकलते हैं तथा फिर उर्ध्व कर्त्तनक। इस प्रकार धीरे-धीरे ऊपर नीचे के दांतों का निकलना जारी रहता है और लगभग २॥ वर्ष में २० दांत पूर्णरूप से निकल आते हैं। छठे वर्ष पश्चात् इनका पतनकाल आ जाता है और यह १२ वर्ष की अवस्था तक क्रमशः



गिरते रहते हैं। इनके स्थान पर स्थायी दांत क्रमशः निकलते जाते हैं।

रचना—रचना की दृष्टि से अस्थायी दांत तीन प्रकार के होते हैं—

१. कर्त्तनक या राजदन्त (Incisors)—इनकी संख्या कुल आठ होती है। यह चार निचले हनु में होते हैं। यह प्रत्येक निचले हनु के दायें और बायें भाग में २-२ होते हैं। इनका काम भोजन को काटना होता है तथा यह मुख की शोभा भी बढ़ाते हैं।

२. रदनक या भेदक (Cuspids or Canines)—

इनकी संख्या केवल चार होती हैं जो प्रत्येक हनु के आधे भाग में दायें-बायें एक-एक होता है। यह पदार्थ को छोटे-छोटे भागों में तोड़ता है। इन्हें बोलचाल की भाषा में सूआ भी कहते हैं।

३. चर्वणक (Molars)—यह संख्या में आठ होते हैं। प्रत्येक हनु के आधे भाग में दायें-बायें दो-दो रहते हैं। इनका काम चबाने का रहता है। इन्हें दाढ़ें भी कहते हैं।

स्थायी दांत

दूसरे प्रकार के दांत जो स्थायी होते हैं पुनर्दन्त कहलाते हैं। यह जीवन भर रह सकते हैं और यदि वृद्धावस्था या अन्य किसी कारण से यह गिर जाय तो पुनः नहीं उगते हैं। अस्थायी दांत तो २० होते हैं परन्तु स्थायी दांतों की संख्या ३२ होती है। २० दांत तो अस्थायी दांतों के स्थान पर ही निकलते हैं और १२ दांत पहली बार ही निकलते हैं। ऊपर हनु में १६ तथा नीचे हनु में १६ दांत होते हैं तथा प्रत्येक हनु के आधे दायें-बायें भाग में ८-८ दांत होते हैं।

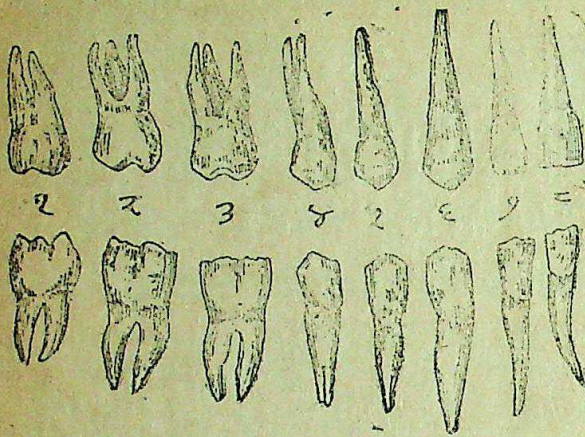
भेद—

स्थायी दांत चार प्रकार के होते हैं—

१. कर्त्तनक या राजदन्त (Incisors)—यह संख्या में आठ होते हैं और प्रत्येक हनु के आधे-आधे भाग में दो-दो होते हैं। यह ऊपर से तीखे और चपटे मालूम होते हैं तथा काटने का कार्य करते हैं।

२. रदनक या भेदक (Canines)—यह संख्या में चार होते हैं तथा प्रत्येक हनु के आधे-आधे भाग में एक-एक होते हैं। यह कर्त्तनक दांत के पास तीसरे नम्बर पर होता है और नुकीला होता है।

३. अग्र चर्वणक (Premolars)—यह संख्या में ८



होते हैं तथा प्रत्येक हनु के आधे भाग में दो-दो होते हैं। इन्हें छोटी दाढ़ें कहते हैं। इनका ऊपर का भाग चपटा होता है। ऊपर के चपटे भाग में २-२ उभार और दो-दो गढ़े भी होते हैं। इनका कार्य चबाने का होता है। इनका स्थान रक्तक दांत के बाद चौथे और पांचवें नम्बर पर होता है। यह कपोलों से ढके रहते हैं।

४. पश्चिमी चवर्णक (Molars)—इनकी संख्या १२ होती है। प्रत्येक हनु के आधे भाग में यह ३-३ होते हैं। यह अन्य दांतों की अपेक्षा अधिक मोटे और ऊपर से चपटे होते हैं। चपटे भाग में कुछ गढ़े और चार उभार भी होते हैं। इनका स्थान हनु के किनारों के पास ओष्ठ की मध्यवर्ती रेखा से छठे, सातवें, आठवें नम्बर पर होता है। यह बारह दांत प्रथम बार ही स्थायी रूप में उत्पन्न होते हैं।

अक्षल दाढ़ (Wisdom tooth)—पश्चिम चवर्णक का आखिरी दांत होता है जो १८ से २५ वर्ष की आयु में उत्पन्न होता है।

बाह्य रचानानुसार दांत के निम्न भाग होते हैं—

[क] दन्त शिखर (Crown)—यह दांत का वह भाग होता है जो हमेशा दिखलाई देता है। सफेद एवं चमकीला होता है।

[ख] दन्त ग्रीवा (Neck)—यह दांत का वह भाग होता है जहाँ दन्तमूल तथा दन्तशिखर परस्पर मिलते हैं। यह संधि स्थान कुछ संकुचित होता है, मसूढ़े, दन्तमूल से ग्रीवा तक ही आते हैं।

[ग] दन्तमूल (Root)—यह प्रत्येक दांत का अन्तिम भाग है जो कि हनु के गढ़े में गड़ा होता है।

दन्त रचना एवं संगठन

१. दन्त कवच (Enamel)—यह शिखर पर विपका हुआ श्वेत एवं चमकदार पदार्थ होता है। यह शरीर का सर्वाधिक कठोर पदार्थ है। यह दांतों की रक्षा के साथ-साथ उनकी सौन्दर्यवृद्ध करता है। इसमें न तो रक्तवाहिनियाँ होती हैं और न ही वात तन्तु होते हैं। इसके टूटने पर कोई वेदना नहीं होती तथा नहीं यह पुनः उत्पन्न होती है। इसका वर्ण प्रकृति अनुसार भिन्न भी हो सकता है।

२. दन्त प्रस्तर (Cementum)—यह भी कठोर पदार्थ है जो स्वस्थ अवस्था में दन्त ग्रीवा से दन्त मूल तक दन्त सार (Dentine) नामक दांत के अन्तिम पदार्थ पर चढ़ा रहता है। यह दांतों की रक्षा करता है तथा दंत स्थित तन्तुओं को हृन्वस्थ में अपने स्थान पर ठीक प्रकार से जकड़े रहता है।

३. दन्त प्रस्तर छादक कला (Predental Membrane of Pericementum)—यह सूक्ष्म तंतुमय आवरण है जो कि दन्त प्रस्तर पर ग्रीवा से मूल तक लगी रहती है और उसे बंटोद्वखल से जोड़ती है और दन्त प्रस्तर की भी रक्षा करती है। इसमें वात एवं रक्तवाहिनियाँ होती हैं।

४. दन्तसार (Dentine)—इसका वर्ण श्वेताभ या पीताभ होता है। दांत का अन्तिम भाग कहा जा सकता है क्योंकि दांत की पोषण प्रणाली और घमनी आदि का स्थान इसीमें होता है। इसमें छोटी-छोटी वात वाहिनियाँ और रक्तवाहिनियाँ होती हैं। इसीसे दांत में पीड़ा शीतलता और उष्णता का आभास होता है।

५. दन्त पोषक प्रणाली—यह दांत का मध्य रिक्त भाग होता है। इसके निम्न कार्य होते हैं—

क अपने चारों तरफ दन्तसार का निर्माण करना।

ख पीड़ा, उष्णता, शीतलता आदि अनुभव करना।

ग अपने अंदर स्थित घमनियों आदि से दांत का पोषण करना एवं उसकी रक्षा करना।

इसमें जो घमनियाँ, शिरायें और केशिकायें तथा अन्य लसिका वाहिनियाँ आदि होती हैं वह सभी दांतों का पोषण करती हैं एवं दांतों के कार्यरूप प्रदान करती हैं। इनमें से किसी भी भाग के विकृत होने पर रोग की उत्पत्ति होती है।

दन्तमूलगत की चिकित्सा एवं चिकित्सा

कविराज डा० वेदप्रकाश गुप्ता बी० आई० एम० एस०, ६-ई कृष्णानगर दिल्ली-५१

सन् १९४२ में मुझे दाँत में शूल हुआ तो शूल नाशक लवंग तैल, क्लोरोफार्म, नुसार प्रयोग किया एवं डाक्टरों जनरल प्रक्टिशनर की चिकित्सा से जब लाभ नहीं हुआ तो किसी दन्त विशेषज्ञ के पास गया।

उसने दाँत का भली प्रकार से निरीक्षण करके दो दाँतों के मध्य मसूढ़ में से फंसा हुआ अमरुद का बीज निकाला, शूल शान्त हो गया, तब से मुझे दाँतों के सम्बन्धित रोगों में रुचि पैदा हुई।

मैंने अनुभव किया कि दाँतों में कीड़ा, मसूढ़ों में सूजन मसूढ़ों से रक्त या प्यु आना, पानी लगना दन्त हिलना यह सामान्य रोग दन्तमूल में विकार के कारण ही हैं।

आधुनिक विज्ञान में साधारण चिकित्सक गमपेंट, टैनिक ग्लिसरीन, टिकचर कैम्फरा कम्पौंड, पोटेशियम परमंगनेट, फिटकरी का वाह्य एवं एस्प्रेरीन, विटामिन्स ए० एण्ड डी० विटामिन के, लीवर एक्स्ट्रेक्ट, ट्रीट्रासाइक्ल लैड्रोमाईसीन इत्यादि का आन्तरिक प्रयोग करते हैं।

कई बार दन्त विशेषज्ञों से विचार विमर्श हुआ तो उनका एक ही मत दाँत उखाड़ना नये दाँत लगवाना ही दाँतों की चिकित्सा है। अनुसंधान दाँतों की रक्षा करने को हो रहा है जिसके कारण अनेक प्रकार की दूधपेस्ट का निर्माण हो रहा है परन्तु सफल आयुर्वेदीय मंजन ही है। आयुर्वेद चिकित्सा ही है।

आयुर्वेद में दन्तमूल में २० प्रकार के रोगों के लक्षण एवं चिकित्सा लिखी है। यह हम आधुनिक विज्ञान से मिलान करना चाहें तो उसे चार रोगों में ही सभी न्यून अधिक कर सकेंगे यथा शीताद रोग Spongy gums, bleeding) तीन अवस्थाएँ हैं रोग का स्थान दन्त वेष्ठ (मसूढ़)।

पहली अवस्था—लक्षण—मसूढ़ों में से बिना कारण रक्त निकलना, मसूढ़ ढोले, मृदु हो जाना।

दूसरी अवस्था—मसूढ़ों (मुख से वदव आना) मसूढ़ों का मांस दाँत से पृथक हो जाना, दन्तमूल का नजर आना।

तीसरी अवस्था—दाँत का गिर जाना।

चिकित्सा—मसूढ़ों को मजबूत बनाने के लिये उसकी मालिश, अभ्यंग बहुत ही आवश्यक है। यह प्रथम अवस्था में ही सम्भव है। टिकचर माइरह (Myrah Co.) मसूढ़ों पर लगायें।

अनुभूत मंजन—१. रीठों की काली गिरी को जला कर राख बना दें—१ तोला सोमाग्य भस्म, १ तोला स्फटिका भस्म, १ तोला सेंधा नमक। इसे कूट पीसकर अन्त में माजूफल चूर्ण एक तोला मिला दें। नित्य प्रति दाँत के मसूढ़ों पर लगाने से मसूढ़ों से रक्त आना बन्द हो जायेगा।

२. कीकर की दातुन चबायें।

३. धनियाँ के क्वाथ में स्फटिका घोलकर कुल्ला करें

४. खदिरादि वटी चुस्सें।

५. त्रिफला और नमक मिलाकर नित्य मंजन करें।

द्वितीय अवस्था की चिकित्सा में—रात्रि में इरिमे-दादि तैल द्वारा मसूढ़ों का अभ्यंग, चन्द्रप्रभा वटी २ गोली पानी से तीन बार दें।

तृतीय अवस्था में—दाँत उखड़वाना ही उचित है।

दन्त पुष्पट (GUM BOIL)—

कारण—वाह्य वस्तु जब दो दाँतों में, मसूढ़ में फंस जाय तो मसूढ़ों में सूजन आ जाती है।

लक्षण—मसूढ़ लाल, शूलयुक्त तथा सूजा होता है।

चिकित्सा—आयुर्वेदीय चिकित्सा श्वेत मरिच और मधुर क्षार (Soda bi carb) का लेप लगाने से मसूढ़ में जल स्राव हो मसूढ़ नरम हो जाता है। वाह्य वस्तु उसी स्राव में निकल जाती है।

गुद गन्धक ४ रत्ती, रस माणिक्य १ रत्ती। तीन

मात्राये मधु से दें। पथ्य में केवल खिचड़ी।

आधुनिक—मोड्रीबोन (Modribon) आधी गोली प्रातः आधी गोली शाम।

१. गरम पानी में पोटेशियम परमैंगनेट डालकर उस स्थान पर सैक करें।

२. गरम पानी में Magsulph घोलकर ऊपर से सैक करें।

३. परिदर ४. उपकुश ५. सोशिरः ६. महासोशिरः शीताद (Spongy Gums) की तृतीय अवस्था के लक्षण हैं—मसूढ़े गलकर दन्त को छोड़ देते हैं।

चिकित्सा—दाँत निकाल दें। ट्रेटापाईकलीन के चार कैपसूल प्रतिदिन ३ दिन तक दें। लाक्षादि तैल (भाव प्रकाश) का पित्तु मसूढ़ों पर दाँत निकलवा कर लगायें।

पथ्य—मूंग की दाल, पतली खिचड़ी।

७. दन्तवेष्ट (Pyorrhoea), दन्तनाड़ी, उपकुश।

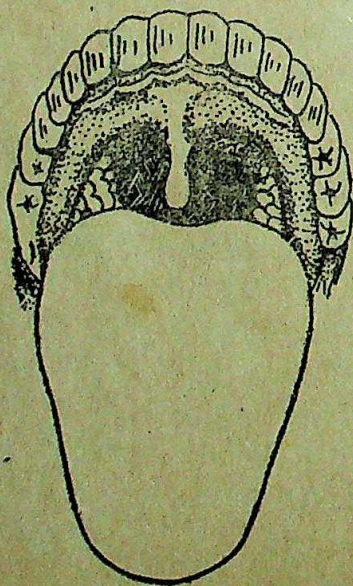
लक्षण—

स्वन्ति पूय, रुधिरं चलाः भवन्ति च।

दन्तवेष्टः स विज्ञेयो दुष्ट शोणित सम्भवः॥

पूय स्राव, दन्त ग्रीवा के समीप पूय संचय होकर पूय कोष (Pus pockets) से स्राव।

रुधिरं चलाः—मसूढ़े शोथयुक्त होने पर रक्त स्राव वर्धात रक्तस्राव प्रथम अवस्था, पूय स्राव द्वितीय अवस्था।



१. दन्तों के मध्य भाग के अन्तर में वृद्धि।

२. दन्त ग्रीवा नग्न।

३. दाँत हिलना।

शारीरिक लक्षण—सामान्य स्वास्थ्य दुर्बल, पाचन शक्ति क्षीण, अरुचि, अजीर्ण, अग्निभाँद्य, आँख सूजन, प्रदाह आदि आमाशय, पक्वाशय के अनेक रोग, गलग्रन्थि शोथ, रक्त विकार, शिरःशूल आदि उपद्रव होते हैं।

चिकित्सा—दन्तवेष्ट के रोगी दाँत विशेषज्ञ के पास जाने से पूर्व आयुर्वेदीय चिकित्सकों के पास अधिक आते हैं अतः अपने चिकित्सा काल में अनेक प्रकार के मंजन बनाये। उन सब का प्रयोग कराने पर जातिपत्रादि मंजन ६०-७० प्रतिशत रोगियों पर सफल रहा।

जातिपत्रादि चूर्ण (योग रत्नाकर)—चमेली के पत्ते, साँठीमूल, गज पीपल, पीला वाखा पत्र, कूठ, बच, सोंठ, अजवाइन, हरड़, तिल। इन दस औषधियों को समान भाव लेकर चूर्ण बनायें। दिन में दो बार दाँतों पर लगायें।

मेरा अनुभव—चिकित्सा काल में चंचल गुप्ता आयु उस समय १५-१६ वर्ष की। लक्षण—प्रायः दाँतों से रक्त एवं कभी-कभी पूय आता था। जिसके कारण वमन, शिरःशूल रक्तमूत्रता शारीरिक लक्षण थे शीत पित्त भी था। डाक्टरों दृष्टपेष्ट दिया, पैसलीन के इंजेक्शन लगाये तथा विटामिन सी देते रहे, कभी लाभ कभी नहीं। हमारे औषधालय में दो प्रकार के मंजन थे—

१. त्रिफला, त्रिकटु, तूतीया तीनों लवण पतंग माजुफल।

२. रीठा के बीजों का कोयला और नमक।

३. बादाम का छिलका का कोयला, मौलसरी की छाल, कीकर की छाल, शीतल चीनी, फिटकरी का फूल।

पहले मंजन के प्रयोग से मुख का स्वाद कसला रहता था दाँतमूल काले हो गये। नं० १ के प्रयोग से पूय बन्द हो गई रक्त बंद नहीं हुआ। नं० ३ के प्रयोग से जब तक प्रयोग करती थी तब तक ठीक पुनः रोग हो जाता था जातिपत्रादि चूर्ण के मंजन से दाँत ठीक हो गये।

वैदर्भ (Gingivitis ulcerative)—

कारण—दातुन की कूची या हाई दुध ब्रुश या किसी प्रकार कठोर वस्तु की रगड़ से मसूढ़े छिल जाने पर शोथ हो जाती है।

धन्वन्तरि

लक्षण—मसूढ़ों में पीड़ा, शोथ, जलन होती है।

चिकित्सा—सत पोदीना, पिपरमेंट, सत अजवाइन, (घायमोल) कपूर तीनों को एक शीशी में डालकर बन्द कर दें। यह अकं बन जायेगा। इसकी फुरेरी मसूढ़ों पर लगाने से रोग से छुटकारा मिलता है।

नाड़ी व्रण—

कारण—दन्त वेष्ठ (Pyorrhoea) की सम्यक चिकित्सा नहीं करने से मसूढ़ों के निचले भाग से पूय आने लगती है, मांस खाने वालों में मछली के कांटा चुभ जाने से भी होता है।

लक्षण—दन्तशूल, निरन्तर मसूढ़ों से स्राव, भोजन करने में कठिनाई होती है।

१. शूल और स्राव रात्रि में होना [वाताधिकता]
२. शूल और स्राव पीत वर्ण, दाह का होना [पित्त]
३. कण्डु तथा लेसदार स्राव दिन और रात्रि को (कफ)
४. सभी लक्षणों से युक्त त्रिदोषज
५. कांटा चुभने पर शल्यज

अनुभूत चिकित्सा—वैद्य दौलतराम सदस्य नगर निगम दिल्ली ने अनेक रोगियों को रोग से छुटकारा दिलाया। सीभाग्य भस्म एक माशा दिन में दो बार पानी से खाये। इसी सीभाग्य भस्म को रात्रि सोते समय व्रण पर लगा दें। हमारे औषधालय में महामंजिष्ठादि काढ़ा, मंजिष्ठादि काढ़ा १ तोला, दिन में दो बार चन्द्रप्रमावटी ४ गोली से प्रयोग साथ-साथ करवाते थे। निश्चित लाभ होता है।

दंतदालान, दंतशूल (Tooth ache)

कारण—मसूढ़ों में शोथ, दंत नाड़ी, कृमिदंत, वैदर्भ अघिमांस, दंत विद्रधि इत्यादि रोगों में होता है।

लक्षण—इन रोगों में दंत नाड़ी के नंगा हो जाने से उनके दंत मूल और आसपास तीव्र रुजा हो जाती है।

चिकित्सा—कृमिदंत, विद्रधि, दंतदालान इत्यादि की चिकित्सा के समान ही है।

ग्रामीण और शहरी क्षेत्रों में सर्वत्र सुलभ औषधि—

१. नमक शूल वाले स्थान पर लगायें

२. नृसार को रुई में रखकर शूल स्थान पर लगायें

३. कपूर खोड़ (शूल स्थान) में भर दें

४. खाने वाला तम्बाकू शूल स्थान पर लगा दें

५. लौंग का तेल लगायें

किसी भी औषधि के प्रयोग से लालास्राव होने लगेगा उसे बाहर फेंकते जायें, मुख को खुला छोड़ दें

६. स्प्रिट क्लोरोफार्म की फुरेरी लगाने से भी लाभ होता है।

७. अकं कपूर, कपूर आसव, अमृतधारा की फुरेरी से भी शूल शांत होता है

कृमिदन्त (दांत में कीड़ा)—

प्रसिद्ध प्रयोग—कपूर, सत पोदीना, क्लोरोहाईड्रेट तीनों एक-एक औंस शीशी में डालने पर लोशन बन जायेगा। उस लोशन में ३० बूंद कार्बोलिक एसिड डाल दें। इस लोशन की फुरेरी शूल स्थान पर लगाते ही कृमि दंत की शूल दूर हो जाती है। अमृतधारा अथवा कुर्रा-सव लगाने पर इच्छित लाभ मिलता है। ग्रामीण लोग छोटी कटेरी के पत्तों को चबाकर थूकने को कहते हैं या सूखे फल को जलाकर उसका धूम्र शूल वाले स्थान पर देते हैं। अजवाइन का धूम्र बहुत लाभ देता है, कीड़ों को बाहर निकालता है। यह सूक्ष्म कीड़े नजर नहीं आते। पपीते का पत्ता तोड़ने पर जो दूध निकले उसे रुई में भिगो दें। उस फुरेरी को कृमि दंत में भर दें, कृमि मर जाते हैं। अकरकरा का चूर्ण दांत की खोड़ में भरने से भी कृमि नष्ट होते हैं। जातिपत्रादि चूर्ण को खोड़ में बारम्बार भरते रहे, उसे मुख पर लार द्वारा निकलने दें, कृमि निकल जायेंगे, शूल शान्त होगा। क्रियोनोट और लवङ्ग का तेल दुगुना लेकर रख लें, इसकी एक ही फुरेरी शूल को शान्त कर कृमिनाश करने की शक्ति रखती है। घनिया के काढ़े में फिटकरी घोलकर कुल्ला करने से भी कृमिनाश होकर शूल शान्त होता है।

सिद्ध चन्द्रोदय बटी

॥ ॥ ॥

पहिले परीक्षा योजना—(३१ दिसम्बर १९८१ तक)

इस योजना में सिद्ध चन्द्रोदय बटी का १ सेंट (१२५ गोली की एक शीशी + २१ गोली की १ शीशी) १८.०० मनियाडर से मिलने पर रजिस्ट्री से या १६.०० की वी० पी० से भेजा जायगा। २१ गोली वाला पैक पहिले खोलकर व्यवहार करें। संतुष्टि न होने पर १२५ गोली वाला पैक वापस भेज दें। पोस्ट व्यय कम करके आपका रुपया वापस भेज देंगे। अधिक सेंट या गोलियां मंगाने पर मूल्यादि निम्न प्रकार होंगे—

तादाद	मूल्य रजिस्ट्री से	मूल्य वी. पी. से
१ सेंट	१८.००	१६.००
२ सेंट	३२.५०	३४.००
४ सेंट	६१.००	६२.५०
५०० गोली	५१.५०	५३.००
१००० गोली	६६.००	६७.५०
२००० गोली	१८८.००	१९१.००

ये मूल्यादि कमीशनादि कम करके, विक्रीकर + पोस्ट व्यय शामिल है। इन मूल्यों पर किसी का किसी प्रकार का कमीशन नहीं दिया जायगा।

नवयौवन मलहम—मुरदार नसों पर मालिश के लिए है। १ ट्यूब का मूल्य ४.५० है। सिद्ध चन्द्रोदय बटी के साथ (कमीशन कम करके) ३.५० होगा। मनियाडर भेजते समय ३.५० अधिक भेजें। वी.पी. ४.०० अधिक की भेजेंगे।

—मंगाने का पता—

ज्वाला आयुर्वेद भवन
मामू भांजा रोड, अलीगढ़।

☼ शरद ऋतु में सेवन योग्य ☼

सम्पन्न व्यक्तियों के लिए

तीन महौषधियां

जो व्यक्ति सम्पन्न हैं, पैसा खर्च कर सकते हैं उनके लिये हमने तीन शीघ्र प्रभावी औषधियों का निर्माण किया है—

- (१) नपुंसकत्वारि—सब प्रकार के नपुंसकों को शानदार जीवन बिताने के लिए इससे बढ़कर अन्य औषधि नहीं है। इसके कुछ दिनों के सेवन से पुर्ण यौवन आ जाता है। मूल्य ६० गोली २५.००
- (२) कामशक्ति केशरी—स्वर्ण, हीरा, पन्ना, माणिक्य आदि बहुमूल्य औषधियों से निर्मित यह औषधि सभी वीर्यवर्धक औषधियों में सर्वोत्तम है। मूल्य ६० गोली ८५.००।

- (३) वसन्त कुसुमाकर—विशेष रूप से बनाया गया सर्वोत्तम। मूल्य ६० गोली १०५.००।

हमारा अनुभव है कि आप कामशक्ति केशरी १ गोली, नपुंसकत्वारि १ गोली तथा वसन्त कुसुमाकर १ गोली तीनों को मिलाकर १ मात्रा बना लें, प्रातः सायं १-१ मात्रा सलाई के साथ और ऊपर से सिन्ध्री मिलाकर दूध पी लें। चमत्कारिक लाभ होगा। तीनों औषधियां १ माह के लिए कमीशन कम करके विशेष रियायत में १६१.००, सेलटैक्स पोस्ट व्यय पृथक होगा। १८०.०० मनियाडर से भेजकर एक सेंट रजिस्ट्री से मंगालें। वी. पी. १८५.०० की भेजी जायगी। इसमें सेलटैक्स पोस्ट व्यय आदि सभी शामिल हैं।

- (४) मुरदार नसों पर मालिश के लिए नवयौवन मल भी मंगालें। १ ट्यूब का मूल्य ४.५०।

—मंगाने का पता—

श्री ज्वाला आयुर्वेद भवन
मामू भांजा रोड, अलीगढ़।

कृमिदन्त

वैद्य श्री डा. रणवीर सिंह शास्त्री एम. ए., पी. एच. डी. आयु.

कृमि दन्त रोग का संक्रमण—

जिस व्यक्ति के एक दांत में कीड़ा लग जाता है उसके अन्य दांत में भी कीड़े शनैः शनैः लग जाते हैं। कीड़े दांतों को खोखला कर देते हैं, जीर्ण शीर्ण होने से दांत टूट जाते हैं और उनकी जड़ें मसूढ़ों में ही जमी रहती हैं। कभी-कभी कीड़ा इन जड़ों को भी खाने लगता है जिससे महती वेदना होकर रोगी उत्पीड़ित हो जाता है, फल-स्वरूप वेदनायुक्त दन्त मूलों को भी शालाक्य क्रिया द्वारा बाहर निकाला जाता है। यह असह्य पीड़ा कर देता है।

संक्रमण का प्रतिकार—

१. प्रतिदिन प्रातः एवं रात्रि में दांतों को नीम, कनेर, अकंमूल, अपाप्राग मूल, रोहिणी वृक्ष शाखा आदि कृमि-नाशक वृक्षों से दन्तधावन करना चाहिए। यदि यह सम्भव न हो तो त्रिफला, वायविडङ्ग, भुना तूतिया (बिप) नमक सेंधा, कपूर डली, इनका मंजन बनाकर प्रयोग करें। यह स्मरण रहे कि तूतिया शुद्ध १ तोले को १०० तोले मंजन में मली प्रकार मिलाना है। तुल्य वान्ति भ्रांतिकारक विष है, अतः सावधानी रखनी आवश्यक है।

२. प्रतिदिन प्रातः व रात्रि में गर्म पानी में नमक डालकर कुल्ले करने चाहिए। तेजवल (तुम्बरू) के बीजों के चूर्ण या छाल का मञ्जन करने से दांतों में कीड़ा लगने का भय नहीं रहता। बहुत से व्यक्ति तुम्बरू की टहनी की दन्त धावन भी करते हैं।

की दन्त धावन भी करते हैं।

३. सर्प तेल और सेंधा नमक का सूक्ष्म चूर्ण मिलाकर दांतों और मसूढ़ों पर मलना चाहिए। इससे दांतों का दूषित मल निकल जाता है और दांत सुदृढ़ हो जाते हैं।

४. बहुत से कृमिदन्त के रोगियों को हुलास (तम्बाखू के पत्तों से बना सुगन्धित नस्य) का मंजन करवाता हूँ। इसके प्रयोग से दांतों में कीड़ा नहीं लगता, न मसूढ़े फूजते हैं। सबसे महती हानि हुलास के प्रयोग से यह होता है कि तम्बाखू का व्यसन हो जाता है। इससे छुटकारा मिलना कठिन होता है।

कृमिदन्त की चिकित्सा—

शास्त्रीय मर्यादा के अनुसार प्रथम वातहर विधि^१, कटुगुण औषध तेल के गण्डूष, औषध कवल धारण तथा कृमिदन्त रोग में रक्त मोक्षण, घृष आदि का प्रयोग भी लाभकारी है।

१. कृमिदन्त की पीड़ा शान्ति के लिए हींग^२ की छोटी डली को अग्नि पर गरम कर कीड़े वाले दांत के नीचे दबाने से शूल शान्त होता है तथा कृमि नष्ट हो जाता है।

२. सारिवा^३ के पत्ते को पीस कर कृमिदन्त के छिद्र में भरने से दन्तशूल और दन्त कृमि नष्ट हो जाते हैं।

३. नीली काकजंघा^४, कडुई तुम्बो की जड़, इनमें किसी एक को पीसकर दांत के खोखल में रखने से कीड़े

^१ दन्तरोगेषु सर्वेषु शस्तो वातहरोविधिः। पक्वं तैलं कवोष्णं च शस्त्रं कवल धारणे ॥

जयेद् विस्त्रावणौः स्विन्नमचलं कृमि दन्तकम् । ... स्नेहः गण्डूषः धारणः ॥

—योगरत्नाकार—दन्तरोग चिकित्सा १-२

^२ कृमि दन्तापहं कोष्णं हिणु दन्ताम्बरेस्थितम् ॥

^३ पिष्ट्वा च सारिवा पर्णं दृढं दन्तेषु धारयेत् । पतन्ति दन्तकीटाश्च चाश्चल्यं हरति क्षणात् ॥

—वेद्य विलास योग०

^४ नीली वायसजंघा कटु तुम्बोमूलमेककम् । संचूर्ण्य दशनबिधूतं दशनकृमि पातनं प्राहुः ॥

—चिकित्सा सार० योगरत्न०

नष्ट हो जाते हैं। ऐसे अनेक प्रयोग वैद्यक शास्त्रों में मिलते हैं।

कृमिदन्त पर अपने अनुभव—

दाँतों में लगे कृमि को निकालने के लिए इस लेख को को लिखने वाले चिकित्सक ने कई सफलताएँ प्राप्त कीं, उन सफलता देने वाली औषधियों को अधःस्थली पर लिखा जा रहा है—

१. प्याज के बीजों का धूम कृमिजन्य दन्त पर देने से थोड़े समय में ही कीड़ा दाँत से बाहर आ जाता है। इस प्रक्रिया के लिए सुराही का सहारा लेना चाहिए।

२. फल कटेरी (नीले फूलों वाली) के शुष्क बीजों का धूम कीड़े लगे दाँत को देने से कीड़ा निकल जाता है।

४. तम्बाखू को पीसकर छोटी सी पोटली बनाकर कृमिदन्त की सिकाई करें। इस प्रकार कई बार गरम पानी में पोटली को पकाकर दाँत के नीचे रखने से कृमि मर जाता है। तम्बाखू के भीतर पहुँचने से वान्ति भ्रान्ति उत्पन्न होती है।

५. हींग, नौसादर, कपूर, अफीम, एलुआ इनमें से किसी एक की दन्त छिद्र में समाने योग्य डली को गरम करके दाँत के खोल में भर दें। इससे पीड़ा शान्त होगी तथा दाँत का कीड़ा भी मर जायेगा।

६. बन्दाल फल से दाँत की सिकाई करने पर भी कीड़ा मर जाता है, बन्दाल फल का रस किसी प्रकार भी गले में न पहुँचे, अन्यथा पीड़ा व शोथ हो जायेगा।

कृमिदन्त के शूल की शान्ति—

दाँत में कीड़ा लगने पर असह्य शूल होता है, रोगी वेदना से पीड़ित हो चिल्लाता है, रोता है, ऐसे समय में शूलशामक तत्काल लाभ करने वाली औषध होनी चाहिए, कुछ दवाइयों का प्रयोग प्रकट किया जा रहा है—

(क) कृमिदन्त रोग में असह्य शूल होने पर लौंग या दालचीनी के असली तेल की छोटी फुरेरी पीड़ा स्थल पर लगानी चाहिए। इससे तत्काल वेदना का शमन होता है। छिद्र में फुरेरी की रुई को भर देना चाहिए।

(ख) जलाने या खाने की स्प्रिट २० तोले में १ तोले अफीम मिलाकर रखें। अहिफेन के पूर्ण विलय होने पर औषध प्रस्तुत है। इसमें से १ छोटी फुरेरी दन्त पीड़ा में शीघ्र शान्ति प्रदान करती है। औषध की लाला को थूक दें।

(ग) कपूर डली १ तोला, सत अजवायन १ तोला, सत पिपरमेंट १ तोला को सीधी में मिलाकर एक रस

होने दें, एक फुरेरी लगाने मात्र से पीड़ा शान्त हो जाती है।

(घ) तारपीन के तेल ५ तोले में १ तोले कपूर डली और ३ भासे अफीम मिलाकर कार्क बन्द शीशी में सुरक्षित रखें। इसकी एक फुरेरी (पिचु) लगाने से दन्त शूल तथा दन्तवेष्ट पीड़ाएँ तत्काल शान्त हो जाती हैं।

(ङ) रसोन (लहसुन) के स्वरस में कपूर या अफीम घिसकर लगाने से भी दन्त पीड़ाएँ शान्त होती हैं।

कुछ स्मरणीय बातें —

१. कृमिदन्त में उत्पन्न तीव्र शूल की शान्ति के लिए कभी भी गन्धकाम्ल या कार्बोलिकाम्ल (तेजाब) की फुरेरी न लगावें। इससे दन्तविशीर्णता, छाले, दाह आदि भयङ्कर उपद्रव हो जाते हैं।

२. पोटसियम परमेनेट (कुए की दवा) का प्रयोग या कुल्ले करना भी कृमिदन्त में प्रशाही कार्य नहीं करता।

३. मेरे अनुभव में आई हुई शूल नाशक आयुर्वेदिक औषध अत्यन्त शीघ्रकारी व गुण गरिमा वाली हैं।

४. कृमिदन्त में कई वैद्य मिलावे के तेल को सींक से लगाते हैं। इससे कृमिनाश अवश्य होता है, परन्तु थोड़ी भी असावधानी से अन्यत्र शोथ दाह व्रण आदि हो जाते हैं।

५. तम्बाखू मर्दन से भी कृमिदन्त का शूल शान्त हो जाता है; परन्तु यह प्रयोग भी निरापद नहीं है। इसमें असावधानी, वमन, चक्कर एवं अरुचि उत्पन्न करती है।

पथ्यापथ्य—

कृमिदन्त ग्रस्त रोगी को दुध, दही, बेसन, सैदा, उड़द राजमा, लोभिया भेद, द्विदल धान्य, चावल, पिट्टी से साधित पदार्थ, पक्वान्न, गोभी, मटर, ग्वार की फली, वाँकला शाक, अरबी (घुइयाँ), सेम आलू, केला, भिण्डी आदि विष्टभी एवं वातकारक वस्तुओं का परित्याग करना चाहिए।

दलिया, यवागू, बथुआ, मेंथी, छोटे आलू, करेला, सैजना, ककोड़ा, लौकी, तोरई, टिण्डा (ढेंडस), प्रमृति सुपाच्य वातनाशक पदार्थों का सेवन करना चाहिए। दालों, शाकों व अन्नों का यूपमात्र जीरा, हींग, कालीमिर्च, काला नमक मिलाकर लेना चाहिए। इस प्रकार कृमिदन्त रोगियों की रोग निवृत्ति होकर उन्हें सुख शान्ति मिल सकती है। जय आयुर्वेद !!!

— वैद्यराज डा० रणवीर सिंह शास्त्री
एम०ए०, पी०एच०डी०, विद्या भास्कर, वेद, आयु० साहि.
जिला वैद्य सभा, आगरा।

पाथरिया

डा० शिवपुत्र सिंह कुशवाह एम०ए०, साहित्यालंकार
विशारद, कानपुर ।

कारण—मुख में अम्लता की वृद्धि होने से दाँतों में पूय आने लगता है और रक्तान्तर्गत कपाल के रूख में दाँतों पर जमती रहती है। रक्त में अम्लता यकृत की विकृति से होती है तथा यकृत की विकृति मग्दाग्नि से होती है। दाँतों के मूल भाग में पाथरिया के कारण पूय-भवन की क्रिया होती है। उन दाँतों पर स्वभावतः अन्य दाँतों की अपेक्षा यह कपालिक आवरण अविक हो जाता है।

पाथरिया दन्त विशेषज्ञ इस कपालिका को ही पाथरिया का मूल कारण मानते हैं। परन्तु मूल कारण कपालिका ही है वरन् मांसादि प्रकृति-विकृद्ध और दूषित कृत्रिम आहार-विहार से, पान, सुपायों, तम्बाकू आदि का विशेष व्यवहार करने से, गंदे ब्रूश, दन्त प्रलेप और दूषित मंजनों के व्यवहार से, गर्मागम चाय, काफी के पीने से, दाँतों को आलपिन, सुई आदि से कुरेदने से दन्तवेष्टों का रक्त दूषित होकर मसूढ़े पक जाते हैं। विटामिन 'सी' वाला भोजन उचित परिमाण में मिलना, मधुमेह, क्षय, पाण्डु आदि रोगों से यह दन्तपूय हो जाता है।

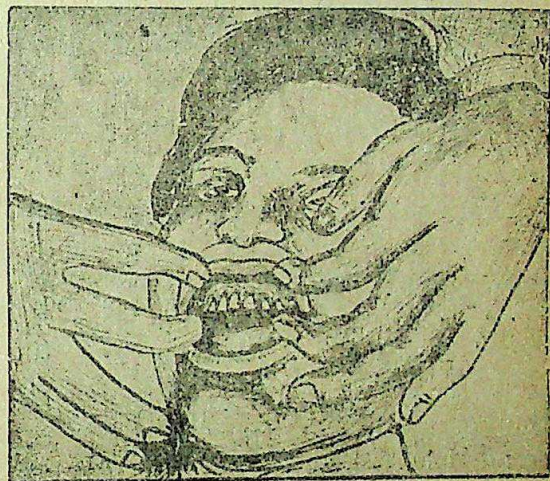
लक्षण—आरम्भ में दन्तवेष्ट (मसूढ़े) थोड़े बहुत शोथ युक्त और लाल वर्ण के होते हैं। थोड़ा सा दवाने से या दन्तधावन करने से उनमें से रक्त निकलने लगता है। दाँतों पर मल जमा हुआ ज्ञात होता है। यदि इसको बढ़ने दिया जाय तो दाँतों के मूल में से थोड़ा-थोड़ा पूय आने लगता है। भोजन की सड़न, जीवाणुओं के विष और पूय के कारण मुख का स्वाद विगड़ने लगता और मुख से दुर्गन्धि आने लगती है।

अन्तिम अवस्था में दाँतों को निकालना ही पड़ता है।

दन्तपूय के लिए आयुर्वेदिक चिकित्सा—

१. मीलसिरी की छाल का प्रयोग अच्छा है।
२. कैशोर गुग्गुल २ गोली, सारिबाद्यासब से प्रातः-सायंकाल लें।
३. कालेशिरीष के बीज भुने हुए १ छटाँक, अकर-करा १ तोला, रीठे के छिलके की भस्म १ छटाँक, त्रिफला चूर्ण ३ छटाँक, तूतिया (नीला थोथा) भस्म २

तोला (इसे तवा पर रखकर आग पर खूब भुन लें, जब हरापन नष्ट हो जावे तो शुद्ध जानें), वायविडङ्ग १ तोला, पतंग १ तोला, समुद्रफेन १ तोला, सोंठ १ तोला, काली



अन्य कण दाँतों में फंसे रह जाने से क्षोभ उत्पन्न होकर मसूढ़ों में शोथ एवं रक्तस्राव आरम्भ हो जाता है।



मसूढ़ों के तीव्र शोथ एवं क्षतयुक्त हो जाने से भोजन का च्वेण कठिन हो जाता है और सामान्य स्वास्थ्य पर बुरा प्रभाव पड़ता है।

मिचं १ तोला, रुमस्तङ्गी १ तोला, माजूफल १ तोला, फिटकिरी का फूला २ छटाँक, जली हुई सुपारी (कसैली) २ छटाँक, कर्पूर १ तोला, सेंधानमक २ छटाँक, तेजवल के बीज (तुम्बरू) २ तोला। सबको कूट पीस कपड़छन कर शीशी में भर लें। प्रतिदिन दो बार दाँतों पर मंजन करना चाहिए। पायरिया में लाभप्रद है।

४. इरिमेदादि तैल की मालिश दाँतों पर करें।

५. 'पायोकल' दन्त मंजन (गुरुकुल) का प्रयोग करें।

६. नारङ्गी के छिलकों का कपड़छन चूर्ण का व्यवहार प्रतिदिन मंजन की भाँति करें।

७. मिट्टी तेल (किरोसिन) के गरारे करने से भी पायरिया दूर हो जाता है।

८. कर्पूर को रेंडी तैल में (कास्ट्रायल आयल) में घोलकर जब भी समय मिले दाँतों पर मला करें।

९. दन्तवेष्ट में रक्त निकाल कर त्रणों पर लोध, लाल



तत्पश्चात् तसूड़े गल जाते हैं, दाँत हिलने लगते हैं, दन्त-मूल से पूष पड़ जाता और पायरिया प्रगट हो जाता है।

चन्दन, मुवेहठी, लाख इनके चूर्ण को मधु में मिलाकर करें। बरगद आदि क्षीरी वृक्षों का कषाय, मधु, घृत और शर्करा मिलाकर गण्डूष में वरतना चाहिए। काकोल्यादि-गण के कल्क और दणगुणे गण्य के दूध में धी सिद्ध करके नश्य लें। (सुश्रुत संहिता, चिकि०, अ० २२)

दन्तपूय के लिए एलोपैथिक चिकित्सा—

जब मल जमा लगता है और उस मल से मसूड़े सूज जाते हैं तथा उनसे रक्त निकलने लगता है तो उसी समय टारटर (मल) को दूधिल लेना चाहिए और दाँतों को प्रतिदिन हाइड्रोजन परॉक्साइड (वूट्स कम्पनी) से स्वच्छ करते रहना चाहिए।

कुछ पेटेंट गोलिएं—

१. विटामिन 'सी' (ए० एफ० डी०)—१०० एम० जी० की १-२ गोली, ४-४ घण्टे में दें।

२. सेलिन (ग्लेक्सो)—१०० एम० जी० की १-२ गोली दिन में ४ बार।

३. कोकोसल आर्जेण्टम (क्रुक्स)—फुरेरी से मसूड़ों के किनारों पर लगावें।

४. फोरहन्स दूध पेस्ट, कौनगेट दूध पेस्ट, बिनाका दूध पेस्ट, नीम दूध पेस्ट, प्रातःकाल, दूर भोजनोपरान्त और रात को सोने से पूर्व अंगुली या मुलायम ब्रुश से लगावें। इनमें से कोई लें।

५. मोनिको लैबोरेटरी का 'पायोरीन' लगावें।

६. पायोरिया रिमेडी (डाबर) रुई की फुरेरी से

७. सेलिन विटामिन 'सी' (ग्लेक्सो)—२०० से ५०० एम० जी० की १ सुई माँस या नस में।

८. पायोरिया एल्विअलेसि वैक्सीन—१ एम्पुल का एक इन्जेक्शन, चर्म के नीचे, सप्ताह में एक बार।

प्राकृतिक चिकित्सा

१. एक मास तक केवल फलाहार और दन्ति कर्म करने से खराब से खराब पायरिया भी अच्छे होते देखे गये हैं। फलों के साथ शाक, रोटी व गोदुध भी लिया जा सकता है, जब ६ मास तक चिकित्सा की आवश्यकता पड़े।

२. प्रत्येक बार मल मूत्र विसर्जन करते समय नीचे ऊपर के दाँतों को परस्पर खूब दबा रखना भी दाँतों को पुष्ट करता है।

(३) प्रातःकाल सरसों तेल भरकर कुछ मिनट तक मुख में रखकर इधर-उधर फिराना और फिर कुल्ला करना दाँतों को पुष्ट करता है।

पायरिया

हकीम नूर मोहम्मद वैद्य विशारद, श्री यूनानी आयुर्वेदिक दवाखाना, आजाद रोड नं० ५, अनेन्द्रगढ़ (म० प्र०)

पायरिया वास्त्व में दाँतों तथा मसूढ़ों का रोग है किन्तु कवित्रय तथा पेट की खराबी भी इस रोग का प्रमुख कारण है। पायरिया कवित्रय, मन्दाग्नि तथा संप्रवृत्ती के रोगी दाँतों की सफाई नियमपूर्वक न करने वालों, अनियमित जीवन यापन तथा अनियमित आहार-विहार करने वालों को प्रमुख रूप से होता है। पायरिया में प्रमुख रूप से मुख से दुर्गन्ध आना, दाँतों का हिलना, पूय एवं रक्तस्राव, मसूढ़ों का ढीला तथा काला हो जाना, लक्षण पाये जाते हैं। पायरिया का दुष्प्रभाव शरीर में उस समय प्रमुख रूप से पड़ता है जब आहार के साथ पूय तथा दूषित रक्त आमाशय में पहुँचकर मन्दाग्नि तथा आमाशय का व्रण उत्पन्न करता है। सुश्रुत संहिता को अध्ययन करने के पश्चात् यह कहा जा सकता है कि सुश्रुत संहिता में वर्णित दन्तवेष्ट रोग ही पायरिया है। वैसे प्रथम अवस्था में जो लक्षण पायरिया में देखे जाते हैं उन लक्षणों को शीताद रोग के प्रकरण में दर्शाया गया है तथा द्वितीय अवस्था में पायरिया में जो लक्षण पाये जाते हैं उनका उल्लेख दन्तवेष्ट प्रकरण में आया है यथा—

शोणितं दन्तवेष्टभ्यो यस्माकस्मात् प्रवर्तते ।

दुर्गन्धोनि सकृष्णानि प्रक्लेदीनि मृदूनि च ॥

दन्तमांसानि शीयन्ते पचन्ति च परस्परम् ।

शीतादो नाम स व्याधि कफ शोणित सम्भवः ॥

अकस्मात् मसूढ़ों से रक्त का स्राव होना, मसूढ़ों से दुर्गन्धयुक्त काले रंग का माँस पक गलकण गिरने लगना, शीताद रोग (Bleeding Gums) कहलाता है। यह रोग कफ और रक्त के विकार से उत्पन्न होता है।

श्वन्ति पूयं रुधिरं चला दन्ताभवन्ति च ।

दन्तवेष्ट स विज्ञेयो दुष्ट शोणित सम्भवः ॥

रक्त के दूषित होने से मसूढ़ों से पूय और रक्त का स्राव होना तथा दाँतों का हिलना दन्तवेष्ट रोग कहलाता है।

चिकित्सा —

पायरिया की प्रथम अवस्था में मसूढ़ों में भेदन करके रक्त निकाले। पश्चात् साँठ, सरसों, त्रिफला, नागरमोथा, रसीत इनका पानी में क्वाथ करके इस क्वाथ में गण्डूष धारण करना चाहिए। पायरिया की दूसरी अवस्था में— मसूढ़ों का भेदन कर दूषित रक्त निकालना—नोद्य, पतंग, मुलेठी लाख के चूर्ण में शहद मिलाकर मसूढ़ों के व्रण पर लेप करें। साथ ही पित्त शामक उपचार करें। शिरो-विरेचन नस्य, स्निग्ध भोजन हितकारक होता है। पीपल, पारस, बड़, पिलखन, गुलर वृक्षों की छाल के क्वाथ में मधु घृत शर्करा मिलाकर गण्डूष धारण करें। हिलते दाँतों को मजबूत बनाने के लिए भौलसिरी की छान चबाना चाहिए। ऐसा सुश्रुत का मत है। अन्तिम अवस्था में दाँतों को निकलवा देना ही श्रेष्ठ चिकित्सा है। पायरिया नाशार्थ कुछ योग तथा दाँतों मसूढ़ों के लिए रक्षार्थ कुछ योग चिकित्सकों तथा पाठकों के लाभार्थ प्रस्तुत हैं—

१. फिटकिरी हर, खट्टे अनार का छिलका, सेंधा नमक। सभी द्रव्य १-१ तोला चूर्ण कर मंजन प्रयोग करें। समस्त प्रकार के दाँतों से दर्द दाँतों का हिलना पायरिया का नाश कर दाँतों को वज्र के समान कठोर बना देता है।

२. सुपारी जली, हरि छिलका, इन्द्रायण का मगज, गुलाब के फूल १-१ तोला, गुलकन्द ३ माशा खरलकर मंजन तैयार करें। इस मंजन के प्रयोग से दाँतों का हिलना, कीड़ा तथा पानी लगना, दर्द शान्त होते हैं।

३. साँठ, हर, नागरमोथा, खैर, कपूर, मिर्च, लौंग, दालचीनी, सुपारी जली एकत्रकर समभाग मात्रा में मिला मंजन प्रयोग करें। समस्त प्रकार दाँतों के रोग शान्त करे।

४. मस्तंगी दालचीनी, इलायची कपूर, कपूरकचरी, साँठ, कालीमिर्च, कत्था १-१ तोला, भुना नीला थोथा, भुना जीरा, धनिया भुना १-१ तोला माजूफल ५ तोला,

सैंधा नमक २ तोला मंजन बनाकर प्रयोग करें। पत्थर के समान कठोर दाँत होकर मोती के समान चमकने लगते हैं तथा दाँतों के समस्त प्रकार के उपद्रव शान्त होते हैं।

५. पायरिया नाशक अनुभूत योग—बबूल के कोयले, बीजाबोल, कुदरू, लौंग, तुम्बर फिटकरी का फूला १०-१० तोला, कपूर २० तोला—कुदरू, बीजाबोल तथा कपूर को प्रथम खरलकर समस्त द्रव्यों के चूर्ण में मिलाकर मंजनवत् प्रयोग करें। दाँतों तथा मसूढ़ों से पीप आना, रक्त स्राव, दर्द, दाँतों का हिलना आदि उपद्रव शान्त होते हैं।

६. सड़ी सुपारी जली, बादाम छिलका जला १०-१० तोला, सोना गेरू ४० तोला, शरी लोबान, बीजाबोल ४-४ तोला, रूमी मस्तगी २ तोला, कपूर ८ तोला विधि-

पूर्वक मंजन तैयार कर प्रयोग करें। पायरिया, दाँतों से सवाद, खून आना, दुर्गन्ध, दर्द आदि समस्त दन्त रोगों का नाश करता है।

७. बज्रदन्ती २० तोला, कालीमिर्च ५ तोला, सोंठ २ तोला, अकरकरा २॥ तोला, फिटकरी ५ तोला, सैंधा नमक ५ तोला, हींग भुनी १ तोला मंजन तैयार कर दिन में दो बार प्रयोग करें।

८. फिटकरी फूला, सोंठ, कालीमिर्च, दालचीनी, नागरमोथा, हरड़, बादाम का छिलका जला, खड़िया मिट्टी समभाग ले मंजन तैयार कर प्रतिदिन प्रयोग करें।

९. फिटकरी के पानी से कुत्लाकर मीठा सोडा, नमक खाने का समभाग लेकर मंजन करें। दर्द पर लाभकारी है।

प्रज्ञा दन्त

कबिराज गिरिधारी लाल मिश्र एम. एस. सी. (ए), ए. एम. बी. एस., आयु. वाचस्पति, साहित्याधुर्वेद रत्न

प्रज्ञादन्तोद्भव—पश्चिम चर्वणक का ही एक दाँत जो 'अवकल दाढ़' कहलाता है। प्रत्येक हनु के अधोभाग में जो किनारे वाला अथवा तीव्र दाँत है। प्रायः १८ से २५ वर्ष की आयु में उत्पन्न होता है। उद्भव काल में असह्य वेदना करता है तथा 'माव प्रकाश' में 'अधिमांस' रोग नाम से वर्णित है—

हानव्ये पश्चिमे दन्ते महाशोथो महारुजः।

लालास्रावी कफकृतो विज्ञेयः सोऽधिमांसकः॥

अधिमांस—में निचले जबड़े के अन्तिम दाँत के ऊपर पीछे की ओर से कुछ मांस आ जाता है, जो चर्वण के समय कुचल जाने से हनु सन्धि और कर्ण में पीड़ा उत्पन्न करता है और निलगते समय भी कठिनाई उपस्थित करता है—यथा 'हनुकर्ण रुजाकर प्रतिहृत्पम्पवहृतिम्' (अष्टाङ्ग संग्रह)। इस रोग को आधुनिक चिकित्सक Impacted Wisdom Tooth कहते हैं। हनु के अन्तिम दाँत में बीज वेदनायुक्त महान् शोथ उत्पन्न हो जाता है, मुख से लालास्राव होता है।

चिकित्सा—अधिमांस का छेदनकर, वच, तेजवल, पाठा, सबिक्षार और यक्कार से प्रतिसारण करते हैं तथा गरम पानी में मधु पिप्पली मिलाकर कवल (गण्डूष) कराते हैं

और त्रिफला, परवल और नीम क्वाथ से प्रक्षालन किया करते हैं। वेदना असह्य होने पर शूलान्तक इन्जेक्शन लगाकर दर्दनाशक टेबलेट दे देनी चाहिए और 'लौंग तैल' डाबर दरदांत व अमृतधार का फाहा भरकर वेदना-स्थान पर लगाना चाहिए।

अनुभूत योग—पीपलामूल चूर्ण ३ माशा, नवसादर शुद्ध ३ माशा, स्फटिका भस्म १॥ माशा, गोदन्ती भस्म १॥ माशा सबको मिलाकर ८ पुड़िया बनालें।

सेवन विधि—दिन में २ बार मधु के साथ पुड़िया बनाकर छूत मिश्रित सुखोष्ण दुध पीवें। गुनगुने जल में नमक या फिटकरी व पोटाश परमैंगनेट मिलाकर कुत्ले करें।

पथ्यापथ्य—खट्टी-मिट्टी, अधिक ठण्डी व गरम चीजें खाने को न देवें। गरम वस्तु खाने के तुरन्त बाद ठण्डी वस्तु न खावें। बर्फ न दें तथा भोजन के बाद 'भोजन के कण' दाँतों में न रहने दें। नियमित रूप से दाँत साफ करावे। कब्ज न रहने दें, कब्जनाशार्थ पंचसकार चूर्ण व 'मैग सल्फ' व लघु विरेचक औषधियों का प्रयोग करना चाहिए। यह कोई असाध्य रोग नहीं बल्कि दन्तोद्भव के समय कष्ट होता स्वाभाविक है अतः दर्द को सहन करते हुए औषधोपचार करना चाहिए।

दन्तनाड़ी रोग एवं चिकित्सा

कवि: गिरिधारी लाल मिश्र

दन्त नाड़ी रोग (Sinus of the gums)—दाँत के मसूड़ों में ५ प्रकार की नाड़ियाँ होती हैं। आचार्य सुश्रुत ने सुश्रुत संहिता के निदान स्थान अध्याय १० में नाड़ी व्रण ५ प्रकार के बताये हैं। दन्तनाड़ी रोग में भी उन्हें ही स्वीकार किया गया है। दन्त मूल गत व्याधियाँ पाय-रिया आदि की उपेक्षा करने से पूय की गति दाँतों की जड़ों में पहुँचकर दन्तनाड़ी रोग को उत्पन्न करती है।

दन्तनाड़ी रोग निदान—दन्तनाड़ी में निरन्तर स्राव तथा वेदनायें होती रहती हैं। दन्तवेष्टक रोग की उपेक्षा करने से पूय दन्तमूल गत अस्थि में पहुँचकर तत्रस्थ त्वचा मांस और अस्थि को दूषित कर देती है। दन्तनाड़ी का मुख भाग सिकुड़ जाता है। आनुप मांस तथा मछली अधिक सेवन से व मछली के काँटे मसूड़ों में घुस जाने व चुभ जाने से दन्तनाड़ी रोग हो जाता है।

दन्तनाड़ी प्रकार—दन्त नाड़ी के ५ प्रकार हैं—

१. वातज—व्रण मुख सूक्ष्म, शूल तीव्र तथा शूल और स्राव रात में अधिक होता है।

२. पित्तज—दन्त शूल के साथ ज्वर, दाह, तृषाधिक्य तथा उष्ण स्राव दिन में अधिक होता है।

३. कफज—मंद वेदना क्षुद्र नाड़ी मुखभाग कठोर तथा रात्रि में पिच्छिल स्राव अधिक होता है।

४. त्रिदोषज—उपरोक्त सभी दोषों के मिश्रित लक्षण मिलते हैं।

५. शल्यज—उदीरित स्थानों में किसी प्रकार से शल्य के नष्ट होने से या अनुमार्ग में मछली का काँटा आदि घुसने से जो नाड़ी व्रण उत्पन्न होता है उसमें शायद मथित रक्त मिश्रित उष्ण स्राव तथा दद होता है।

दन्त नाड़ी के मुख्य लक्षण—वेदना की प्रचुरता तथा स्रावविक्रय।

दन्त नाड़ी चिकित्सा—दन्त नाड़ी की चिकित्सा के निम्न सूत्र हैं—

१. दन्त उद्धरण—जिस दाँत में नाड़ी तण बन गई हो उस दाँत को उखाड़ देना चाहिए।

२. दहन—दाँत निकालने के पश्चात् शोधन कर क्षार व अग्निदाह करना चाहिए।

३. प्रक्षालन—चमेली के पत्ते, मेनफल, गोक्षुर तथा खदिर छाल के क्वाथ से प्रक्षालन करें।

४. गण्डूष—चमेली के पत्ते, मेनफल गोक्षुर तथा खदिरछाल के क्वाथ से।

५. स्थानिक प्रयोग—जात्यादि तैल व इरिमेदादि तैल का स्थानिक प्रयोग करना चाहिए। प्रतापलंकेश्वर रस, विषमुष्टि वटी तथा वेदनाशामक औषधियों का प्रयोग करना चाहिए।

६. अमुभूत प्रयोग—‘दन्त प्रमा’ मंजन से प्रतिदिन दाँत मंजन करना अत्यन्त लाभदायक है।

चिकित्सा चातुर्य—आपके चिकित्सालय में यदि कोई रोगी बार-बार दाँत दर्द से पीड़ित आवें तो उसका ध्यान से परीक्षण कीजिए, अक्सर वेद्यों द्वारा मुख रोग व व्रण आदि रोगों को सामान्य समझ कर उपेक्षावृत्ति रखते हैं। फलस्वरूप रोगी एक बार दवा लेकर लाभ न होने पर डाक्टरों के पास चला जाता है, अतः तीव्र प्रकाश में रोगी के मुख दाँत की सम्यक् परीक्षण करें। दन्तनाड़ी में दाँत उखाड़ना अन्तिम उपचार है तथा दाँत उखाड़ना कोई कठिन कार्य नहीं बल्कि कला है जो सीखनी चाहिए।



दन्त उद्धरण (Tooth Extraction-दाँत उखाड़ना)

डा० गिरिधारी लाल मिश्र विशेष सम्पादक

आयुर्वेद सर्जन सुश्रुताचार्य ने दंतनाड़ी रोग में दाँत उखाड़ना आवश्यक बताते हुए सुश्रुत मंहिता चिकित्सा स्थान अध्याय २२/२६-३३ में लिखते हैं—

नाड़ी व्रण हरं कर्म दन्त नाड़ीषु कारयेत् ।
यं दन्तमधिजायेत नाड़ी तं दन्तमुद्धरेत् ॥
छित्वा मांसानि शस्त्रेण यदि नोपरिजो भवेत् ।
शोधयित्वा दहेच्चापि क्षारेणज्वलेन वा ॥
भिनत्युपेक्षिते दन्ते हनुकास्थिगतिधुं वम् ।
समूलं दशनं तस्मादुद्धरेद्भ्रुवमस्थिरम् ॥



दन्त उद्धरण हेतु रोगी की सही स्थिति

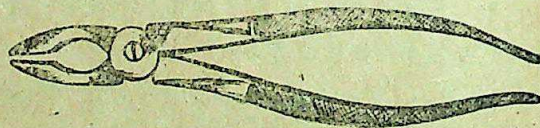
दंतनाड़ी रोग में नाड़ी व्रणनाशक चिकित्सा करें, नाड़ी वाले दाँत का मसूढ़ा चीरे कर दाँत को निकाल देना चाहिए तथा क्षार या अग्नि से दाह कर्म करना चाहिए अन्यथा यदि दाँत नहीं निकाला जाय या उपेक्षा की जाती है तो दंतनाड़ी का पूय जबड़े की हड्डी तक में फैलकर नासूर बन जाता है तथा जबड़े में हड्डी टूटकर सड़ जाती है, अतः जड़ समेत दाँत को निकाल दें। प्राचीन आयुर्वेदाचार्यों को दंत की शल्य चिकित्सा (Dental Surgery) का अच्छा ज्ञान था। यह बात भी स्पष्ट

की गई है कि कभी भी ऊपर के हनु के दाँत को नहीं निकाले। दाँत को निकालने का विधान अधोहनु के लिए ही कहा गया है। ऊपर के हनु के दाँत को निकालने से अधिक रक्तस्राव होकर आँख की ज्योति नष्ट होने व अदित होने का भय रहता है।

दाँत उखाड़ना

पूर्व कर्म—रोगी को कुर्सी पर सीधा बैठकर तथा सिर को पीछे की ओर करके बैठावे। Dental chair उपलब्ध हो तो उस पर बैठावे। प्रकाश सीधा मुँह पर पड़ना चाहिए। सर्वप्रथम रोगी को किसी विसंक्रामक घोल या पोटाश परसॉनेट या डिटोल (Dettol) के घोल से कुल्ले करावे तथा मुख की अच्छी तरह साफ करवा दें।

संज्ञाहरण—दाँत उखाड़ने से पूर्व संज्ञाहरण अवश्य कर लेना चाहिए। इससे रोगी को बिल्कुल भी दर्द नहीं होता तथा चिकित्सक आराम से उच्छेदन कर्म कर सकता है। अच्छा हो यदि दाँत उखाड़ने से पूर्व रोगी के दाँत का X-Ray ले लिया जाय ताकि अन्दर की स्थिति का ज्ञान रहे।



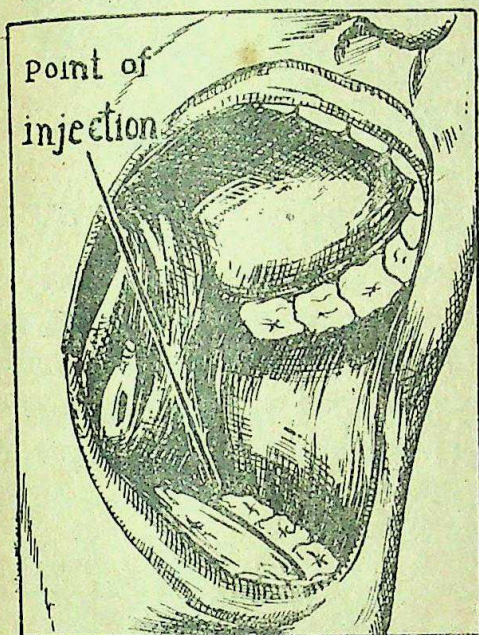
दाँत उखाड़ने का जमूड़ा



मसूढ़ा चीरने का चाकु

नोवोकेन सोल्यूशन—Novocaine 2 c. c. को सिरिज में भर कर दाँत के मसूढ़ों में इन्जेक्शन दें। इन्जेक्शन देने के पूर्व उस स्थल को डिटोल लोशन से विसंक्रामित कर लेना चाहिए। दाहिने हाथ से रोगी के सिर को ऊपर की ओर उठाकर दाँत की लम्बाई की दिशा में

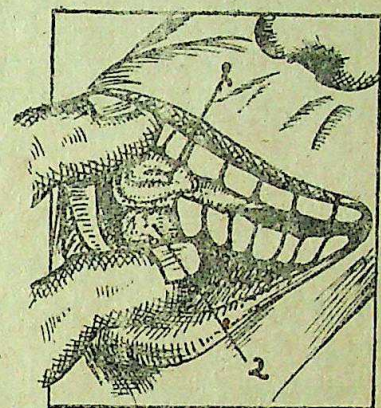
सूचिका प्रवृत्त करें तथा सूचिका निकालते समय भी कुछ दबा छोड़ते हुए निकाले। इस प्रकार दांत पूर्णतया संज्ञा-रहित हो जाते हैं। यदि दांत काफी ढीला हो तो केवल ईयर स्प्रे द्वारा भी संज्ञाहरण किया जा सकता है।



प्रधान कर्म—अब दांत को झटके से निकालने के दिन लद चुके हैं अतः दांत उखाड़ने के अन्य जमूड़ा (Tooth Forceps) द्वारा दांत को मजबूती से पकड़ना चाहिए। पकड़ इतनी मजबूत भी न हो कि दांत निकालने के पहले ही टूट जावे तथा दांत ही पकड़ में आना चाहिए। मसूड़ा व जबड़े की हड्डी नहीं, फिर २-३ बार हिलाना व बाहर भीतर की ओर दबावें तथा ऊपर की ओर खींच लें।

बस मूल उद्वृत्तन से उखड़ जाती है तथा दांत बाहर निकल जाता है।

पश्चात् कर्म—दांत उखाड़ने के बाद रोगी को पोटाश परमेगनेट के व डिटोल के सोल्यूशन से कुल्ले कराने चाहिए। हम प्रारम्भ में तथा उखाड़ने के बाद भी पोटाश



रक्तस्राव रोकने हेतु दबाव डालने का ढंग

- १—५ वर्ग सेंटीमीटर गांज का तह किया टुकड़ा
- २—दन्तोद्वृत्तन में आइडोफॉर्म का गांज

शुद्ध स्फटिका (भुनी हुई फिटकरी)—रक्त बन्द करने में अद्वितीय चमत्कारिक औषधि है। गांज में छोड़ा सा स्फटिक चूर्ण देकर दन्तोद्वृत्तन में भर मुख बन्द करने के लिए कहे। २-४ मिनट में ही रक्तस्राव बन्द हो जावेगा।

अन्तः प्रयोग—प्रताप लंकेश्वर रस + विषमुष्टी की २-२ गोली खाने को देनी चाहिए। इससे किसी भी प्रकार का विसंक्रमण व पाक होने का भय नहीं रहता। दर्द अधिक होने पर एनलिन व नोवल्जीन टेब्लेट दी जा सकती है।

दांतों के लिये उपयोगी विभिन्न यन्त्र-शस्त्र

दांत उखाड़ने का जमूड़ा—सभी दांतों में एक ही काम करता है। मूल्य—१५.५०, स्टेनलैस स्टील का सर्वोत्तम २६)

मसूड़ा चीरने का चाकू—स्टेनलैस स्टील का सीधा ४.५०, फोर्लिङ्ग ८.५०।

डेंटल सिरिज—मसूड़ों में संज्ञाहीनता उत्पन्न करने हेतु इन्जेक्शन लगाने की, इन्जेक्शन कर्म में भी उपयोग कर सकते हैं—मूल्य ४७.००। इसीके साथ अंश के मस्ते में सूचीविष करने की विशिष्ट नीडल सहित इसका नैट मूल्य ५०.००।

दांत उखाड़ने के जमूड़ों का सैट—इसमें सभी दांतों के लिए ७ प्रकार के जमूड़े, दन्त उन्नामक यन्त्र, मसूड़े चीरने का चाकू सभी एक सुन्दर मजबूत डिब्बे में रखे हैं। १ सैट मूल्य—१६५.००, स्टेनलैस स्टील के उपकरण में युक्त सैट का मूल्य—२२५.००।

पता—दाऊ मैडीकल स्टोर्स, अलीगढ़

दन्त रोगों की होम्यो विदित्सा

विद्यारत्न श्री डा. प्रकाशचन्द्र गंगराडे आयु. वारिधि

दन्त रोगों पर प्रमुख रूप से उपयोग में आने वाली होम्योपैथिक दवाओं का यहां पूर्ण प्रमुख लक्षणों सहित वर्णन दिया जा रहा है। आशा है, पाठक उनसे लाभान्वित होंगे।

१. प्लेन्टेगो मेजर—इसकी क्रिया दांत के स्नायुओं पर होने के कारण दांत के हर तरह के रोग में इसके सेवन से फायदा होता है। डा० हेल का कहना है कि दांत के दर्द के लिए प्लेन्टेगो के समान अन्य कोई औषधि नहीं है। डा० ह्यूंस भी इस मत का समर्थन करते हैं। दर्द समय-समय पर होना, मामूली कारण से बढ़ जाना, सूना सहन न होना, इसके साथ गालों का फूला होना। इस दवा के प्रमुख कारण हैं। प्लेन्टेगो का फायदा बनाकर पीड़ित दाढ़ पर बाह्य प्रयोग करना चाहिए। अनेक प्रकार के दांत दर्द में आराम पहुंचाता है। लेकिन यदि दांत में कीड़ा लगने के कारण दर्द हो तो क्रियाजोट का बाहरी प्रयोग लाभप्रद है। प्लेन्टेगो के बाह्य प्रयोग के साथ ३ शक्ति में आन्तरिक सेवन शीघ्र लाभ पहुंचाता है।

२. क्रियाजोट—बड़ी तकलीफ से बच्चों के दांत निकलना, दूध के दांतों में कीड़ा लगना, दांत का काला पड़ जाना, दाढ़ में गड़ढा पड़ना, मसूढ़ों में कीड़ा लगने के कारण निरन्तर दर्द रहना, मसूढ़ों में प्रदाह, स्पंज की तरह फूल जाना, ठण्डे पानी के पीने से दांत का दर्द बढ़ता है जबकि गर्म भोजन या गर्मी पहुंचाने से दर्द में कमी होती है। इन सारे लक्षणों में क्रियाजोट का बाह्य और आन्तरिक सेवन लाभप्रद है।

३. स्टेफिसेप्रिया—मसूढ़े अस्वस्थ और दांत से अलग हो तो यह औषधि उत्तम है। दांत उगते ही टूटना, दांतों का क्रमशः काले पड़ना, दांतों में कीड़ा लग जाना, जरासा

धक्का मसूढ़ों को लगने से खून निकलने लगना, ऋतुस्राव के समय और गर्भ धारण के समय होने वाले दांत के दर्द में स्टेफिसेप्रिया लाभकारी है। दांतों में ठण्डा पानी लगता हो और गर्म पानी से राहत मिलती हो तो स्टेफिसेप्रिया ही फायदेमन्द होगी। यदि दन्त रोग उपदंश और प्रमेह से पीड़ित व्यक्तियों की सन्तान को हो तो यही दवा विशेष गुणकारी होगी।



४. मर्कसाल—दांत के दर्द में प्रमुखतया इस औषधि का प्रयोग होता है। दांत के मसूढ़े फूल जाना, उससे खून बहना, ठण्डा पानी बिल्कुल सहन नहीं होना, दांत काले होकर गिर जाना, मुंह से बदबू आना, पायरिया होना, दांतों का हिलना, दांत दर्द रात को बढ़ना, मुंह से लार बहना, मसूढ़ों पर फोड़ा होना आदि लक्षणों में मर्कसाल एक उपयोगी दवा है। इस दवा के रोगी को अधिक गर्म और अधिक ठण्डा सहन नहीं होता।

५. केमोमिला—बच्चों के दांत निकलते समय की तकलीफें, जैसे—अस्थिरता और अनिद्रा में केमोमिला—शेषांश पृष्ठ ३४ पर देखें।

विभिन्न दन्त रोगों



सफल सिद्ध प्रयोग

वैद्य दरबारीलाल आयुर्वेद भिषक्, अशोक भण्डज्य भवन, फतेहगढ़ (फर्रुखाबाद) उ०प्र०

मसूढ़ों तथा दांतों के रोगों में जोंक, तुम्बी तथा सींगी के द्वारा रक्त निकलवा देना लाभ देता है।

जिस मनुष्य के दांत हिलते हों तो नागरमोथा, हरड़, होंठ, मिरच काली, पीपल, वायविडंग, नीम के पत्ते इन सबको समभाग लेकर गोमूत्र से पीसकर गोली बनाकर छाया में सुखा लेवे। फिर इस गोली को मुख में धारण करके सो जावे। इससे बढ़कर हिलते हुए दांतों को स्थिर करने के लिये और कोई उत्तम औषध नहीं है। दन्तवेष्ट रोग को नष्ट करने में उत्तम काम करता है।

जीरा, सेंधा नमक, हरड़, सेम्भल के कांटे इन सबको समान भाग लेकर कूट पीस चूर्ण करें। इस चूर्ण को प्रतिदिन मसूढ़ों में मर्ते तो मसूढ़ों के व्रण, कटना, पीड़ा, रक्तस्राव, दांतों का हिलना तथा शोथ शीघ्र नष्ट करता है।

छोटी पीपल, सेंधानमक, जीरा इन सबका चूर्ण दांतों पर तथा मसूढ़ों पर घिसें तो दांतों की चंचलता, व्यथा, सूजन तथा रक्तस्राव दूर होते हैं।

बड़ी कटेली, मुण्डो, एरण्ड की जड़ तथा छोटी कटेली इन सबका क्वाथ करके इसमें तिल का तेल मिलाकर गण्डूष धारण करे तो कृमि दन्त रोग की वेदना को शांत करता है।

नील की जड़, काकजंघा की जड़, कड़वी तुम्बी की जड़ इनमें से एक एक द्रव्य का चूर्ण दांतों में रखने से दांतों के कीड़ों को निकाल देता है।

कासीसादि गूटी—कमीस, हींग, सोरठ मिट्टी (इसके अभाव में फिटकरी लें) देवदार इन सबको समभाग लेकर पीस लें और जल से गोली बनाकर मुँह में रख लें। इससे दांतों की कृमि तथा शूल नाश हो जाता है।

इरिमेदादि तेल—इरिमेद अर्थात् विट खदिर की छाल का चूर्ण एक सौ पल लेवें। एक द्रोण जल में डालकर पकावें। जब पकते-पकते चौथाई भाग शेष रहे तो उतारकर छान लें। उसमें आधा आढ़क तिल का तेल डालें। फिर विट खदिर, लोंग, गेरू, अगर, पदमाख, मंजीठ, लोध्र, लहठी, लाख, बड़ की छाल, नागरमोथा, दालचीनी, मायफल, कपूर, ककोल मिर्च, खैर की छाल, पतंग, घाय ज फूल, छोटी इलायची, नागकेशर तथा कायफल इनमें के प्रत्येक द्रव्य १-१ कषं लेकर कल्क करके तेल पका दें। इस तेल के प्रयोग से मुख की पीड़ा नष्ट होती है। लेदुष्ट मांस, हिलता हुआ दांत, शीर्ण दन्त, सौषिर दन्त, प्रशीताद, दन्तहृषं, विद्रधि, कृमि दन्तक, दन्त स्फुटन, दन्त दोगन्ध्य, जीभ, तालु और ओष्ठ पीड़ा नष्ट होती है।

कूठ, दारुहल्दी, लोध्र, नागरमोथा, मंजीठ, पाठा, कुटकी, तेजनी (बज्र या मालकांगनी) हल्दी इन सबको समभाग लेकर चूर्ण करें। उसे दांतों पर घिसें तो रक्तस्राव, खुजली तथा पीड़ा को नष्ट करता है।

तीन चार लाल मिर्च लेकर उन्हें जोकूट कर एक पाव पानी में डाल दें तथा १ तोला गुड़ भी उसमें डाल दें और फिर पकावें। जब तीन चौथाई पानी शेष रहे तब उतार लें और उसे छानकर उसी गरम पानी से कुल्ला करें तो इससे मसूढ़ों की सूजन तथा कृमि दन्त रोग नष्ट होता है।

खाने वाली तम्बाकू मुँह में दबाने से कृमि दन्त मसूढ़ों की सूजन नष्ट होती है।

अमृतधारा मसूढ़ों की सूजन तथा दांतों के दद में अपूर्व लाभकारी है। उसको रुई से मसूढ़ों पर लगायें और खोखले दांत में रुई भिगोकर भरें।

पायरिया के लिये तुल्य भस्म भी लाभकारी दवा है। इसके सेवन से दाँतों से खून आना, पीव आना, पायरिया आदि सभी रोग नष्ट हो जाते हैं। इसकी मात्रा १ रत्ती की है। प्रातः सायं १-१ रत्ती दवा शहद में चोटें।

दाँतों में कीड़ा लगा हो, दाँत खोखला हो गया हो और असह्य पीड़ा हो रही हो तो लोंग के तेल में थोड़ी सी रुई भिगोकर खोखले दाँत में भर लें। इससे शीघ्र आराम मिलता, कीड़ा मर जाता तथा दर्द मिटता है।

विभिन्न दन्त रोगों की होमियो चिकित्सा

:: ::

पृष्ठ ३२ का शेषांश

एक प्रधान औषधि है। गरम पानी सेक करने से और दाँत के दर्द में वृद्धि होना, मानसिक लक्षण—चिड़चिड़ा होना, क्रोधी होना, मामूली बात पर चिड़लाना आदि भी विद्यमान हों तो असह्य दाँत दर्द में केमोमिला देने से लाभ होगा। दाँत का दर्द थोड़ा रुक-रुक कर हो, रात्रि में तकलीफ का बढ़ना आदि लक्षणों में भी उपचारी दवा है।

६. काफिया—दाँत का दर्द गरम पेय पीने से बढ़ता है जबकि मुँह में ठण्डा पानी रखने से दर्द में कमी आती है। केमोमिला में ठण्डा पानी मुँह में रखने से कमी तो होती नहीं बल्कि गरम पानी रखने पर भी तकलीफ बढ़ जाती है। अत्यन्त तीव्र वेदना के लक्षण जब रोगी पागलों की तरह दौड़े, रह-रह कर बढ़ने वाला दर्द, स्वभाव से नाजूक लोगों के लिये यह एक उत्तम औषधि है।

७. हेक्जालावा—दाँत और मसूढ़ों पर इस औषधि की प्रमुख क्रिया होती है। दाँत में कीड़ा लगकर उसका क्षय या मसूढ़ों का क्षय, मसूढ़ के चारों ओर सूजन के साथ दाँत में दर्द का होना, दाँत निकलवा देने के बाद यदि उसका टुकड़ा अन्दर मसूढ़ में रह गया हो तो उसके उत्पन्न उपसर्ग पायरिया रोग में यह एक उत्तम दवा है।

८. आनिका—बनावटी दाँत लगाने से दर्द होना और सूजन की अवस्था उत्पन्न होना, दाँत निकाल लेने या गड़्हा भरने से दर्द मालूम पड़ना, दाँत निकाल लेने पर अधिक खून बहना, सवेरे शाम और रात को ठण्डक लगने से दाँत दर्द बढ़ती आदि लक्षणों में आनिका का सेवन कराना लाभकारी है।

९. साइलिशिया—दाँतों की ढाँटों में फोड़े होना,

अन्त में दाँतों को मजबूत और निरोग रखने के लिए एक प्रसिद्ध मंजन का योग नीचे लिखा जाता है—

त्रिफला त्रिकुटा तृतिया पाँचों नमक पतंग।

बांत वज्र सम होत हैं माजूफल के संग ॥

अर्थात् त्रिफला (आम्ला, हर, बहेड़ा) त्रिकुटा (सोठ मिरच, पीपल) तृतिया, पाँचों नमक, पतंग और माजूफल सबको बराबर-बराबर लेकर कूट पीस कपड्डन कर रख लें बस मंजन तैयार है। इसको प्रातः सायं दाँतों में लगायें।

दन्त क्षय आरोग्य न होना, दाँत में नासूर, गरम पदार्थ खाने से या पीने से, ठण्डी हवा मुँह में चले जाने से दाँत का दर्द बढ़ना, दाँतों का ढीला मालूम पड़ना आदि लक्षणों में साइलिशिया उपयोगी है।

१०. कैल्केरिया फॉस—बच्चों के दाँत बिलम्ब से निकलना, उनका शीघ्र नष्ट हो जाना, वयस्कों के दाँत में छिद्र हो जाना, दाँतों की जड़ अलग हो जाना आदि लक्षणों में यह एक उत्तम दवा है।

इसके अतिरिक्त अन्य औषधियाँ भी प्रमुख लक्षणों के आधार पर लाभकारी सिद्ध हो सकती हैं। वे हैं—

कैल्केरिया कार्ब—यदि ठण्डी हवा या ठण्डा पानी सहन न हो लेकिन भोजन के समय पीड़ा हो तो यह उपयोगी है।

ब्रायोनिआ ३०—यदि गर्म पदार्थ पीने या मसूढ़े हिलने से खाते समय पीड़ा हो तो यह औषधि दें।

पल्सेटिला ३०—कुछ भी गर्म खाने पीने पर पीड़ा बढ़े और ठण्डा पानी मुँह में रखने से दाँत दर्द में आराम हो तो पल्स दें।

फास्फोरस ३०—यदि दाँत निकलवाने के बाद रक्त अविक मात्रा में निकले तो इसका आन्तरिक सेवन करावें।

एन्टिम क्रूड—खोखला दाँत, कुछ खाने या ठंडा पानी पीने से दर्द हो।

कैल्केरिया फ्लोर—दाँत हिलने लगना, जरा सा दाँत में धक्का लगने पर दर्द होने लगना।

एसिड फ्लोर—मसूढ़े में पायरिया होने पर।

नेट्रम सल्फ—ताप पटुंघने से दाँत दर्द में कमी और ठण्डे पानी से आराम हो तो यह दवा फायदेमन्द है।

दन्त रोगों पर पञ्च-ब्रह्मास्त्र

विशेष सम्पादक—कविराज गिरिधारी लाल मिश्र

दन्त प्रभा—दन्त मूलगत रोग शीताद (Bleedin Gum), दन्त पुप्पुट (Gum boil), दन्तवेध (Pyorrhoea), दालन (Toothache), कृमिदन्त (Dental-caries) आदि दन्त व्याधियों से ग्रस्त हजारों रोगियों पर केदारमल आयुर्वेदिक हॉस्पिटल, तेजपुर में परीक्षित सफल प्रयोग जो कि दन्त रोगों में हमारी चिकित्सा का योग मुकुटमणि है। एक उदाहरण प्रस्तुत है—

Hospital No. 3856. Dated 24-9-77.

Name—Pastor I. R. Helmuth Barutta

8500, Nurmberg, Lamfamhotz, West Geryl

निदान—दन्तरोगों के सन्निपातज लक्षणों से पीड़ित दाँतों का Blood Circulation कम हो जाता था भोजन करते करते ही यदाकदा ऐसा प्रतीत होना कि मुख में दाँत नहीं हैं और भोजन क्रिया में रुकावट, मुख दुर्गन्ध व मुख का स्वाद बिगड़ जाना।

चिकित्सा—“दन्त प्रभा” नामक दन्तमञ्जन बनाकर दिया गया जिससे आशातीत लाभ हुआ तथा औषधि कर नभूना अपने दन्त चिकित्सक को दिया जो इसके गुणों पर सुग्व हुआ तथा जर्मनी में परीक्षण करने के लिए मंगवाकर रोगियों पर परीक्षण करके इसकी जो Reports भेजी खघोलिखित पत्र में उल्लिखित है—

Pastor I. R. Helmuth Borutta, W. Germany.

6500—Nurmberg, 28-12-78

To—The Superintendent of ‘Kedarmal-Memorial Ayurvedic Hospital.’
Tezpur, Assam, India.

Dear Doctor,

I received the information from Dental Surgeon about the result of ‘Dant Prabha’. The doctor said, Dant

Prabha is very good. It improves the blood circulation of the Palate & has although good effect on the tract of the intestine. So the results of the experiment is positive. Many thanks for your kindness.

Yours Sincerly
H. Borutta

वाम जनता के लाभार्थ गुप्त अनुभूत योग प्रस्तुत है—

१. दन्तप्रभा—कपूर १० ग्राम, भुना तूतिया १० ग्राम, काली मिर्च, माजूफज, पिप्पली, स्फटिका प्रत्येक २०-२० ग्राम, नमक, स्वर्ण गैरिक, तम्बाखू प्रत्येक ४०-४० ग्राम। सबका बारीक चूर्ण बना मिलाके। दन्त रोग, पायरिया, मुख दुर्गन्ध, दन्त कृमि आदि पर प्रभावशाली सहस्रानुभूत योग है।

२. रजन्यादि चूर्ण (मेषज्य रत्नावला)—डा. श्रीकांत लक्ष्मण देशपाण्डे ने दन्त रोगार्थ प्रकाशित कराया था। तबसे इसका प्रयोग करके देखा तथा आशाजनक सफलता प्राप्त हुई—

योग घटक—हल्दी, दारुहल्दी, देवदारु, गजपिप्पली छोटी कण्टकारी, बड़ी कटेरी, पृष्णपर्णी, सौंफ, सब समभाग लेकर महीन चूर्णकर खरल में अच्छी तरह घुटाई कर लें। १ माशा भोजन के बाद पानी से लें।

प्रयोग—दन्त रोगों के विशेषतः पायरिया में अजीर्ण व उदर विकार, संग्रहणी आदि लक्षण जो कि पायरिया दूषित स्त्राव के उदर में जाने से होता है, में इस चूर्ण का १-१ चम्मच ठण्डे पानी से प्रातःसायं प्रयोग करना तथा साथ ही इसी चूर्ण से दाँत मलना बड़ा हितकर है।

३. दन्त शूलारि—तारपीन तैल ४०० मिलि०; अमृतधारा ५० मिलि०, लौंग तैल ५० मिलि० को मिला
—शेषांश पृष्ठ ४४ पर देखें।

Formulated for the care of motherhood

Satavarex

GRANULES

A Multipurpose Tonic for the use in-



Pre & Postnatal care & Lactation.

HELPS In * GALACTOPOIESIS * LACTOGENESIS
* GALACTOKINESIS



COMPOSITION:

Satavarex contains Shatavari (Asperagus Racemosus) 20% in the form of granules. It is safe and no side effects have been observed.

- * As a nutritive Tonic.
- * In ladies it also helps in development of breast.
- * In pregnancy it nourishes the foetus and acts as multipurpose tonic.
- * It is an aphrodisiac and can be used for both males and females.

- * In Oligospermia-it increases the spermatozoa in seminal fluid and also increases the seminal fluid.
- * As a nervine sedative and in epilepsy.
- * As a geriatric tonic, it helps in controlling the ageing effect.
- * As a general tonic-in all devitalising conditions.



ZANDU
PHARMACEUTICAL WORKS LTD.
68KHALE ROAD (S), DADAR, BOMBAY 400 025.

3 BROTHERS/ZS/4180

जिह्वागत रोग एवं चिकित्सा

कवि-गिरिधारी लाल मिश्र

जिह्वा—स्वाद ग्रहण, चर्बण, निगरण तथा भाषण कार्य का साधन अङ्ग है पर इसका प्रमुख कार्य रसज्ञान का ग्रहण करना है अतः इसे रसेन्द्रिय या रसना कहा जाता है। जिह्वा एक पेशीकृत अङ्ग है जिसका कुछ भाग मुख में और कुछ प्रसनिता में स्थित है। जिह्वा श्लेष्मिककला से आच्छादित है। इसके दो पृष्ठ हैं—ऊर्ध्व और अधः ऊर्ध्व पृष्ठ में स्वादाङ्कुर (Lingual Papilla) प्रचुर संख्या में पाये जाते हैं तथा अधः पृष्ठ में हन्वधरीय तथा जिह्वा धरीय लाला ग्रन्थियों का मुख खुलता है। इसका मूल पिछली ओर झुका रहता है और दो मांसपेशियों तथा एक कला द्वारा कण्ठास्थि (Hyoid Bone) से जुड़ा रहता है। जिह्वा के नीचे फैली हुई जिह्वा मूलिनी नाड़ी (Hypoglossial Nerve) द्वारा इसका नियन्त्रण तथा संचारण होता है

तथा जिह्वा की सभी पेशियां ऐच्छिक होने के कारण इसे इच्छानुसार इधर-उधर घुमाने, फैलाने, सिकोड़ने व आगे पीछे करने की अद्भुत क्षमता है।

स्वाद ज्ञान—जिह्वा पर रखे हुए पदार्थ जब द्रव अवस्था में होते हैं या लाला स्राव द्वारा उनका विलयन हो जाता है तो पदार्थ के कण स्वादाङ्कुरों (Papillae) को छूकर के स्वादवाही तन्तुओं (Receptors) को उत्तेजित करते हैं तथा वहां से रस का ग्रहण होकर नाड़ियों द्वारा मस्तिष्क तक पहुंचाते हैं तथा मस्तिष्क से बुद्धि इस ज्ञान को ग्रहण करती है। लेख विस्तारभय से जिह्वा के रोगों को अवोलिखित तालिका में प्रदर्शित करते हैं। आचार्य सुश्रुत ने जिह्वा के पांच रोग माने हैं जिनके लक्षण चिकित्सा दृष्टव्य है—

जिह्वागत रोग-लक्षण

चिकित्सा

1. जिह्वा कण्टक वातज Cracked Tongue—जिह्वा फटी हुई प्रसुप्त (मुन्न) एवं शाकपत्र के समान होती है।
2. पित्तज Red glossed Tongue—जिह्वाङ्कुर मांस के कांटे से हो जाते हैं, जिह्वा खुरदरी, दाहयुक्त तथा पीताम्ब होती है।
3. कफज Luekoplakia—जिह्वा भारी, स्थूल एवं शाल्मलि कण्टक के समान मासाङ्कुरों से व्याप्त।
4. अलस Abscess of the tongue—जिह्वा के नीचे कफ एवं रक्तजन्य गम्भीर शोथ है जिसमें जिह्वा जड़ हो जाती है तथा बाद में पाक हो जाता है। इसे असाध्य माना गया है। वाग्भट ने इसके मांसतान एवं मस्त्वगन्धि (मछली गन्ध सदृश स्राव) होना दो लक्षण माने हैं।
5. अधिजिह्वा Epiglottis—कफ, रक्त विकार जन्य जिह्वागत शोथ जिसमें कण्ठ, दाह, वेदना एवं लाला स्राव होता है।

रक्त मोक्षण प्रशस्त है। गुरुची, नाम एवं कटु द्रव्यों का कवल धारण करें। वातज ओष्ठरोगवत् चिकित्सा करें।

पारिजात व कर्कश पत्र से घर्षण करके काकोत्पाद्विगण के द्रव्यों से प्रतिसारण तथा गण्णव करावें।

कर्कश पत्र से घर्षण द्वारा रक्तमोक्षण करके पिप्पलादि-गण द्रव्यों से प्रतिसारण करें। सर्षप, संभव जल में मिलाकर कवल धारण करें।

यद्यपि इसकी चिकित्सा का उल्लेख उपलब्ध ग्रन्थों में नहीं है पर इसकी व्रण शोथ के समान ही चिकित्सा करनी चाहिए। आधुनिकों के जिह्वा शोथ रोग से तुलना कर सकते हैं तथा वही चिकित्सा उपयुक्त है। आगे वर्णन देखिये।

शस्त्र या कर्कशपत्र से लेखनकर यवक्षार में मधु मिलाकर प्रतिसारण करें। त्रिकटु, यवक्षार, हरीतकी, चित्रकरस सिद्ध तैल का प्रतिसारण करें।

दृष्टव्य—उपरोक्त रोगों का समावेश आधुनिक चिकित्सा शास्त्र में वर्णित—जिव्हा शोथ (Glossitis) के तीव्र (Acute) एवं जीर्ण (Chronic) भेदों में पाते हैं अतः आगे के तीव्र जिव्हा शोथ का वर्णन प्रस्तुत है।

तीव्र जिव्हा शोथ

तीव्र जिव्हा शोथ—आधुनिक चिकित्सा ग्रन्थों में आयुर्वेदीय जिव्हा कण्ठक रोग को तुलना इस जिव्हा शोथ से कर सकते हैं जो दो प्रकार का है—

१. तीव्र जिव्हा शोथ (Acute glossitis),
२. जीर्ण जिव्हा शोथ (Chronic glossitis)।

तीव्र जिव्हा शोथ के पुनः दो उपविभाग किये गये हैं—

१. उपरिस्थ (Superficial)—मुखपाक (Stomatitis) की अवस्था में होता है।

२. अमिघातज (तीव्र अमिघातज प्रकार)—अधिकतर दुष्ट व्रण गहरे अमिघात, बरों का काटना या मधुमक्खी का काटना, गले या दांत से स्ट्रैप्टोकोकल का संक्रमण, पारद विष भक्षण, तीक्ष्ण द्रव्य एसिड या गर्म दूध पीलेना तथा कण्ठ द्वार का शोथ (Oedema of glottis) के कारण होता है इसलिए इसे तीव्र सारऊतकी जिव्हा शोथ (Acute parenchymatous glossitis) कहते हैं।

लक्षण—इस अवस्था जिव्हा में पीड़ायुक्त फूजी हुई होती है तथा मुख से बाहर निकलती है। लालासाव अधिक होता है। यह मयानक अवस्था है जिसमें बोलने, निगलने व श्वासोच्छ्वास में कठिनाता होती है। सूजन बहुत ही जल्दी से गले, नाक तथा श्वास प्रणाली एवं अग्न प्रणाली के नीचे तक फ़ैल जाती है।

चिकित्सा—चिकित्सा बहुत ही सावधानी से करनी चाहिए जिससे यह अमाव्य न हो जावे। यह रोग बहुत जल्दी आता है और बहुत जल्दी जाता है, उचित उपचार होने पर २४ घण्टे में भी शान्त हो सकता है, अन्यथा इसके कारण डम भी घुट सकता है। इस रोग में शीत उपचार, बर्फ चूसना और बर्फ को गर्दन पर बांधना चाहिए। तीव्र विरेचन या तारपीन तेल का एनिमा देना चाहिए। प्रारम्भ से ही Penicillin या Dicrysti-

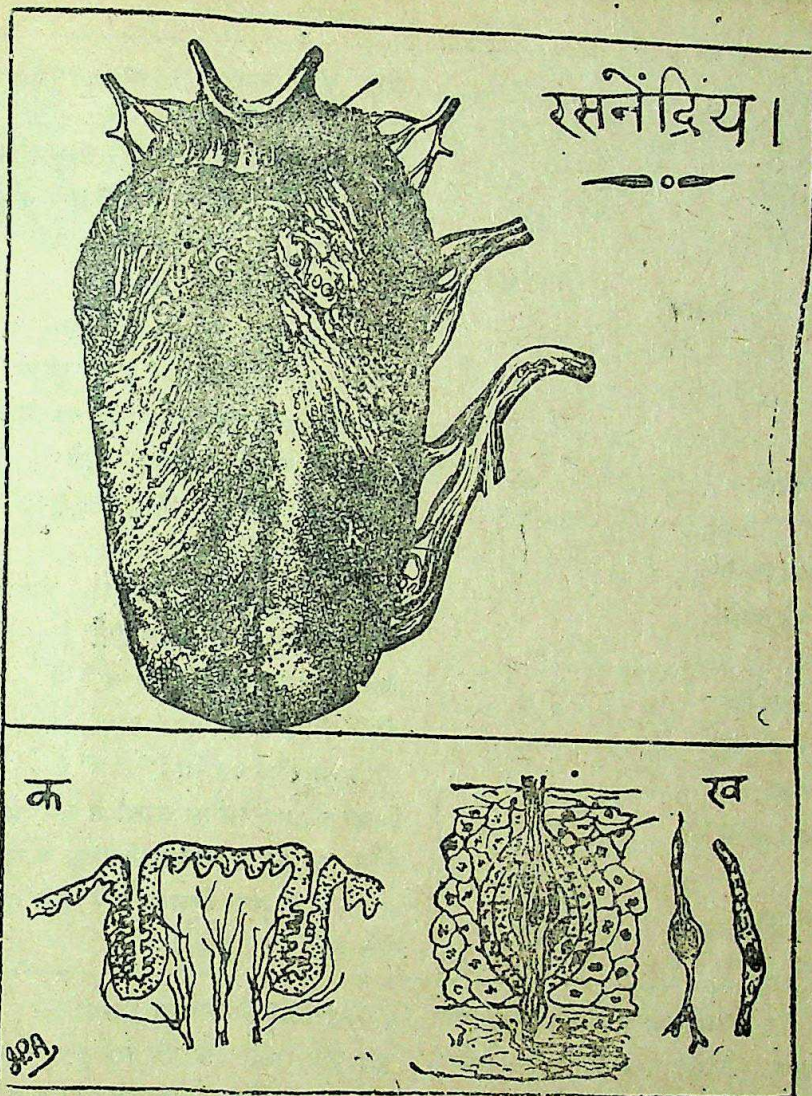
cin—इन्जेक्शन देना चाहिए। रोगी की जान बचाने के लिए एड्रीनलीन क्लोराइड जीभ पर निरन्तर फुरेरी से लगाते रहें और इसी के इन्जेक्शन भी लगायें। चिकित्सक का चिकित्सा चातुर्य ही रोगी को मौत के मुख से निकाल सकता है अन्यथा रोगी 'यमराज का प्रिय' बन जाता है।

जीर्ण जिव्हा शोथ (Chronic Glossitis)

प्रायः फिरङ्ग Syphilis) की तृतीयावस्था में, उपसर्गसे धूम्रपान की अधिकता तथा मद्यपान से उत्पन्न होने वाली रोगावस्था है। यह बड़ी आयु वालों को होता है। इस अवस्था में जिव्हा पर शोथ, व्रण, दरार आदि पाये जाते हैं और वेदना, स्वाद ज्ञान का अभाव एवं वाणी की असमता होती है।

(क) उपरिस्थ चिरकारी जिव्हा शोथ (Superficial)—निश्चित रूप से कैन्सर पूर्व दशा है। प्रथमावस्था में जिव्हा पर लाल व्रण और चकते (Patches) बनते हैं। दूसरी अवस्था में जिव्हा श्वेत चकतों से ढक जाती है। इस दशा को इक्थियोसिस (Ichthyosis) कहा जाता है। तृतीयावस्था में जिव्हा लाल और चमकदार (Glazed) दीखती है। यह अकसा के अपहृत होने और अंकुरों के विकृत हो जाने का परिणाम होता है जिसे जिव्हा की सोराइसिस (Pseracasis lingual) कहा जाता है। चौथी अवस्था में दरारें पड़ जाती हैं और विदर बन जाते हैं। उपत्वचा और अन्तरत्वचा (Dermis) में परिवर्तन दिखाई देते हैं। उपत्वचा मोटी हो जाती है। अन्तरत्वचा में गोन कोशिकाओं का अन्तःसंचरण (Infiltration) हो जाता है। रोग के कारणों के अनुसार चिकित्सा करनी चाहिए।

जिव्हा रोग व जिव्हा के आकार प्रकार में परिवर्तन अन्य रोगों की विकृति से ही अधिकांशतः होता है तथा प्रधान रोग शमन के साथ ही उपद्रव भी प्रशमित हो जाते हैं। यह जिव्हा के आकार-प्रकार में जिन रोगों के कारण विकृति आती है उसका ज्ञान चिकित्सक को रोग निदान की दृष्टि से रखना आवश्यक है अतः रोगानुसार जिव्हा विकृति का उल्लेख रोग निदान में सहायतार्थ प्रस्तुत है—



रोगानुसार

जिह्वा—विकृति

१. जिह्वा शोथ (Glossitis)
२. यकृत के रोग
३. रक्ताल्पता एवं पाण्डु रोग
४. 'ग्रामाशय' के रोग
अंकुश कृमि (Hookworm)
५. हृदय रोग
६. फुफ्फुस रोग एवं श्वास
७. आन्त्रावरण प्रदाह
८. बहुमूत्रता
९. पाकाशय की जलन

जिह्वा पर सूजन, दर्द, गर्मी लाली तथा लाला साव हो
जीम पर मेल की तह जमना, जीम पर दाँतों के निशानन
पड़ना, पीताम
जीम की सतदह मुलायम, जीम का रंग फीकासा पीताम
जीम फटी हुई, उस पर विस्फोट तथा मुखपाक होना
जीम पर काले धब्बे पड़ते हैं तथा जीम नीलाभ होती है
जीम का नीलाभ होना
जीम मलिन, दुर्गन्धयुक्त तथा नीलाभ या रक्ताम
जीम का रंग लाल व जीम खुश्क होती है
" " "
जब्बेदार या नक्शेदार (Map Tongue) होना

रोगानुसार

जिह्वा—विकृति

११. पक्षाघात

१२. क्षय, कैसह

१३. शोथ रोग

१४. दन्त रोग

१५. उपदंश, सुजाक, रक्त विकार

१६. तीव्र ज्वर

१७. अन्त्रिक ज्वर

१८. चेचक

१९. मृगी की सम्भावना

२०. पेचिश में

२१. शरीर में जल की कमी

२२. विटामिन 'बी' की कमी

२३. बहिनेत्र गलगण्ड

२४. मुख रोग एवं आतशक

२५. बुद्धिपन या दिमागी दोष

२६. अत्यधिक निबलता

२७. रक्तमाव (Anemia)

२८. रक्तसाव

२९. पारे के विष प्रक्षरण में

३०. स्वस्थ मनुष्य की जीभ

जीभ सीधी बाहर नहीं आती, पक्षाघात वाले पार्श्व की तरफ झकना

जीभ से सममिश्रित बदबूदार लालास्राव होना

जीभ का अस्वाभाविक रूप से लाल होना

जीभ का पृष्ठ भाग में सफेद होना

जीभ पर घाव होना, मुखपाक

जीभ पर भुस की तरह जम जाना

जीभ पर मोती की तरह दाने उभरना तथा फंल जमना

जीभ दाने उभरना, काली तह पड़ जाय तो मृत्यु निश्चय

जीभ पर काटने जैसा निशान होना

जीभ पर काली तह पड़ना मृत्यु सूचक चिह्न है

जीभ का सूखा-सूखा होना

जीभ पर चिकनी (Smooth) होना

रोगी की जिह्वा में कम्पन होता है।

जिह्वा पर सफेद चिह्न पड़ जाते हैं

रोगी की जीभ का लम्बा होना बुद्धिपन को बताता है

रोगी की जीभ बढ़ जाया करती है

जिह्वा की स्वाभाविक लाली में कमी होना

जीभ का मृदु व कोमल, शिथिल व लम्बा होना

जीभ चौड़ी तथा किनारे ऊँचे नीचे हो जाते हैं।

साफ और तर रहती है

जिह्वा की जन्मजात असंगतियां (Congenital anomalies)

१. बृहद् जिह्वता (Macroglossia)—इसका कारण लसिका वाहिनी, ग्रामनी शिरा तन्तुओं का विशेष रूप से बढ़ा होना है जो मुख्यतया द्राक्षगु नखाम प्रकार के लसिकावहिकावृद्ध (Lymphangioma) के कारण होती है। सूखों, वामन और मृद्धों (Cretisms Embecides) में पेशियों की वृद्धि से उत्पन्न बृहद् जिह्वता पायी जाती है। कीजकाकार उच्छेद (Wed-

ge shaped section) द्वारा शल्य चिकित्सा करें।

२. चिकित्सा—जिह्वा रोगों में मुखरोगोवत ही चिकित्सा की जाती है। आयुर्वेद में दोषानुसार अभ्यंग-प्रतिसारण करें। सहचर तैल दशमूल तैल को लगाना, खदिरारिष्ट, सहकार गुटिका, कुलंजन गुटिका को चूसना इरिमेदादि तैल का गण्डूष तथा मेहदी व जूही के पत्तों को चवाना-यूकना उत्तम है। मुखपाकवत् चिकित्सा करें।

रजिस्टर्ड करवायें

औषधालय का नाम, दवाओं का नाम, आदि बाजिव फीस तथा शीघ्रतापूर्वक रजिस्टर्ड करवाने को एकमात्र स्थान—

दाऊ मैडीकल स्टोर्स, मामू भांजा रोड, अलीगढ़।

गलशुण्डी

डा० श्री सिद्ध गोपाल शुक्ल पुरोहित

आदरणीय पुरोहित जी सुयोग्य लेखक एवं जड़ी बूटी विशेषज्ञ हैं। आपने जबलपुर विश्व-विद्यालय से एम० ए०, तथा बी० ए० एम-एस० सम्मान उत्तीर्ण किया है। आप राज्य वन अनुसंधान संस्था जबलपुर में औषधीय वनस्पति अधीक्षक रह चुके हैं। आपकी दो पुस्तकें भी औषधीय वनस्पतियों के विषय में उक्त संस्था द्वारा प्रकाशित हो चुकी हैं। सम्प्रति राजकीय आयुर्वेद चिकित्सालय रामगढ़ (दमोह) म० प्र० में प्रथम श्रेणी के वैद्य हैं तथा म० प्र० राजपञ्चित आयुर्वेद चिकित्सक मंडल के संयोजक हैं। आपने अत्यन्त व्यस्त समय से समय निकाल यह लघु लेख प्रेषित किया है जिससे आशा है कि पाठक लाभान्वित होंगे।

—दाऊदयाल गर्ग

इसके अन्य नाम निम्न हैं—

स्नानिक—कोवा गिरना

अंग्रेजी—एलांगेटेड यूवूला (Elongated uvula)

सुश्रुत संहिता, भावप्रकाश एवं माधव निदान में

इसका वर्णन निम्नानुसार है—

श्लेष्मासृग्भ्यां तालुमूले प्रवृद्धौ

दीर्घः शोथो घ्मात बस्ति प्रकाशः ।

तुणा कास श्वास कृतं बदन्ति व्याधि

वैद्या कण्ठ शुण्डीति नाम्ना ॥

तालुमूल से निकली हुई वायु से भरी हुई चमड़े की धैली के समान फूली हुई कफ रक्तजन्म सृजन को वैद्य लोग गलशुण्डी कहते हैं। इसमें प्यास, खासी और श्वास भी उत्पन्न होता है।

इसको मुख रोगों के अन्तर्गत शास्त्रकारों ने रखा है। मुख का स्वरूप वर्णन करने हुए वे कहते हैं कि दोनों ओष्ठ, दाँतों की जड़ें (मसूढ़े), दाँत, जिह्वा, तालु, गला और मुख आदि ये सब साती अङ्ग मिलकर मुख कहलाते हैं।

नोट—कोवा गिरने से गले में खराश होती है। आवाज बैठकर कर्णकटु हो जाती है। पढ़ते या बोलते समय मुँह से साँस लेने पर खुँक खासी उठने लगती है। रोगी को कभी-कभी वमन भी हो जाती है या जी मिच-लाता है।

विशेष—कोवा कण्ठ के बीच में ऊपर से नीचे लटका

रहता है। यह भोजन को निगलते समय नाक से निकलने वाले स्रावों को रोकता है।

चिकित्सा—१. कूठ, कालीमिर्च, बच, सेंधा नमक, पीपल, पाढ़ तथा केवटीमोथा के चूर्ण को शहद में मिलाकर घिसने से (कण्ठ के भीतर गलशुण्डी पर) गलशुण्डी रोग मिट जाता है।

२. विही के पत्तों का गर्म-गर्म काढ़ा बना गण्डूष धारण करने से गलशुण्डी में खूब आराम आता है।

३. हारविशार की जड़ या तिर्गुण्डी की जड़ चवाने से लाभ होता है।

४. शूहर का दूध लगाने से गलशुण्डी मिट जाती है।

शल्य चिकित्सा—जिह्वा के ऊपर स्थित गलशुण्डी (कोवा) को अंगूठे तथा अगुली से पकड़कर खींच के मण्डलाग्र नामक शस्त्र से उसका छेदन करें।

सावधानी—अधिक छेदन करने से अत्यधिक रक्तस्राव होने के कारण मृत्यु हो जाती है और थोड़ा छेदन करने से सूजन, लालास्राव (लार बहना) होता है तथा चक्कर आता है। अतएव दृष्टकर्म और निपुण शल्य चिकित्सक गलशुण्डी का छेदन करके निम्न उपचार करें—

पीपल, अतीस, कूठ, बच, मरिच, सोंठ इनका चूर्ण शहद और सेंधा नमक के साथ उस पर मले। बच, अतीस, पाढ़, रास्ता, कुटकी और नीम इनके काढ़े से कवल धारण करना चाहिए। इससे गलशुण्डी रोग नष्ट होता है।

महान शक्तिप्रद आयुर्वेदिक टानिक—

मदनशक्ति कैपसूल

योग—मल्ल सिन्दूर १५ मिग्रा., शुद्ध कुपीलू ४५ मिग्रा., शुद्ध विजया ५५ मिग्रा., त्रिफला १०५ मिग्रा., अरुण १०५ मिग्रा., जायफल, जाबित्री, अकरकग, लवंग प्रत्येक ४५ मिग्रा.।

चिकित्सा निर्देश—बलवीर्य, कांक्षित व शक्ति, पुरुषार्थ बढ़ाने वाले सुप्रसिद्ध एवं सुपरीक्षित कैपसूल हैं। नामर्दी, नपुंसकता, वृद्धावस्थाजन्य निर्बलता, शीघ्रातन, स्वप्नदोष तथा संभोगजन्य निर्बलता दूर करने में लाजबाब हैं। सर्दी, जुकाम, खांसी तथा शरीर में दर्द होने पर भी लाभप्रद है। शीतऋतु में सामान्य व्यक्ति भी इसे कुछ समय व्यवहार करें तो उनमें शक्ति बढ़ेगी, भूख बढ़ेगी, शरीर में स्फूर्ति बढ़ेगी तथा स्वास्थ्य अच्छा बनेगा। इसे सेवन करते समय दूध-मलाई आदि पोष्टिक द्रव्य अविक सेवन करें और चमत्कार देखें। स्त्री-पुरुष दोनों के लिए लाभप्रद है।

चालीस वर्ष से ऊपर की अवस्था होने पर मनुष्य को अपने में एक कमी, निर्बलता तथा निरुत्साह प्रतीत होने लगता है। यह युवावस्था की रोग प्रतिरोधक शक्ति में कमी आने से होना है। ये कैपसूल निःसंदेह इस शक्ति को पुनः प्रदान कर मनुष्य को बल व स्फूर्ति देते हैं। सुपरीक्षित चमत्कारिक कैपसूल है।

ये कैपसूल अन्य अनेक रोगों पर भी व्यवहार कर सकते हैं। निर्बल निस्तेज स्त्रियां भी इसका व्यवहार करके लाभ उठा सकती हैं। सर्दियों में ठण्ड लग जाने से होने वाले सर्दी, जुकाम, हड्कल को भी दूर करते हैं।

व्यवहार विधि—रात्रि को सोते समय अथवा सम्भोग के एक घण्टे पूर्व एक या दो कैपसूल उष्ण दुग्ध को ठण्डा करके तथा मिश्री मिलाकर उनके साथ दें, अथवा प्रातः सायं १-१ कैपसूल लें सर्दियों में प्रतिदिन कैपसूल भी ले सकते हैं। मुरदार नसों को सबल बनाने के लिए “नवयीवन मलहम” साथ-साथ व्यवहार करें।

निर्माता—श्री ज्वाला आयुर्वेद भवन, मामू भान्जा रोड, अलीगढ़

सफेद दागों की शक्तिया दवा—

श्वेतकुष्ठ-नाशक सैट

तीन औषधियों का सैट

- ☀ श्वेत कुष्ठनाशक कैपसूल (खाने के लिए) ३० कैपसूल की शीशी।
- ☀ श्वेत कुष्ठनाशक वटी (लगाने को) ३२ गोली की शीशी।
- ☀ श्वेत कुष्ठनाशक घृत („) २५ मि० लि० की १ शीशी।

सफेद दाग निवारक निश्चित प्रभावकारी दवायें हैं। हमारी इन तीन औषधियों का व्यवहार करें और इस घृणित रोग से छुटकारा पावें। ये औषधियाँ आन्तरिक विकृति को नष्ट करके स्थायी और निश्चित रूप से लाभ करती हैं। सैकड़ों-हजारों व्यक्तियों ने लाभ उठाया है।

इसके प्रभावकारी गुणों के विषय में शंका करने की आवश्यकता नहीं है, निस्त व्यवहार विधि औषधियों के साथ भेजेंगे। १५ दिनों के लिए तीन दवायों का मूल्य—१५.०० मात्र। सेलटैक्स-पोस्टेज आदि खर्चा पृथक्।

पता—श्री ज्वाला आयुर्वेद भवन, मामू भान्जा रोड, अलीगढ़।

स्वस्वस्व

(मुखपाक)

आयु० वारिध डा० रत्न सक्सेना डी. एच. बी., सतना (म० प्र०)

आयुर्वेदीय चिकित्सा योजना—

१. उन कारणों को दूर करना जिनसे यह रोग होता है। २. सावर्देहिक उपचार। ३. स्थानिक उपचार।

चिकित्सा के सामान्य नियम—

चिकित्सा आरम्भ करने के पूर्व पेट साफ करावें। तीसरे दिन वमन करावें। वमन कर्म के दूसरे दिन ही कटु एवं तिक्त रस वाली समशीतोष्ण औषधियों से गण्डूष करावें। यदि रक्तज एवं कफज मुखपाणहो तो रोगी का बलाबल देखकर रक्तमोचन करा दें। इसके बाद कवल करावें। कवल के लिए चमेली की कोपल, पाठा, त्रिफला, मुनक्का का क्वाथ शहद में मिलाकर उपयोग में लावें। या फिर तुलसी, जम्बीर, राई, सहजना सभी या एक या दो मुख में चबा-चबाकर लार टपकानी चाहिए। इससे कफ निस्त होकर रक्त एवं मुंह शुद्ध हो जाता है।

स्थानीय उपचार सामान्य—

१. शुद्ध टंकण को शहद में मिलाकर लगावें।

२. सफेद कत्था बारीक पीसकर छानकर शहद में मिलाकर लगावें।

३. हरी घनिया का रस लगावें। सूखी घनिया को रात भर पानी में भिगोकर पानी से कवल करें।

४. जीरा व कत्था पीसकर जीभ पर लेप करें।

फुल्ल देर बाद लार टपकने से शीघ्र लाभ दिखाई देगा।

५. चिरोजी या गिनी चबाकर रसमुखमें फिराते रहें।

६. शहद को जल में मिलाकर कवल करें।

७. गोंद १ भाग २ भाग पानी में उबालकर छानकर साफ शीशी में रखलें। छालों पर २-३ बार लगाने को दें।
दोषानुसार चिकित्सा—

वातज मुखरोग की चिकित्सा—सावर्देहिक चिकित्सा के अन्तर्गत वस्ति कर्म करवाकर वातनाशक औषधि यथा हरिमंदादि तेल का नस्य करावें। मुखपाकारि या खदि-

रादि वटी गोलियां ४-५ बार बार चूसने को दें। स्थानिक चिकित्सा में पंच लवण या पिप्पली लवण, एलादि क्वाथ शहद में मिलाकर प्रतिसारण (घर्षण) करावें। वात-हर सिद्ध तेल से कवल करावें।

पित्तज मुखपाक—सावर्देहिक चिकित्सायं सर्वप्रथम पेट साफ करावें। पश्चात् पित्तनाशक मधुर औषधि सिद्ध घृत से नस्य करावें। खदिरादि वटी अथवा मुखपाकारि की गोलियां ४-५ बार चूसने को दें।

१. इन्द्रायण, कुटकी, गिलोय, दारुहल्दी, पटोलपत्र, हल्दी एवं त्रिफला का क्वाथ शहद मिलाकर पीवें। इसका कवल भी लाभदायक रहता है।

२. अमलतास, कुटकी, खस, नागरमोथा, पटोल, मुलहठी, लालचन्दन, सप्तपर्ण, हरड़ का क्वाथ पिलावें तथा कवल चारण करावें।

३. कुटकी, तेजवल, दारुहल्दी, नागरमोथा, पाठा, पित्तपापड़ा, लाजवन्ती (छुईमुई) शोध, हल्दी बराबर-लेकर चूर्ण करलें तथा उसमें शहद मिल कर प्रतिसारण (घर्षण) करावें।

४. धर्जुन, उदुम्बर, खदिर, बड़ सभी की छाल बराबर-बराबर लेकर क्वाथ बनावे। उसमें थोड़ी फिटकरी डालकर कवल करावें।

रक्तज मुखपाक—पहले रक्तमोक्षण करावें। पित्तज मुखपाक वाली सभी चिकित्सा के साथ ही साध निम्न चिकित्सा भी अजमावें—

कत्था, कमलकेशर, कुटकी, कवीला, गिलोयसत, नागकेशर, निम्बोली, पित्तपापड़ा, मंजीठ, फिटकरी (लाल) मुलेठी, रसांजन, लोह मसम, वामा घनसत्व, सुवर्णगैरिक, त्रिफला, शुद्ध गन्धक समभाग लेकर चूर्ण कर लें। ४ भाग गोमूत्र में आंच देकर २-२ ग्राम की गोलिया बनाकर रख लें। प्रातः सायं कुर्यें, झरने या नदी के ताजे

पानी से घिसकर लगाने को दें। मुखपाकारि या खदिरादि बटो दिन में ४-५ बार चूमने को दें।

कफज - रोगी एवं दोष का बलाबल देखकर वमन तथा शिरविरेचन करावें।

१. अतिविषा, कूटकी, कूटकफज, देवदारु, नागरपोया, पाठा, रोहिणी को कूटपीस कपडछन करके चूर्ण बनालें गोमूत्र के साथ दें।

२. स्थानिक विकृतिसे प्रतिसारण के लिए पंच लवण या नमक, शंख मसप, गेब के चूर्ण में शहद मिलाकर छातों पर रगड़ें तुरन्त लाभ होगा।

३. घर का कालम, चित्रक, जवाखार, तेजपत्र, पाठा, रसांजन, लौह भस्म, त्रिकटु, त्रिफला बराबर-बराबर लेकर शहद से मिलाकर छातों पर लेप करावें।

४. अम्लकांजी, हथूरप, गोमूत्र, दधिप्रस्तु, क्षीर एवं तेल मिलाकर कवल करावें।

अत्यधिक कफ का प्रकोप होने पर तब अबुंद एवं कांटे हो जाते हैं। जब अधिक रुद्ध न हों तब घर्षण, कफ या प्रापशन करके मधु-नरिका क्षार एवं सोंठ प रगड़ें। मुखपाकारि प्रयत्न खदिरादि बटो चूमने को दें।

त्रिषोपज—रोधाधिक्यना क अनुपार स्थानिक एवं शारीरिक सभी क्रियाये करावें।

रक्तपोषण, घर्षण, अग्निमेदादि तैल का योग करावें, खदिरादि बटो चुमावें।

त्रिफला ववाय या पतञ्जलादि ववाय रितारें।

शुद्ध मुडागा, कामदुग्धा, त्रिकर्णा नममा गड़रें मिलाकर चटावें। मुखपाकारि योग चूमने के लिए दें।

गण्डूष—१. गिलोय, जवाखार, जातीपत्र, दारुङ्गदी, द्राक्षा, त्रिफला का ववाय शहद मिलाकर गण्डूष करावें।

२. दावी, रसक्रिया, सौराष्ट्रीय जल तथा मधु से गण्डूष करावें।

३. कटेरी, गिलोय, चिरायता, जामुन की छात्र, जवाखार, पीपल, सरसों, मेंधव, त्रिकटु त्रिफला बराबर-भाग लेकर चूर्ण बना शहद में मिलाकर लेप करावें। मुखपाकारि बटो को ४-५ बार चूमने के लिए दें। मुखपाकारि बटो बनाने का नुस्खा आगे दिया जा रहा है—

मुखपाकारि बटो—धंवला, जवाखार, पीपल, मिर्च, वहेडा, हरड, हन्नी, सोंठ सब ५-५ ग्राम। गन्धक, चिरायता, चित्रकपल, टाटगी, पीपल, मुलेडी, सरसों, मेंधव १०-१० ग्राम। कत्था १५ ग्राम लेकर कूटपीस कपडछन कर लेवें। फिर ग्राम की छाल, खदिर, जामुन और बड की छान बराबर-बराबर लेकर ववाय बनावें। ववाय की सहायता से १-१ ग्राम की गोन्दिया बना लेवें। दिन में ४-५ बार चूमने को दें। इससे सभी प्रकार के सर्वप्र रोगों में लाभ होता है। गन्धे एवं तालु के अन्य रोगों में भी लाभप्रद है।

आयुर्वेद मत से माध्यासाध्यता—एक दोष वाला मुखपाक रोग प्राग्भिक अवस्था में सहज साध्य होता है। कुचिकृति वाला, एक से अधिक दोषों वाला उपद्रव उत्पन्न हो जाने वाला और अधिक दिनों का रोग कष्टसाध्य होता है। कफज मुखपाक में जब अबुंद की स्थिति आ जाय तब असाध्य हो जाता है। त्रिषोपज मुखपाक भी कष्टसाध्य होता है।

दन्त रोगों पर पंच ब्रह्मास्त्र

::

पृष्ठ ३५ का शेषांश

कर गीणो में मुञ्चि रखें, दन्तशून रिया भी नोत्र, रूई की फुरी से लगावें। आग के विकृतिमाला में रोना हुआ गया रोगी, हुंरना जायेगा। आयुक्तान्द योग है।

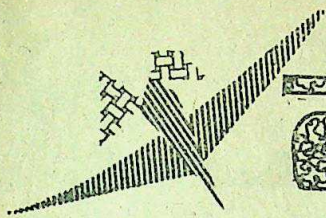
४. इरिमेदादि तैल (मैत्रज्य रत्नावली) — शास्त्रीय योग है जिसका गण्डूष (कुल्ला) करना अत्यन्त लाभदायक है। दो चम्मक तैल मुख में पर कर मुख को बन्द रखे तथा जब मुख थूक से भरने लगे तो मुख को बन्द रखे हुये कुल्ले की तरह मुख में दवा चवाने रहें। जब थूक से मुह भर जाय तो थूक दें।

५. दन्त रोगारि कैपशूल - घटक—आरोग्यवर्धनी, किशोर गुग्गुल, त्रयमाण्डा चूर्ण, रत्नयादि चूर्ण समभाग को खाल में महीन घुटाई कर बड़े साइज तं० ० कैपशूल भर लें। भाजन के बाद १-१ कैपशूल, खदिरारिष्ट + मंत्रिष्ठारिष्ट व जल के अनुपात से घेवन करावें।

उक्त पंच योग रत्न दन्त रोगों पर ब्रह्मास्त्र है जिससे हमने दन्त के असाध्य रोगियों को स्वस्थ किया है।

निषेध—दन्त रोगियों को शीतल जल, रुख व अति

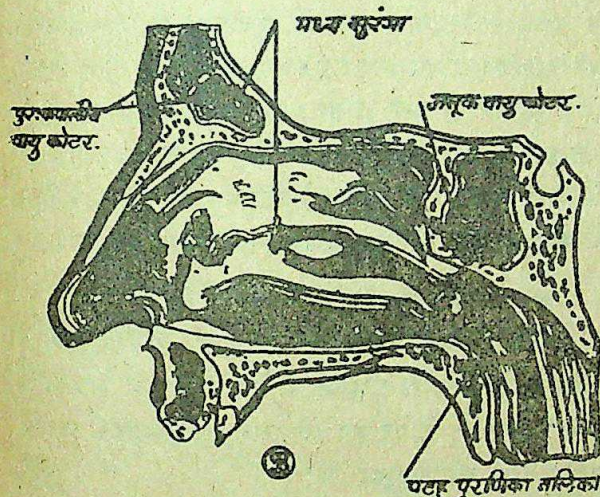
कठिन भोज्य पदार्थ तथा खट्टे फल वर्जित हैं।



तालु शोथ

कविराज डा० गिरधारी लाल मिश्र

तालु के दो भाग हैं— [१] चलायमान कोमल तालु (Soft Palate), [२] स्थिर कठिन तालु (Hard Palate)। तालुगत रोग—गलगुण्डी, तुण्डिकेरी, अध्रुष, मांसकच्छप, अर्बुद, मांस संघात, तालुपुप्पुट, तालु शोथ, तालुपाक हैं।



तालुशोथ (Palatitis)—गलगुण्डी एवं तुण्डिकेरी पर प्रथक लेख प्रस्तुत है। यहाँ आधुनिक चिकित्सा विज्ञानानुसार तालुशोथ [Palatitis] पर संक्षिप्त विवेचन प्रस्तुत है जिसमें आयुर्वेदीय अध्रुष, मांसकच्छप, अर्बुद, मांससंघात, तालुपुप्पुट, तालुशोथ तालुपाक के मिलते जुलते लक्षणों का समावेश है। आचार्य मुश्रम लिखते हैं—

शोफः स्तब्धो लोहितस्तालु वेधे
रक्ताज्ञेय सोऽध्रुषो उज्ज्वरादयः।

अतः तालु शोथ में (लक्षण)—तालु कठिन स्तब्ध, वेदनायुक्त लाल पड़ जाना है तथा उज्जर हो जाना है जो तालुदेश में रक्तदोष के कारण माना जाता है। इस रोग में जो तालु पर व्रण बनते हैं व न नश्वर हो जाते हैं उनमें बहुत तीव्र वेदना होती है। आयुर्वेद में मुख के विभिन्न भागों के अलग-अलग नाम दिये हैं, उनमें एक ही रोग

ओष्ठ तासु जिह्वा या गले में हो तो उसे स्थानानुसार अलग-अलग नाम दिया गया है। पर शोथ और पाक के कारण एवं चिकित्सा एकसी ही होती है।

कारण—आयुर्वेदानुसार यह पित्तज व रक्तदोषज व्याधि है जो निम्न कारणों से सम्भव है—

(क) पारदीय उष्ण औषधियाँ व सल्फा ड्रग्स जैसे तीव्र औषधियों का सेवन

(ख) जीवाणुओं के द्वारा उत्पन्न उपसर्ग, (ग) विषाणुओं की प्रतिक्रिया, (घ) अन्य अज्ञात कारण।

आधुनिक चिकित्सा—आधुनिक चिकित्सक इस रोग का प्रमुख कारण सल्फाड्रग्स व जीवाणुओं को मानते हैं अतः नीचे जीवाणुनाशक औषधियों, डेकाड्रान, बैल्टनेसोल, हाइड्रोकॉर्टिसन, प्रेडनिसोलोन आदि।

आयुर्वेदीय चिकित्सा—आयुर्वेद में इसकी चिकित्सा गल शुण्डिकावत् है। निम्न योग अत्यन्त उपयोगी है—

१. पार्वती रस (रमेन्द्रसार संग्रह)—शुद्ध पारद शुद्ध गन्धक, शुद्ध हिंगुल, महए के फूल, गिलोय, सेमलमूल, दाख, धनिया, चिरायता, मांगरा, तिल, मूंग, पटोल पत्र, पेठा, पेंधाननक यौवन लवण, मधुयष्टि, धनिये की अन्तर्बन्ध भस्म, सब समान भाग। पारद-गन्धक की कज्जली बना दिगुल घोटकर मक्को मिलाकर गोली बनावें। २-२ रस्ती की गोळियाँ मुख में नकर चूसें।

२. सहकार गुटिका (मैथज्यरत्नावली का योग)

३. हरिमेदादि तैल और ज्ञात्यादि तैल का गण्डूष व बोरोगनीपनीन मगाना लाभप्रद है।

४. मानत्यादि घृ (मैथज्यरत्नावली का योग है)—यह पित्तज मुखरोगों में लाभदायक है।

५. पिप्पल्यादि कबल (चरक)—पिप्पली अगर, दाहइलदी, यवक्षार, रसौत, पाठा, हरड़, मालकांगनी का सपभाग चुन पत्र में मिलाकर मुख में लेपकर मुख बन्द रखे। जब मुख थूक से भर जाय तो कबल (कुत्ते) कर दें। बरगद जड़ा क्वाथ से मुख साफ करे।

तालु का कैंसर

डा० गिरधारी लाल मिश्र (विशेष सम्पादक)

तालुबुंध—'पद्माकारं तालुमध्ये तु शोकं विद्याद्रक्ता-
दुर्बुधं प्रोक्तानिगम्'। तालुमध्य में पद्माकार उन्नतशोथ
(जिस प्रकार कमल पुष्प के बीच में कणिका एवं कणिका
के चारों ओर केशर रहती है ठीक उसी प्रकार बड़े अंकुरों
से घिरा तालु मध्यशोथ) तालुबुंध (Cancer of
Palate) कहलाता है। यह रोग असाध्य कहा गया है
और रक्ताबुंदयत् चिकित्सा करने का विघ्न है।

कारण—यह रोग अक्सर बृद्धावस्था में होता है।
हमारे देश में कैंसर में सबसे अधिक पाया जाने वाला
कैंसर ओष्ठ, जीभ गाल और तालु आदि मुख की
क्षिप्त्ती में कहीं भी Leukoplakia के घबड़े के रूप
में शुरू होता है। सुपारी, पान, तम्बाखू आदि को मुंह
में रख कर उसे चूसते रहने वाले व्यक्तियों और जो लोग
सिगार को उनके जलते हुए सिरे को मुख के भीतर रख
कर पीते हैं उन लोगों को ५० से ६५ वर्ष की आयु में
होता है। कैंसर से पहले Precancerous Stage
बहुत लम्बी होती है। उसी में यदि कारण का निवारण
हो जाय तो रोगी को कैंसरजनित मृत्यु से बचाया जा
सकता है।

संक्षण—इस रोग की प्रारम्भिक अवस्था में निदान
होना कठिन है, कारण पहले रोगी को कुछ दर्द लगने
लगता है, आवाज बेठी हुई सी लगती है, जब रोग फैल
जाता है और दर्द आदि की चिकित्सा में लाभ नहीं होता
तो इसकी ओर ध्यान जाता है। तालु में विक्षति (Le-
sion) दीर्घकाल तक श्लैष्मिक कला में सीमित रहती
है। अतः Precancerous Stage में रोग का निवा-
रण सम्भव है।

चिकित्सा—यदि रोग का पता प्रारम्भ में ही लग
जाय तो Radio-therapy द्वारा इसकी चिकित्सा हो

सकती है। विक्षति (Lesion) के नीचे रेडियम द्वारा
पृष्ठ किरणन (Surface Irradiation) असीष्ट
चिकित्सा है। ३०% रोगियों को ५ साल तक जीवित
रखा गया है, पर राग के फैल जाने पर १०% रोगी ४-५
साल तक मुश्किल से जी पाते हैं।

क. हीरा भस्म (अनुपान सहमिश्रण) रसतन्त्रसार
का योग—हीरा भस्म २ मासे, सुवर्ण भस्म, पूर्ण चन्द्रो-
दय २ तोला, अन्नक भस्म १००० पुटी, और मोता पिष्टी
(नं० १) प्रत्येक २-२ तोला। खूब घुटाई करके शीशी में
रखे। १/२ से १ रत्ती तक मलाई + मिश्री या मक्खन +
मिश्री से चाटकर ऊपर से दूध पीवें। प्रथम और द्वितीय
अवस्था तक इस योग को कैंसर में उपयोगी बताया है।

ख. केसोबिन कैप्सूल—ऊष्मा फार्मोसी (ऊष्मा) का
पेटेंट योग है जिसे कैंसर की प्रथम तथा द्वितीयावस्था में
अमृत तुल्य गुणकारी उत्कृष्ट रसायन कहा गया है। उक्त
योग बड़े मंहंगे हैं पर हम निराश रोगियों को अवश्य
प्रयोग करने की परामर्श देते हैं।



उपवैद्य, वैद्य विशारद, वैद्य रत्न के
उपयुक्त १०० पाठ
हर एक परीक्षा के पाठ की कीमत ५० रुपये
—मिलने का पता—

आयुर्वेद समाचार पत्रिका
बिहारी सदन के सामने, आनन्द नगर
खण्डवा (म० प्र०)



कण्ठ शोथ

कवि० डा० गिरिधारी लाल मिश्र (विशेष सम्पादक)

कण्ठशोथ—प्रायः प्रतिक्षाय या अतिभाषण या किसी विशेषक गैस के दुष्प्रभाव से कण्ठ में शोथ होता है। कण्ठशोथ दो प्रकार का माना जाता है—

१. तीव्र कण्ठ शोथ—तीव्र स्वरयन्त्र शोथ का कारण सर्दी लगना है। विशेषतः जब अधिक बोलना या वाणी को बदल कर बहुत बोलना पड़ता है। जैसे गाने वालों मेंनाटक या सिनेमा पार्कों में, अध्यापकों या प्रचारकों में वाणी का अतियोग। २० वर्ष के बालक में कण्ठशोथ तो बहुत सम्भवतः Glottis में Spasm हो जाने से जो श्वासारोघ का भयङ्कर लक्षण होता है, इसमें श्वास-प्रश्वास आवाज के साथ होते हैं इसलिए इसे Laryngeal Stridor भी कहते हैं जिसमें बच्चा रात में सहसा जाग उठता है, एक ऊँचा गहरा अन्तःश्वास भरता है। इसके पीछे खाँसी आरम्भ हो जाती है। इस रोग का आक्रमण सहसा होता है। इससे श्वास काठिन्य एवं अन्तःश्वास में

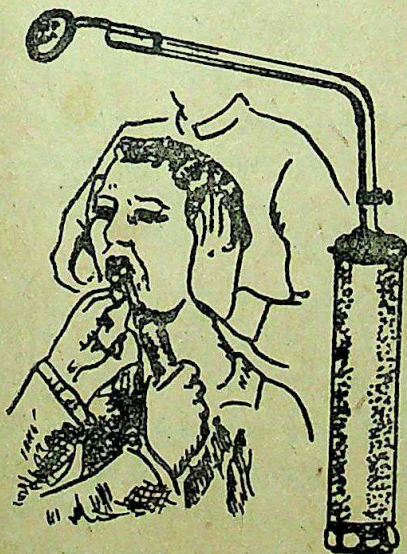
ठकसता रहती है। इसकी पहिचान सरल है क्योंकि इसमें सूजन जिह्वा के पिछले भाग में देखी या स्पर्श की जा सकती है।

२. चिरकालीन स्वरयन्त्र शोथ—नामारोग पुराना हो तो चिरस्थायी कण्ठ शोथ हो सकता है। यह बहुश कष्टदायक है। इसमें निरन्तर आवाज में भारीपन, गदगद वाक्यता [Hoarseness] रहती है और रोगी कण्ठसाफ करने की चेष्टा करता रहता है और तीव्र स्वरयन्त्र शोथ का अवसर बना रहता है।

क्षयजनित कण्ठशोथ—कण्ठ में संक्रमण फुफ्फुस से आता है। कण्ठ का पिछला भाग इसमें अधिक प्रवृत्त है। आवाज बैठ जाने, द्रवों के निलगने में दर्द, खुँक खाँसी, विशेषतः रात को उठना और कृणता इसके लक्षण हैं। बाद में Tubercles में व्रण माव हो जाने पर उपर्युक्त लक्षण तीव्र हो जाते हैं। अब रोगी निरन्तर गदगद वाणी की शिकायत करे तब जरूर यक्ष्मा का सन्देह करें।

पहिचान—स्वरयन्त्र का यह रूप पहिचाना जा सकता है—[क] श्लैष्मिक कला का साधारण रूप से ध्वेत होना जिसके साथ Arytenoids या Epiglottis Folds पर स्थूलता और सूजन होता, अनियमित धीरे-धीरे बढ़ने वाले व्रणों की उपस्थिति से जोकि प्रायः दोनों पार्श्वों पर होते हैं, यक्ष्मा रोग का इतिहास या उसकी उपस्थिति

आयुर्वेद—सितोपलादि चूर्ण या तालीसादि का मधु के साथ विशेषतः क्षयजनित कण्ठ शोथ में उपयोग होता है। च्यवनप्राश तो अशस्ता योग है ही, इसके साथ वसंता मालती रस, चन्द्रामृत, शृङ्गाराभ्र, शृङ्ग मसम, रुद्रन्ती चूर्ण और सितोपलादि चूर्ण मिलाकर मधु से देने पर अत्यन्त लाभदायक है। भोजन के बाद द्राक्षारिष्ट + दश-मूलारिष्ट का सेवन बराबर जल मिलाकर करवाते हैं।



स्वरयन्त्र दर्पण यन्त्र एवं उससे परीक्षा किया जाना

चिरकालीन फिरंगजन्म स्वरयन्त्र शोथ—फिरङ्गजन्म स्वरयन्त्र शोथ साधारण प्रतिश्याय में मिलती है, परन्तु हममें चकते रहते हैं। फिरङ्ग की द्वितीय या तृतीयावस्था में कण्ठ में उसकी स्वरतन्त्रियों (Vocal Cords) को एलैग्मिक कला के नीचे के अवयव में भी फिरङ्ग ग्रन्थियां हो जाती हैं, बाद में इसके ऊपर गहरे ब्रण भी हो सकते हैं जिनमें अतिशय रक्तवृद्धि, विक्षोभ, अतिशय पृथुक्त रक्तस्राव होता है, स्वरभग्न हो जाता है। यक्ष्माजन्म ब्रणों से इनका भेद १—एलैग्मिक कला का चमकता लाल रंग होने से, २—गहरे एवं जल्दी उत्पन्न होने वाले ब्रणों से जिनकी पृष्ठ चमकती पीली रहती है। इसमें सिफिलिस का इतिहास और रक्त की वासरमीन परीक्षा अस्थायिक [Wassermann और Kahns test positive] होते हैं।

चिकित्सा—यह रोग बहुत जल्दी बढ़ता है तथा इसमें तन्त्रुओं की बहुत हानि होती है। तरणास्थि भी आक्रान्त हो जाती है। सिफिलिस की व्यापक परीक्षा करनी चाहिए। प्रमुख चिकित्सा से प्रमुख रोग की शान्ति के साथ इसकी भी शान्ति हो जाती है। आयुर्वेद में रसमाणिक्य, गन्धक रसायन, आरोग्यवर्धनी ६० वि वा अतः उपयोग करते हैं। जात्यादि तैल व जातिपत्र [चमेली के पत्तों] को चबाना व उसके क्वाथ के गढ़ा करना उत्तम है। त्रिपला की अन्तर्धूम मम का मधु से लगाने का प्रयोग होता है।

चिकित्सा सूत्र—गलशोथ तथा कण्ठ शोथ के कारण एवं चिकित्सा एक सी ही है।

क—वाणी का प्रयोग सर्वथा बन्द कर देना चाहिए तथा रोगी को पूर्ण विश्राम करना चाहिए।

ख—धूम्रपान, मद्यपान तथा अन्य स्थानिक विक्षोभक कारणों में बचना चाहिये।

ग—रोगी के साधारण स्वास्थ्य को सुधारना और भावी आक्रमण को रोकना चाहिए।

घ—रोगी को गर्म रखना चाहिए तथा आर्द्र वायु मण्डल में रखना चाहिए, गर्म वाष्प नासिका से दें।

ङ—बाहर से गरम सेक करना चाहिए और पीने में गरम क्षारीय पेय देना चाहिए।

च—गरम गरम पेय अथवा गरम गरम मण्ड [राजस्थान में रावड़ी कहते हैं] बहुत लाभदायक है।

छ—गरम पानी के एक गिलास में नमक व सोडा-बाई कार्ब डालकर गरारे करने चाहिए।

ज—Tr. Benzoin उबलते पानी में डालकर या शैथिल डालकर भाप लेनी चाहिए।

झ—यदि शोथ अधिक हो तो कोकीन या एड्रीनैलीन का स्प्रे करना चाहिए।

ञ—खुरखुराहट व कर्कशता में गले पर गरम स्पञ्ज रखना चाहिए।

स्वानुभूत रूपल चिकित्सा—इस प्रदेश में कफ एवं वात रोगों का बाहुल्य है अतः कफ प्रधान व्याधियां श्वास, कास, नासाशं (Sinusitis), तुण्डकेरी (Tonsillitis) और गलशोथ, कण्ठ शोथ (Pharyngitis & Laryngitis) रोगों से आक्रान्त रोगी हमारी चिकित्सा से लाभान्वित होते रहते हैं। पूर्वाञ्चल भारत का सुविशाल चिकित्सा केन्द्र केदारनाथ मेमोरियल आयुर्वेदिक होस्पिटल, जहाँ प्रतिदिन ५०० रोगी आते हैं में उक्त रोगों की सफल चिकित्सा के अवसर प्रतिदिन प्राप्त होते हैं अतः स्वानुभूत प्रयोग निदिष्ट है—

अनुभूत पंचक

१. त्रिभुवन कीर्ति रस, चन्द्रामृत रस, कास केशरी रस, कल्पतरु रस प्रत्येक एक-एक गोली, तालीसादि चूर्ण एक मासा। प्रातः सायं मधु से या गुलबनपसा क्वाथ से, गुलबनपसा को मूलेठी, गाजवां, उन्नाव, मिलोय, खतमी बीज, द्राक्षा के साथ क्वाथ करके देते हैं। पहली ही मात्रा रोग को निश्चित करती है।

उक्त योग में यदि रोगी को दर्द ज्यादा हो तो हिंगु-लेखर रस १ गोली, कण्ठ से पृथक् होना हो तो प्रताप लवणेश्वर और विषमूटी वटी एक एक गोली मिलानी चाहिए। दुजलजेता रस और कफवेतु रस, स्वरभग्न व गला बँठ जाने पर कफ्याणवलेह व चव्यादि चूर्ण, तालीसादि चूर्ण के स्थान पर दें।

२. लक्ष्मीविलास रस नारदीय—२-० गोली, दिन में दो बार, १० बजे-२ बजे गरम जल से देनी चाहिए।

३. द्राक्षाण्ड + दशमूलारिष्ट ४-४ चम्मच बराबर पानी से भोजन के बाद व उपावस्था में २-२ घंटे बाद दें।

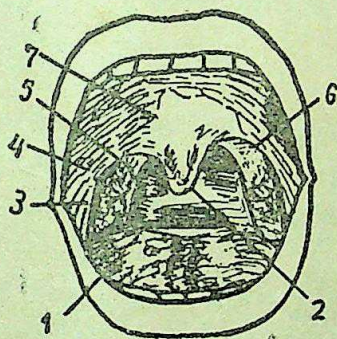
४. मधुकादि गुटिका व खदिरादि वटी व कुलजन वटी, लवंगादि वटी आवश्यकतानुसार चूसने को दें।

५. दशाङ्ग लेप—गले पर लेप करना चाहिए, तीव्र वेदना की स्थिति में भी दशाङ्ग लेप को सरसों तैल और पानी में पकाकर लेप करने से चमत्कारिक लाभ होता है।

कण्ठवातरोग एवं चिकित्सा

आयुर्वेद वाचस्पति डा० गिरिधारी लाल मिश्र, ए.एम.बी.एस.

कण्ठ (Larynx) — कण्ठ बोलने का यन्त्र है जो ग्रीवा में कण्ठ के निचले भाग के आगे स्थित है और ऊपर से उसके साथ जुड़ा हुआ है। यह ऊपर निम्नहामूल और हाइड अस्थि के साथ दृढ़ता से बंधा हुआ है। नीचे की ओर यह टेढ़ा [श्वास नलिका] के साथ एक हुआ-हुआ है कण्ठ के आगे तथा दोनों ओर का भाग केवल त्वचा से ढका हुआ है और स्पष्ट अनुभव होता है। यह ऊपर तीसरे कण्ठ कशेरुका के सामने शुरू होकर नीचे छठे कण्ठ कशेरुका के सामने तक है।



कण्ठ के अन्दर का दृश्य (मुख गुहा एवं प्रसनिता)

१. प्रसनिता पश्चात् भित्ति २. गल गुण्डिका
३. टॉन्सिल ७ मृदु तालु
४. ५. ६. टॉन्सिल के अग्र एवं पश्चात् स्तम्भ

कण्ठ की नैदानिक परीक्षा में चिकित्सक को अभ्यास एवं निपुणता की आवश्यकता है। रोगी को सामने बैठकर स्वरयन्त्र की टार्च पर स्वरयन्त्र दर्शक दर्पण फिट करके रोगी का मुख खुलवाकर तथा जीभ बाहर निकलवाकर यन्त्र के दर्पण को गले में स्थित करके कण्ठ की परीक्षा करनी चाहिए।

कण्ठ के कार्य—[क] फुफ्फुस की रक्षा करना पहला कार्य है। कोई भी बाह्य पदार्थ फुफ्फुस में नहीं जा सकता

क्योंकि एक तो Ary: Epiglottic folds दोनों ओर ओर के आस पास आकर रास्ता बन्द कर लेते हैं दूसरे उपकण्ठ इन folds के ऊपर आ जाता है। तीसरे Vestibular Folds भी संकुचित होकर पास पास आ जाते हैं एवं रास्ता बन्द कर लेते हैं तथा स्वरयन्त्र कफ में कास का वेग होता है जिससे कोई चीज इसमें से नीचे उतर नह सकेगी। आहार पेय आदि लेते समय स्वर यन्त्र ऊपर जीभ की तरफ उठ जाता है जिससे भोजन अन्ननलिका में धकेल दिया जाता है।

[ख] जब भी कोई विशेष श्रम का कार्य किया जात अर्थात् भार उठाया जाता है या भारी वस्तु को धकेला जाता है अथवा बलपूर्वक मल त्याग किया जाता है। स्वर यन्त्र के Vestibular Folds को बन्द करके फुफ्फुसों में हवा भर जाने पर ही किया जा सकता है। इस प्रकार कठिन प्रयत्नों में सहायता करता है।

[ग] वाणी की उत्पत्ति—भाषण का कार्य भी स्वर यन्त्र द्वारा ही सम्पन्न होता है। एतदर्थ एक तो धौकनी के समान हवा का झोंका होना चाहिए जो कि फुफ्फुस में से उतर आता है। दूसरा उस हवा में कम्पन होना चाहिए जो Vocal Folds के द्वारा उत्पन्न होते हैं। इस प्रकार आवाज कण्ठ (स्वर यन्त्र) में उत्पन्न होती है जिसे स्पष्टता प्रदान करने का कार्य ओष्ठ, जिह्वा और तालु करते हैं।

कण्ठ के मुख्यतः निम्न अङ्ग हैं—

1. The pharynx—गला [पृष्ठ ५३-५४ पर]
2. The Larynx—कण्ठ व स्वरयन्त्र
3. The Trachea—श्वास नलिका
4. The Oesophagus or gullet—अन्ननलिका

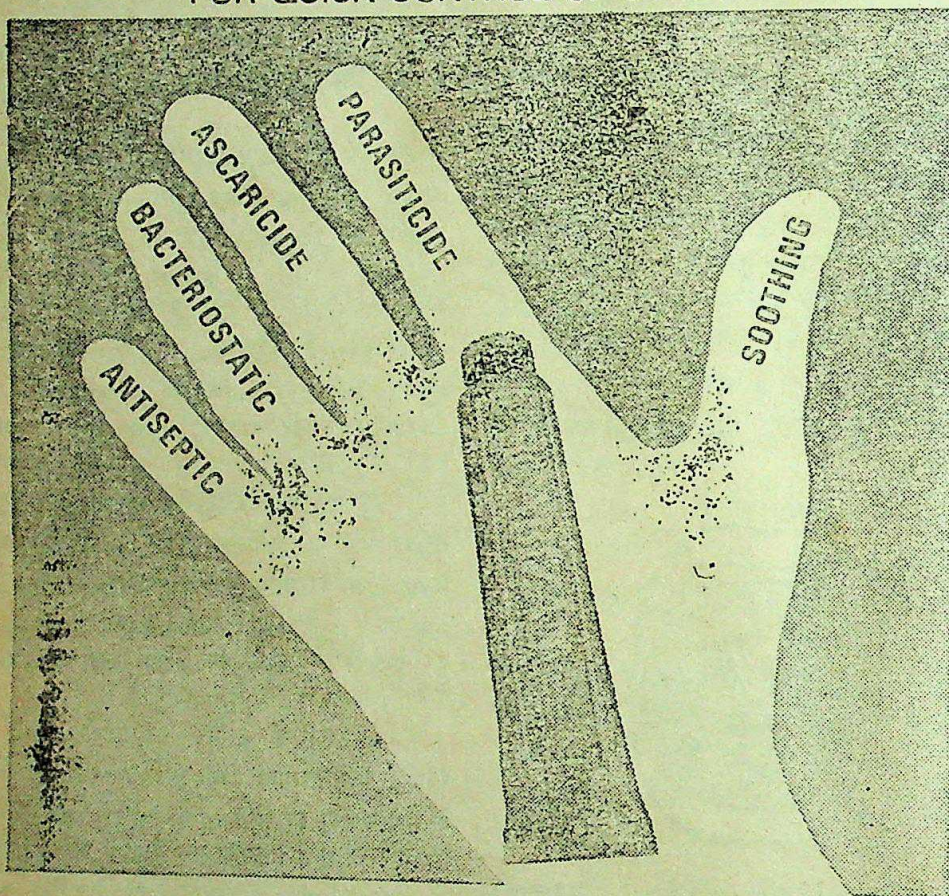
गला और कण्ठ व स्वरयन्त्र का समावेश मुख रोगाधिकार में होने के कारण आगे के पृष्ठों में गलशोथ के साथ अन्य कण्ठ रोगों का भी वर्णन लेखे किन्तु भय से विषय के स्पष्टीकरण का ध्यान रखते हुए संक्षेप में किया जा रहा है।

चन्तरि

5 way action...

SCABIZAN

FOR QUICK CONTROL OF SCABIES



In the treatment of scabies, control of rapid spread of parasite *Acarus Scabies* is of primary importance. **Scabizan** does it effectively. It is equally effective in treating infected scabies wherever they be—webs of fingers, armpits, groins, buttocks and genital parts. **Scabizan** is also useful in treating mild infections of Eczema, Ringworm and Lichens.

Scabizan—A balanced formulation for effective control of scabies and associated dermal infections

Sublimed Sulphur I.P.	4%
Zinc Oxide I.P.	4%
Sulphanilamide I.P.	4%
Benzyl Benzoate I.P.	15%
Benzyl Acetate	5%
Paraffin base	q.s.



ZANDU
PHARMACEUTICAL WORKS LTD.
BOXHALL ROAD (S), DADAR, BOMBAY 400 025

3 BROTHERS/ZS:9981

स्वरभङ्ग रोग एवं चिकित्सा

आधुनिक वाचस्पति डा० गिं घारी लाल मिश्र ए.एस. धी.एस., विशेष सम्पादक—“धन्वन्तरि मुखरोग चिकित्साङ्क”

स्वरभङ्ग (Hoarseness)—गले का बैठना या अवाज का भारी व भद्दी होना, स्वरभङ्ग कहलाता है। वातादि प्रवृत्ति दोष स्ववाही स्रोतों में अक्षिप्त होकर स्वर को नष्ट कर देते हैं जिससे स्वरभङ्ग हो जाता है।

स्वरभङ्ग के कारण—बहुत बोलने से, उच्चस्वर से बोलना (चिल्लाना, भाषण देना), अत्युच्च स्वर से अध्य-न करना, प्रतिश्याय, कास, श्वास, तीव्र स्वरयन्त्र शोथ (Acute Laryngitis) या विषमक्षण तथा शीत पेयों (Cold drinks) का अति सेवन, रात्रि जागरण व

उच्च स्वर में गायन आदि कारणों से स्वरभङ्ग हो जाता है। यात्रा में विभिन्न स्थानों का जल पीने से और केले खाकर ऊपर से गरम गरम चाय पी लेने के कारण स्वरभङ्ग हो जाने के कारण भी मुझे कई रोगियों में मिले हैं।

स्वरभङ्ग के लक्षण—आफुट ध्वनि या कर्कश स्वर, स्वरयन्त्र की स्थानिक विकृति (Laryngitis) के कारण स्वरखरता (Hoarseness of Voice) स्वरभङ्ग का प्रमुख लक्षण है जो निम्नाङ्कित ६ भागों में विभक्त है—

स्वरभेद प्रकार	लक्षण	चिकित्सा
१. वातज स्वरभङ्ग—	वातज स्वरभङ्ग में रोगी की आंखें, मलमूत्र काले हो जाते हैं। स्वर फटा हुआ, धीमा, टूटा हुआ, गधे की तरह कटोर आवाज करता है, स्वरभेदो भवेद वातात् रुक्षः क्षाम बल खरः—चरक।	भोजनोत्तर कालीमिर्च मिला घी पीना, कासमदं का रस, या भारंगो व भृंगराज सिद्ध घृत पीना, नमक मिलाकर तैल पीना, गन्ने के रस में चावल रकाकर या गुड़ के शीरे के साथ चावल पकाकर खाना चाहिए। घण्टे भर बाद पानी पीना चाहिए। कटु तैल में नमक मिलाकर गण्डु करना वातनाशक उपचार करना लाभदायक है।
२. पित्तज स्वरभङ्ग—	नेत्र, मुख, मलमूत्र पीले हो जाते हैं और बोलते समय गले में जलन होती है—‘तालुक्लृष्ट परिदाह पित्तात् वक्त्र मसृयते’—चरक	दृढविरचन देना चाहिए तथा मधुर द्रव्यों [मुलेठी, सुनक खजूर] से पकाये दूध को पीना मुलेठी के श्वाय में घी मिलाकर पीना, मिश्री या ताल मिश्री चूसना और दूध के अनुपात से घी पीना अत्यन्त लाभदायक है।
३. कफज स्वरभङ्ग—	कण्ठ में कफ रका हुआ होने के कारण रोगी धीरे-धीरे बोलता है, खुं खुगता है। दिन में तो धीरे धीरे बोल लेता है पर रात्रि में शीत के कारण आवाज नहीं निकलती। कफान्मन्दो विद्वर खुंखुरा-यते—चरक	पिप्पली, पिप्पली मूल, सोंठ, मिर्च का चूर्ण १ माशा, गो मूत्र से लेना, भोजनोत्तर उक्त चूर्ण को तैल से चाटना लाभदायक है। मधु और क्षार मिलाकर कषल करने से मुख में चिपका हुआ कफ निकल जाने से स्वरभङ्ग ठीक हो जाता है। दूध में पिप्पली, सोंठ उबाल कर पीना भी हितकर है।
४. त्रिदोषज स्वरभङ्ग—	उपरोक्त तीनों रोगों के लक्षण पाये जाते हैं पलरूप रोगी की बात रुक्ष में नहीं आती, इसे असाध्य अवस्था मानी गई है।	अजमोद, हरिद्रा, आमलकी, चित्रक, यक्षार का सम-प्रमाण चूर्ण बना चूर्ण ३ मासे मधुघृत (विषम भाग) से देना हितकर है। ‘कल्याणावलेह’ भी प्रशस्त योग है।

क्षयज-मेदज, स्वरभङ्ग क्षयरोग एवं मेदरोग के कारण भी स्वरभङ्ग होता है जिसमें प्रमुख रोगों के लक्षणों के साथ स्वरभङ्ग भी रहता है और प्रमुख रोग की चिकित्सा से ही उपद्रव स्वरूप स्वरभेद का प्रशमन हो

जाता है किन्तु स्वरभेद यदि क्षयरोग में अनिष्ट लक्षणों के रूप में हुआ हो तथा आवाज बिलकुल बन्द हो गयी हो तो यह असाध्य है। रोग की अन्तिमावस्था का स्वरभङ्ग, मृद्युमुचक है।

असाध्य स्वरभंग—आचार्य सुश्रुत लिखते हैं—

क्षीणस्य वृद्धस्य कृषस्य वाऽपि

चिरोत्थितो यश्च सहोपजातः ।

मेदस्विनः सर्वं समुद्भवश्च

स्वरामयो योनः स सिद्धिमेति ॥

—सु० उ० ५३/७

क्षीण, वृद्ध, कृष रोगियों का स्वरभेद, दीर्घकालीन जन्मजात, सान्निगतक अथवा मेदस्वी व्यक्तियों का स्वरभेद असाध्य है। ऐसे रोगियों की आवाज खुरखुरी मोटी होती है।

चिकित्सा—सूत्र—आचार्य सुश्रुत उत्तर तन्त्र ५३/८ में लिखते हैं—

स्वरभंग रोगी को स्नेहन क्रिया कराकर, वमन विरेचन द्वारा दोषों का शोषण कर नस्य, मुखधावन, धूम्रपान। कवल, अवलेह आदि द्वारा चिकित्सा करनी चाहिए, श्वास, कास, ह्रिक का क्षय रोग में जो योग लिखे हैं—उनका प्रयोग स्वरभंग में भी लक्षणानुसार करे।

कवल धारण (Gargles)—स्वरभेद में कवलग्रहण बड़ा उत्तम उपचार है। कवल-कुल्ले से स्वरयन्त्र, गला, तालु, जिह्वा, दन्तमूल, मुख गह्वरगत अवयवों में चिपका हुआ कफ निकल जाता है जिससे स्वर शुद्ध होकर स्वरभंग दूर हो जाता है।

क—वातिक में कटु तैल + लवण, पित्तिक में घृत + मधु, कफज में मधु + क्षार का कवल प्रशस्त है।

ख—उष्णोपचार हितकर है, उष्णपेय चाय, कोको काफी व उष्ण जल पीना हितकर है।

ग—घृत, रबड़ी, मलाई व मांसाहारियों के लिए मांसरस, हंस, मुर्गा, मोर का मांस हितकर है।

घ—पान का बीड़ा, पिपरमेट का पान व गरम पानी में पिपरमेट डालकर भफारा लेना हितकर है।

ङ—बोरोग्लिसरीन लगाना, गरम पानी में अमृत-धारा डालकर भफारा लेकर मिश्री + शीतल मिर्च चबायें।

च—अधिक बोलने व गाने से स्वरभंग हो तो स्वर यन्त्र को पूर्ण विश्राम देने के लिए मौन धारण करें।

अनुभूत शास्त्रीय योग—

१. कुल्लिजनाच गुटिका—कुल्लिजन ५० ग्राम, कूठ, बच, अकरकरा, लौंग, सौंठ, कालीमिर्च, पिप्पली, इलायची, जावित्री, तेजपत्ता, कपूर, नागरमोथा, कत्था, बहेड़ा १०-१० ग्राम, केशर ३ ग्राम और कस्तूरी १ ग्राम स-को मिलाकर नागर बेल के पान के रस में घोटकर चणकमान गोलियां बना लें। १-१ गोली मुख में रखकर चूसते रहें, १०-१५ गोली चूस सकते हैं। विशेष—हम कस्तूरी के स्थान पर पिपरमेट १ ग्राम डालकर बनाते हैं जिससे योग जहां सस्ता होने पर धर्मार्थ औषधालय में धड़ल्ले के साथ चल सकता है वहां गुणों में कोई कमी नहीं पायी गई।

२. चव्यादि चूर्ण—चव्य, अमलबेल, सौंठ, काली-मिर्च पीपल, इमली, तालीसपत्र, जीरा, बंगलोचन चित्रक मूल, दालचीनी, तेजात, छोटी इलायची के दाने प्रत्येक समभाग लेकर गुड़ मिलाकर गोली बना लें। १-१ गोली दिन में ५-६ बार चूसने को दें।

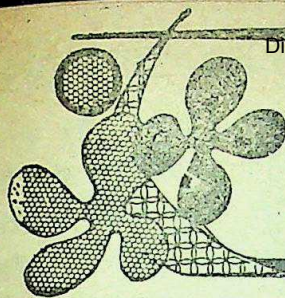
३. कल्याणावलेह—हल्दी बच, कूठ, पीपल, सौंठ, अज-मोव, मुलेठा, सेंधानमक, समभाग का चूर्ण बना १-२ मासे। शहद ६ मासे घृत १ तो० के साथ मिलाकर चाटना उत्तम है।

४. गरम जल में नमक, फिटकरी या अमृतधारा २-चार बूंद डालकर कुल्ले करना उत्तम है।

५. आधुनिक चिकित्सा—प्रोकेन पेन्सिलीन (Procain Pencillin) की चार लाख यूनिट के इन्जेक्शन मांसपेशी में दें। मुख में बोरोग्लिसरीन या टैनिन ग्लिसरीन लगाने और पेन्सिलीन लोजेन्जेज व पेप्स (Peps) सुक्रेट्स की गोलियां चूसनी चाहिये।

अपथ्य—शीतपेयों (Cold drinks) का सर्वथा निषेध करना चाहिये। दिन में सोना, कच्चे फल, दही, अम्ल रस द्रव्यों का प्रयोग नहीं करना चाहिए।

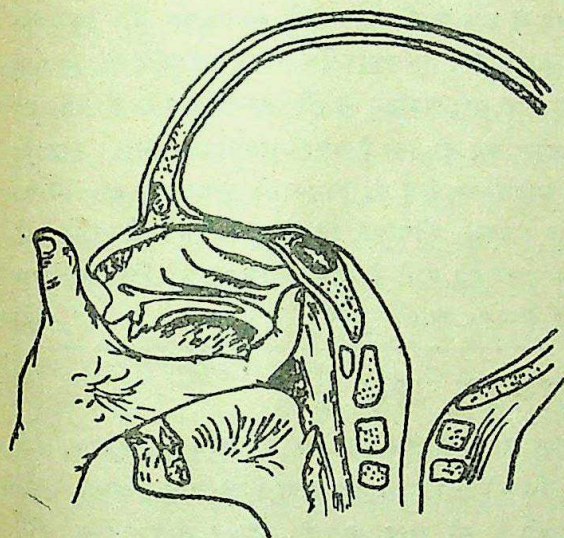
विशेष—सामान्य स्वरभंग कोई असाध्य रोग नहीं है बल्कि स्वरयन्त्र को आराम देने से (मौन रखने से) एक सप्ताह में स्वतः ठीक हो जाता है। उपरोक्त चिकित्सा करने से लाभ निश्चित है।



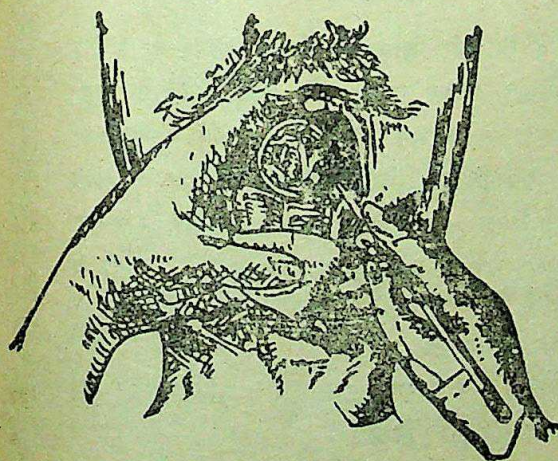
गल शोथ

कविरज रिरारी हाल मिश्र

गला (Pharynx)—गल प्रणाली की रचना भोजन प्रणाली के प्रारम्भिक भाग जो ऊपर कपाल के तले से आरम्भ होकर Larynx कण्ठ के Cricoid cartilage मुद्राकृति तकणास्थि तक है को गला Pharynx कहते हैं।



अन्दर गले की अंगुली द्वारा परीक्षा किया जाना

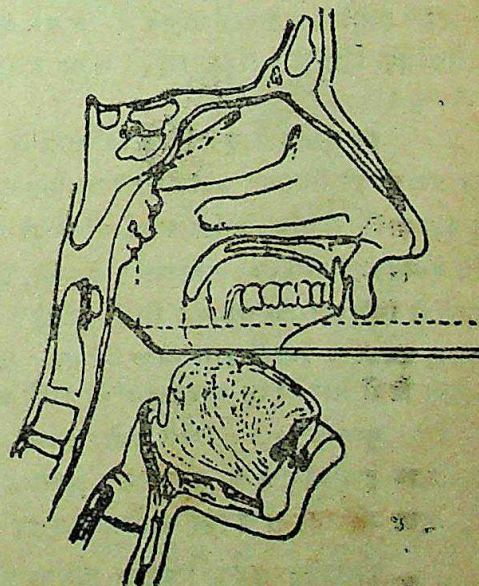


दण्डन द्वारा कण्ठ परीक्षा विधि

तद्वर्ण गलशोथ (Acute pharyngitis)—

गले की श्लेष्मिक कला और कोमल तालु भाग में सूजन हो जाने को तीव्र गलशोथ (Acute Pharyngitis) कहते हैं।

निदान—यह रोग विशेषतया प्रतिश्याय के बाद ही होता है। प्रतिश्याय में नासिका कला में सूजन होती है। वहीं से फैलकर सूजन कण्ठ में आ जाती है। यह रोग प्रायः शीतकाल तथा वर्षाकाल में Streptococcus haemolyticus के संक्रमण के कारण होता है पर अधिक उष्ण द्रव पदार्थों के पीने से, तीक्ष्ण ओषधियों के प्रयोग से व भौतिक ज्वर, रोगास्तिका तथा वातश्लेष्मिक ज्वरादि में भी प्रायः उपद्रव के रूप में होता है। इसका एक रूप अद्यापक वर्ण, प्रचारक वर्ण, तागे वालों व नाटक या सिनेमा पात्रों में (जिनको कि अधिक बोलना या वाणी



को बदल कर बोलता पड़ता है) होने वाली गले की सूजन है। चरकाचार्य ने इसीलिए जोर से पढ़ना मना किया है।

लक्षण—गलशोथ, कण्ठ में कण्डू खांसी तथा हल्के स्वर से यह रोग आरम्भ होता है। कान में, गले में दर्द तथा सिर एवं शरीर में भी हल्का दर्द रहता है। गले में तीव्र कण्डू से कण्ठावरोध सा मालूम होता है। स्वर भरा हुआ, फटा हुआ तथा आवाज कुछ बँट जाती है। परीक्षा करने से कण्ठ तालु व गले के अन्दर की झिलनी Mucous membrane अधिक लाल व सूजी हुई दिखाई देती है तथा गलगुंडी, तालु और तालु की दीवारों में रक्त भरा हुआ दीखता है। गले के भीतर सूत्रापन और गर्मी अनुभव होती है। मुख के भीतर उग्निका आदि के पास गोंद की तरह लसदार बलगम चिपका रहता है और गले में रुद्धता एवं कर्कशता या खांसते रहना (स्वर: खुरखुराये—चरक) प्रायः देखने में आता है कि रोमास्त्रिका या इन्फ्ल्यूएन्जा के उपसर्ग रूप में भी कण्ठ में छोटे-छोटे ब्रण होकर शोथ हो जाने से निगलना भी कठिन हो जाता है।

जीर्ण गल शोथ (Chronic pharyngitis)—यदि गलशोथ बार-बार हो, बीड़ी, पिगरेट का अधिक सेवन किया जाय, दाँतों में पूय रहती है, जीर्ण गल ग्रन्थि शोथ,

अति धूम्र व धूलि पूर्ण स्थानों में निवास और जुमाम हवेशा बना रहता हो तो जीर्ण गल शोथ हो जाता है। इसके अतिरिक्त अनेक दैहिक व्याधियाँ जैसे वातरक्त, आमवात, यकृत रोग, जीर्णकास एवं क्षय रोग, अजीर्ण, वृक्क रोग भी मुख्य या गौण रूप से सहायक होते हैं। कुछ पुरुषों का गला इतना नाजुक होता है कि थोड़ी सी सर्दी या गर्मी [धूल का कण आदि] या आँदंता होने मात्र से शोथ हो जाता है। खासकर चारों ओर की अस्वास्थ्यकर परिस्थितियाँ जैसे तंग भीड़ वाली गली में व तंग भीड़ वाले घरों में रहना, दूषित वातावरण जहाँ किसी फैंक्टरी आदि के रजकण या विक्षोभक वाष्प फैलते रहते हैं। ऐसे स्थान में कफ प्रकृति के लोगों का रहना भी इस रोग का कारण है। नासिकावरोध व नासिकासाव भी जो चाहे अन्य रोग साइनाइटिस के ही कारण बर्यो न हो गले को अक्रान्त कर ही देता है तथा अधिक मद्यपान व धूम्रपान की आदत इस रोग को चिरकालीनरूप प्रदान कर देती है। गला रक्तवर्ण, शोथयुक्त, शिराये उभरी हुई और छोटे छोटे दाने उभरे हुए रहते हैं और अधिकतर व विशेषतः धूम्रपान के समय खांसी रहती ही है।



सफल एलोपैथिक डाक्टर बनें !!

एलोपैथिक चिकित्सा पद्धति सारे संसार में उन्नति कर चुकी है। इस कारण लोग एलोपैथिक चिकित्सा में अधिक विश्वास करते हैं। वह चाहते हैं कि उन्हें मिनटों में रोग से छुटकारा मिल जाए। अगर आप सफल एलोपैथिक डाक्टर बनकर या व घन कमाना चाहते हैं तो आप जुलाई १९८१ में प्रकाशित "एलोपैथिक मैडीकल प्रैक्टिशनर" लेखक डाक्टर महेश्वर प्रसाद उमाशंकर पद्मस संस्करण मंगवाकर अवश्य पढ़ें।

इस पुस्तक में एलोपैथिक चिकित्सा के कठिन शब्दों के अर्थ, नाशतौल, पैमाने, तारमान, संयोग विरुद्ध दवाओं को मिलाकर प्रयोग करने का निषेध, औषधियों की मात्रा, बच्चों को औषधि देने पर बहुमूल्य जानकारी- औषधि निर्माता कंपनियों के पूरे पते और ४५० के लगभग रोगों के कारण, लक्षण तथा उनकी एलोपैथिक के ६००० इन्जेक्शनों, टेबलेटों, मिश्रणों, कम्प्रीनेशन, थेरापी, मरहमों, गोलियों तथा कैंपसूलों से चिकित्सा विस्तारपूर्वक लिखी गयी है। इसके अतिरिक्त, गर्भ परीक्षा, गर्भ गिराना, परिवार नियोजन, बुढ़ी से पैदा विकार, स्नायु दुर्बलता, विटामिन की कमी से होने वाले रोग, एलर्जी विकार व कण्ट तथा निर्वी और विरले जीवजन्तुओं के काटने की चिकित्सा पर विस्तारपूर्वक जानकारी दी गयी है।

मूल्य—२०.०० (बीस रुपये) केवल, डाक-खर्च ४.०० अलग।

नोट—आप इस पुस्तक को मंगवाकर आरम्भ से अन्त तक एक मास तक पढ़ें। यदि पसन्द आ जाय तो रख लें वरना वापिस भेजकर मूल्य वापिस मंगवा लें।

—मैसर्स मैडीकल हाउस— २६५६, कुतुबरोड, दिल्ली—११०००६

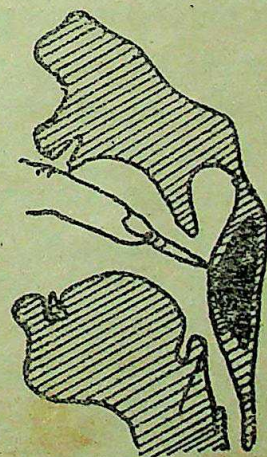
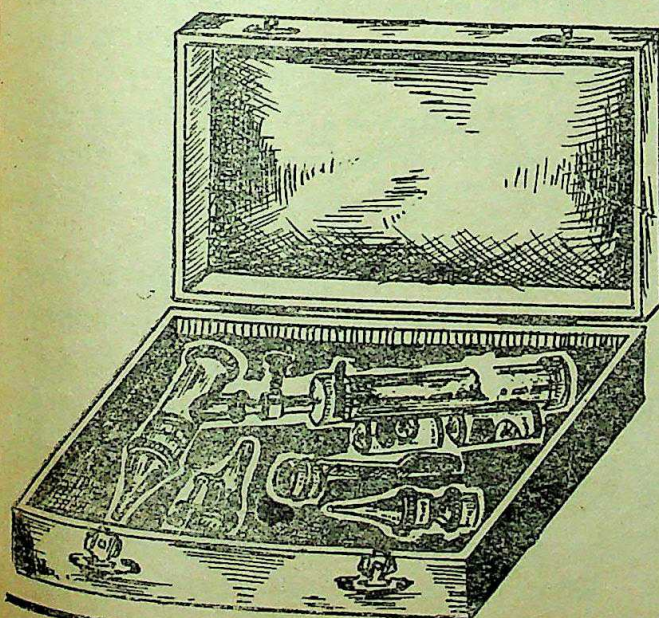
गल ग्रन्थि शोध

डा० पुण्यनाथ मिश्र आयुर्वेदाचार्य, ५-एम० एन० फीडर रोड, बलकृष्ण-७०००१७ ।

चरकाचार्य ने अपने आयुर्वेद भाष्य में कहा है—कि तालुगत कफ की वृद्धि होने के कारण गलग्रन्थि में शोथ (सूजन) पैदा करता है “यस्यश्लेष्मा प्रकुपितो जिह्वा मूले-उत्तिष्ठते । आशु संजनयेच्छोफं करोति गल शुण्डिकाम् ॥ यह रोग कफ वृद्धि के कारण तालुगत ग्रन्थियों में आश्रय लेकर शीघ्र शोथ होकर रोगी को कष्ट देता है । शरीर के अन्दर चूना (Calcium) और रक्त में लौह (Iron) की कमी के कारण रक्त के साथ ग्रन्थियों में कफ भी वृद्धि के साथ सूजन होती है । उसके साथ पित्त और वायु का भी प्रकोप हो जाता है । मौसम के अनियमित—कभी गर्म कभी ठंडा कभी वर्षा आदि के कारण मनुष्य की शारीरिक गति-विधियां दूषित होकर गलग्रन्थि रोग का कारण बनती हैं ।

दूषित जल और कुपोषण के कारण कफ की शिकायत होकर कण्ठगत रोग होता है ।

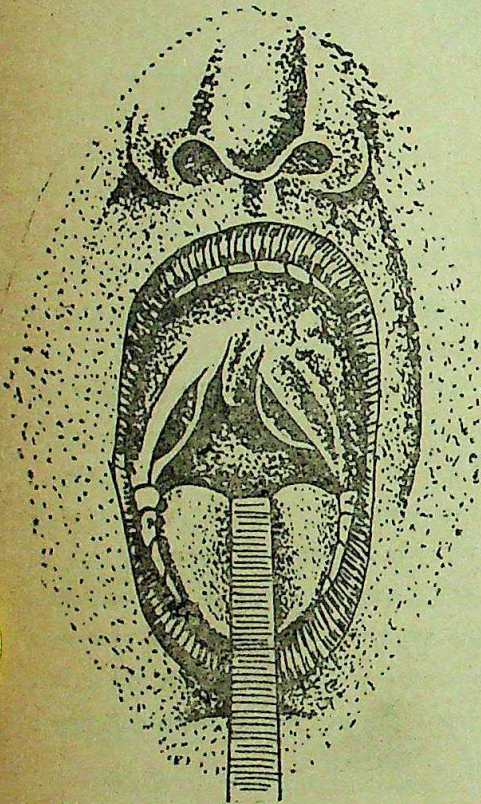
इस रोग में बारीकी से जांच करने पर कफज गल शुण्डी में कफनाशक औषधि के साथ उसका शमन किया जा सकता है—इस रोग के शोथ में कठोरता रहती है गम्भीर मन्द वेदना, मन्द ज्वर और अरुचि रहती है । इसमें गोलमिचं के साथ गाय का घी गरम कर बार-बार सुखोष्ण फाहे से लगाना, सेब का दूध गरम कर फाहे से लगाना और तुलसी पत्ता का रस गरम कर उसमें समान भाग आर्द्रक स्वरस से तथा १० दाने गोल मिचं का चूर्ण डालकर दिन में तीन बार एक-एक चम्मच करके पिलाने, रोग शान्त हो जायगा ।



गल-विग्रहि—छेदन स्थल एवं विधि

घ:ये—नाक, कानगले की परीक्षा को डाइमनी स्टिक

कफ के साथ पित्त की प्रधानता होती है। गलशुण्डी रोग लाल पीना युक्त जलन के साथ तीव्र वेदना प्यास लगना और पक जाने का भी सम्भव रहता है।



बायें ओर की टांसिल फूजी हुई है

ऐसा लक्षण प्रकट होने पर गाय के घी में कपूर मिलाकर गरम करलें और फाहे से गले में लगायें, सैधा नमक, तुलसी का पत्ता, टंकण भस्म और मधु समानभाग मिलाकर गरम करके फाहे से लगाने पर गलगत शुण्डी का कर्षण हो जाता है।

यदि पक जाय तो हरिद्राचूर्ण, शुद्ध फिटकिनी भस्म और गाय का घी समानभाग मिलाकर गरम करलें और गले में लगायें। गलशुण्डी का रोपण हो जाता और घाव ठीक हो जाता है।

कफ के साथ वायु की प्रधानता रहने पर गले में ऊपर उठे शोथ, चुपने के समान वेदनायुक्त, शरीर का रोमांच होना, ग्रन्थि का स्थूल एवं कड़ा होना ये लक्षण प्रकट होते हैं। इसमें गरम जल में लवण मिला गलेगलायें, गणक के मक्खन में गोलमिचं और टंकण भस्म मिलाकर गले

में लगायें। लशुन की चार जावा, गोलमिचं के चार दाने और सरसों के तेल में पकाकर गले में दो चार बार लगायें।

गाय का घी आधा तोला, कपूर चबन्नी भर, अफीम दो रत्ती मिलाकर गरम कर फाहे से दो बार लगायें।

घत्तूर बीज चबन्नीगर (३ ग्राम), मांग के बीज दो आने भर (१५ मि.ग्रा.), होंग १५० मि.ग्रा. सैधा नमक मिलाकर उपर्युक्त दो द्रव्यों का चूर्ण मिलासभी द्रव्य महीन पीसकर कल्क तैयार कर गरम करके गल प्रदेश पर सुहाता हुआ लेप कर दें। गलशुण्डी रोग आराम हो जाता है।

पोटासियम परमेगनेट १५० ग्राम १ पाव गरम पानी में मिला गलगलायें। आराम हो जायगा।

ठोठ घत्तूर बीज और चूना सीप तीनों को महीन पीसकर गरम करलें और सुहाता हुआ गले पर बाहर से लेप कर ऊपर से अकवन या घत्तूर के पत्ते पर तेल चुपड़ कर सेक कर गल प्रदेश पर छापकर कपड़े से हल्के बांध कर सो जायें। एक दो बार में ही रोग दूर हो जायगा।

इस रोग पर कुछ शास्त्रीय औषधि का उल्लेख कर पाठकों के समक्ष रखते हुए लेख को समाप्त करूंगा—

१. महालक्ष्मी विलास रस १ गोली, रससिन्दूर २ रत्ती, टंकण भस्म २ रत्ती १ मात्रा के हिसाब से १ चम्मच तुलसीपत्र के स्वरस गरम कर उसके साथ चटा दें।

२. लक्ष्मीविलास रस नारदीय दो गोली, दुर्जलजेता रस १ गोली, शोषारि लोह १ रत्ती, शुद्ध स्फटिका भस्म आधा रत्ती मिलाकर १ मात्रा बना आर्द्रक स्वरस १ चम्मच गरम कर उसके साथ दिन में चार बार दें।

३. दुर्जलजेता रस २ गोली, गोदन्ती भस्म १ रत्ती, अश्रक भस्म १ रत्ती, रससिन्दूर १ रत्ती एक मात्रा के हिसाब से मधु के साथ मूलेठी का चूर्ण चार आना भर मिलाकर दिन में चार बार चटायें

गरम दूध एक पाव में हल्दी चूर्ण चार आना भर, गोल मिचं चार आना भर, अदरक स्वरस १ चम्मच मिलाकर गरम-गरम सोते समय पीने से रोग शान्त हो जाता है।

इसमें जितनी दवाइयां दी गयी हैं वह पूरी मात्रा है बच्चे को मात्रा कम कर उम्र के हिसाब से देना चाहिए।

डाइग्नोस्टिक सैट

कान, नाक, गला देखने को आवश्यक। टाच के ऊपर विभिन्न जांच हेतु तत्सम्बन्धित उपकरण लग जाते हैं। मूल्य—७८), गाउलेण्ड टाइप (११४)।

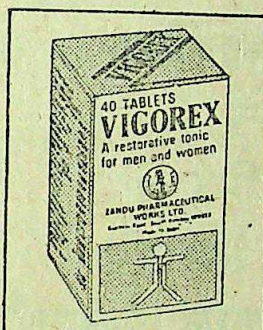
पता—डा. मंडीकल स्टोर्स, अलीगढ़।

• Unique restorative
tonic for health
and vigour
VIGOREX
(SILVER COATED TABLETS)

A non-hormonal
restorative tonic for
men and women

contains 18 essential
herbo-minerals

Prescribe 1-2 tablets twice a day
preferably with milk.

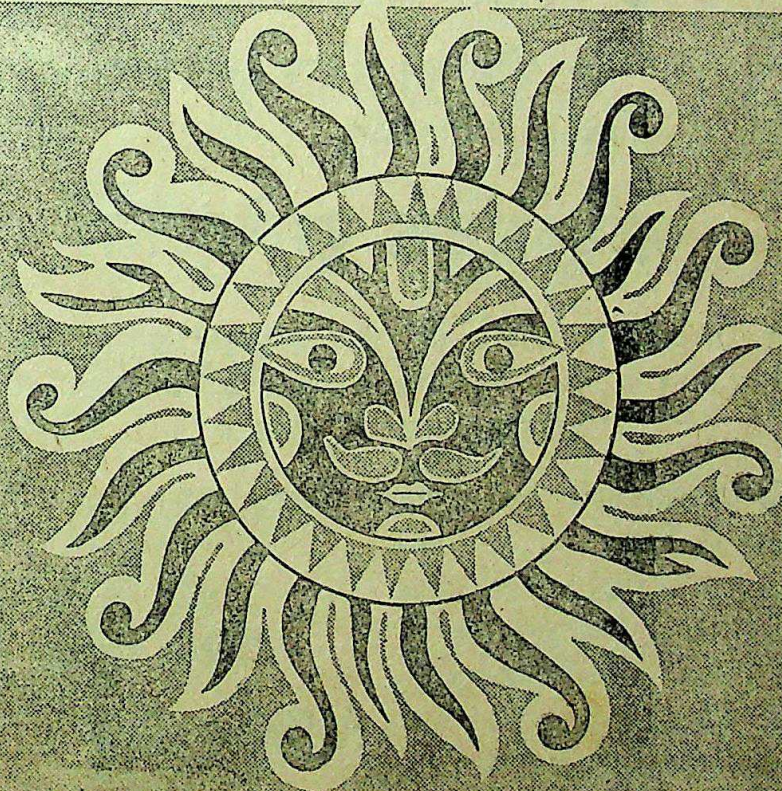


Effective treatment for:
* Functional impotence * Sexual
weakness * Unsatisfactory
sexual performance * Sexual
neurasthenia * Depressed libido
* Unsatisfactory erection
* Loss of vitality * Mental and
physical tiredness * General
tonic for elderly persons.

Available in bottles of
40 tablets.

For more details please ask for
our detailed literature.

 **ZANDU**
PHARMACEUTICAL WORKS LTD.
GOXHALE ROAD (S), DADAR, BOMBAY 400 025.



3 BROTHERS/ZV/4480

शुभ दीपावली मंगलमय हो

दीपावली के पावन पर्व पर सिद्धि फार्मैसी प्रा० लि० अपने ग्राहकों एवं शुभ चिन्तकों का अभिनन्दन करती है एवं प्रस्तुत करती है—

दीपावली उपहार योजना-१६८१

अपनी चिकित्सा में शत-प्रतिशत सफलता पाने के लिए

- विशुद्ध आयुर्वेदिक
- हानिरहित
- पीड़ा रहित
- पूर्ण निरापद
- तत्काल फलदर्शी
- रोग को समूल नष्ट करने में सक्षम

आधुनिक विधि से, कुशल वैज्ञानिकों द्वारा निर्मित—

आयुर्वेदिक इन्जेक्शनों

का अपनी चिकित्सा में उपयोग करें तथा इन्जेक्शनों के बहुमूल्य आर्डरों पर स्टेनलेस स्टील के सुन्दर एवं आकर्षक बर्तनों के सेंट अथवा मनपसन्द इन्जेक्शन उपहार में प्राप्त करें।

विस्तृत जानकारी एवं दीपावली उपहार योजना-१६८१ निःशुल्क मांगाने के लिए आज ही लिखें।

सेल्स डायरेक्टर

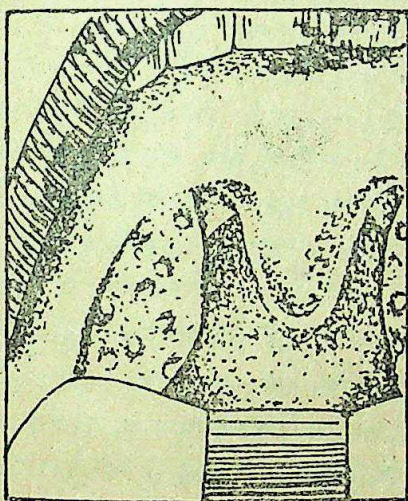
सिद्धि फार्मैसी प्रा० लि०

(घ.) ८-सिविल लाइन्स, ललितपुर (उ० प्र०)

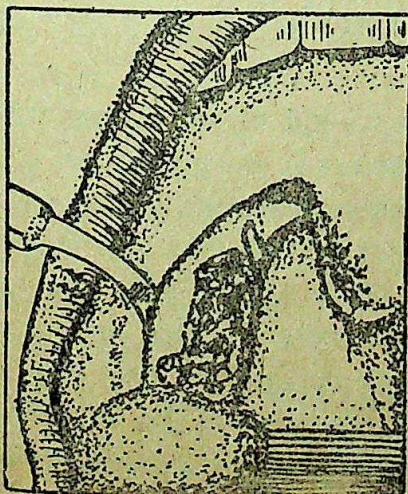
तुण्डिकेरी या टांसिल

डा० विमला अग्रवाल, विमला अस्पताल, बुलन्दशहर (उ० प्र०)

यह तुण्डिकेरी गले में बड़ी हुई टांसिल ग्रन्थि ही है। यह कफ व रक्त के दूषित होने से हुई स्थूल सृजन है। इसमें सुई से कोंचने जैसी पीड़ा होती है। जलन भी होती है। पकने पर पूय आने लगती है। यह सृजन कपास के आकार की होती है इसीलिये इसका नाम तुण्डिकेरी रक्खा गया है।



तुण्डिका शोथ (Acute Follicular Tonsillitis)



तुण्डिका शोथ का दूसरा प्रकार (Vincent's Angina)

टांसिल रोग के कारण—

यह रोग प्रायः बारह वर्ष तक के बच्चों में पाया जाता है। दो वर्ष से कम आयु के बच्चों में व प्रौढ़ युवकों में यह रोग नहीं के बराबर है। यह सम्य परिवारों का रोग है। जिन बच्चों को नाश्ते में विस्कट डबल रोटी मिठाईयां नियमित रूप से मिलती हैं। व्यायाम का अभाव, आराम की बहुलता, शरीर की त्वचा पर शुद्ध हवा व सूर्य रश्मि का अभाव आदि इस रोग के कारण हैं। इस प्रकार शरीर की प्रतिरोध क्षमता नष्ट हो जाती है और रोग बनने लगते हैं। टांसिल ग्रन्थि के कीटाणु जब बाह्य कीटाणुओं से हार जाते हैं तो इन ग्रन्थियों को आक्रान्त कर लेते हैं। सुजाक आतशक व टी० बी० रोग से युक्त माता पिता के द्वारा भी बच्चों में टांसिल रोग हो जाता है। खट्टे-मीठे, तेलयुक्त पदार्थों का अधिक सेवन इसके प्रमुख कारण है। यह रोग कफ प्रधान है। बसन्त व हेमन्त ऋतु में ही इस रोग का प्रकोप अधिक होता है। सदैव नजला बना रहने से भी इस रोग के होने की सम्भावना होती है। यदि हमारा आहार बिहार ठीक हो तो शरीर की रोगनाशक शक्ति भी ठीक रहती है।

लक्षण—

इस रोग में सर्दी लगती है, मुख से कई प्रकार का स्राव आता है। तेज बुखार होता है। श्वास गति में कठिनता होती है। जिह्वा सूखी व मैली होगी। प्रायः रोगी को कब्ज मिलेगी। मूत्र कम व गाढ़ा होगा, गले में खरास व खांसी, सिर में दर्द, कान व जबड़े में दर्द होना टांगों में दर्द आदि लक्षण होते हैं।

टांसिल की प्रथम अवस्था में रोगी के गले में दर्द रहता है। व साधारण जुकाम व खांसी रहती है। यदि उसी समय ध्यान न दिया जाय तो टांसिल ग्रन्थि बढ़ने लगती है। खाने पीने में बाधा होती है। ऊपर रहने लगता है, खांसी बढ़ जाती है, सिर भारी रहता है, भूख

कम हो जाती है, अन्दर देखने से गला लाल होता है। इस समय भी उचित ध्यान न दिया जाय तो दूसरी अवस्था के सभी लक्षण तीव्र हो जाते हैं। सूजन में पूय हो जाती है। बुखार बहुत तीव्र होता है। सारे शरीर में अति तीव्र वेदना होती है।

चिकित्सा—

यदि रोग तीसरी अवस्था में पहुँच गया है तो तत्कालिक चिकित्सा आवश्यक है। शल्य क्रिया द्वारा बड़े हुए भाग से पस निकलवा देनी चाहिए। सम्पूर्ण टांसिल ग्रन्थि को निकलवा देना रोगी के पूर्ण जीवन के लिए भयानक हो सकता है। शरीर में छोटे से छोटे अवयव भी अपने-अपने कार्य में संलग्न हैं और शरीर को लाभ पहुँचाते हैं। यह अन्दर कुछ भी बेकार नहीं है। फिर टांसिल तो एक अति लाभकारी ग्रन्थि है उसे समूल नष्ट करना कहां की बुद्धिमानी है। बल्कि इस शोथ युक्त भाग को औषधि व उचित आहार विहार के द्वारा ठीक करना चाहिए।

मसूर पकाकर पीस लें और गर्म-गर्म गले पर बांधें ऊपर से पीपल या अरण्ड के पत्ते गर्म करके बांधने से रोगी को अति शीघ्र लाभ होता है। चमेली के पत्ते पानी में उबाल कर गरारे करने से भी लाभ होता है।

अमलतास, बनफड़ा, दूध, घी को पकाकर हलुआ सा बना गले पर बांधना चाहिए। अमलतास से सिद्ध किया दूध रोगी को पिलाने से लाभ करता है।

बनफड़ा में थोड़ा सा पानी डालकर हल्का उबाल लें व गर्म-गर्म गले पर बांध दें अवश्य लाभ होगा। यह सभी प्रकार के प्रयोग जमे हुए कफ को पिघलाकर दूर कर देते हैं। और ग्रन्थि अपने स्थान पर ठीक प्रकार कार्य करने लगती है। खदिरादि वटी चूसने के लिए लाभकारी है।

पीपर, अतीस, कूठ, बच, कालीमिर्च, सोंठ इनको समभाग लेकर चूर्ण बनायें तथा शहद में मिलाकर अन्दर शोथ पर डालें।

जवारका, रसोद, दाहहल्दी, पीपर इनको पीसकर शहद के साथ गोली बना लेनी चाहिए। इनको चूसने से टांसिल ठीक हो जाता है।

गर्म व ठंडे पानी के गरारे करने चाहिए। गरम पानी से कफ पिघलकर निकलने योग्य हो जाता है। तुरन्त ही

ठंडे पानी के गरारे रक्त गति को बढ़ा देते हैं। इससे अपूर्व लाभ रोगी को होते देखा गया है।

इस रोग के साधारण रूप से दो भाग किये जा सकते हैं—

१. तीव्र ग्रसनिका प्रदाह Acute Tonsillitis

२. जीर्ण ग्रसनिका ग्रन्थि प्रदाह Chronic Tonsillitis

तीव्र ग्रसनिका ग्रन्थि प्रदाह—

यह रोग पाँच वर्ष से कम आयु के बच्चों में होता है, इसमें कई बच्चों को ग्रन्थि सूजन होती है। लेकिन गले में विशेष सूजन नहीं होती। बच्चों को १०२ से १०४ डिग्री फारनहाइट तक ज्वर रहता है। नाड़ी कफ युक्त अंगुली के नीचे फुदकती सी चलती प्रतीत होगी व नाड़ी गति १०० से १५० तक हो सकती है। जिह्वा फटी हुई मलीन होती है। बच्चे को सांस लेने में विशेष कठिनाई होती है। रोगी का गला देखने पर गला लाल होगा, शुण्डिका सूजी हुई दिखाई देगी। इसमें कई बार संक्रमण कण्ठ नली की ओर होने से कान में भी दर्द होने लगता है। गले में इलेन्मा इकट्ठी होने से खांसी भी होने लगती है।

जीर्ण ग्रसनिका प्रदाह—यह रोग पन्द्रह वर्ष तक के बच्चों को होता है। लम्बी बीमारी के पश्चात् या बीच में उपद्रव रूप में भी यह बीमारी हो जाती है। इसमें गला प्रायः खराब रहता है तथा आवाज भी बदल जाती है। इसमें रोग का बार-बार आक्रमण होता है। इसमें कई बार गले में विद्रधि या चारों ओर से गले में सूजन आ जाती है।

चिकित्सा—रोगी को सर्दी से बचाना चाहिए। जब तक बच्चे को ज्वर हो आराम से बिठाना चाहिए गरम पानी से या नमक या फिटकिरी डालकर गरारे करायें। गर्म पानी दिन में ३-४ किलोग्राम अवश्य पिला दें।

रोगी को कब्ज नहीं रहनी चाहिए। हल्का खाना देना चाहिए, ज्वर शान्त करने के लिये मृत्युंजय रस, महा-लक्ष्मी विलास रस आदि का प्रयोग करना चाहिए। कटफलादि कषाय कुल्ला करने देना चाहिए। च्यवनप्राश इसमें विशेष लाभकारी है। वातनाशक तैल के व्यवहार से ग्रन्थियों पर मालिश करके भाप की सेक देनी चाहिए। यदि औषधियों से यह ठीन न हो तो शल्य कर्म द्वारा चिकित्सा करनी चाहिए।

मुख एवं कण्ठ रोगों पर आयुर्वेद सिन्धु की चतुर्दश बिन्दु

डा० गिरिधारी लाल मिश्र आयुर्वेद वाचस्पति

मुखपाक पर अव्यर्थ योग—

१. बोरोग्लीसरीन व सौभाग्य प्रवाही—सुहागे के फूलों को मधु में मिलाकर सौभाग्य प्रवाही बनाया जाता है जो मुखपाक पर लगाना अत्यन्त लाभदायक है। इस योग का आधुनिक योग बोरिक एसिड पाउडर को ग्लेसरीन में मिलाकर बनाया जाता है। बोरिक एसिड २० ग्राम को १०० बूंद गर्म पानी में घोलकर ग्लेसरीन ४५ मि.लि. में मिलाकर कुछ देर गर्म पानी में रखने से बोरिक ग्लेसरीन में हल हो जाता है। इस समस्त प्रकार के मुखपाक व मुख कण्ठों में रुई की फुरेरी से लगाना लाभप्रद है। मुखपाक की सभी अवस्थाओं में परभोयोगी बहुप्रवर्तित योग है।

२. मुखपाक हर योग (र. त. सा.)—सफेद कत्था ५० ग्राम, छोटी इलायची छिलके सहित तथा शीतल चीनी २५-२५ ग्राम, कपूर ५ ग्राम, सेलसरी १०० ग्राम क कपड़छन चूर्ण बनाकर अच्छी तरह घुटाई कर मिला लें।

उपयोग एवं सेवन विधि—यह चूर्ण दाहयुक्त जिह्वा के अतः, मुखपाक में बड़ा हितकर है। इसको चुटकी भर मुख में डालें तथा मुख जब राल से भर जाय तो थूक दें। दिन में ५-७ बार ऐसा करने से मुखपाक शीघ्र अच्छा हो जाता है।

विशेष—जीर्ण मुखपाक व पूय प्रधान मुखपाक में उक्त योग में ६ ग्राम तृतीया का फूला मिलाकर इसे तीव्र प्रवाहक बनाया जा सकता है—मुख में उपरोक्त विधि से प्रयोग करने से मुख में लगता है पर सहन करने पर शीघ्र लाभदायक है। नीलाथोथा वामक है अतः थूक कण्ठ से नीचे न जावे। तीव्र मुखशोषक विष व जीवाणु नाशक है।

३. खदिरादि वटी—खैरसार (कत्था) ४० ग्राम, जावित्री, कंकोल मिर्च, कपूर, सुपारी १०-१० ग्राम—जल में मर्दनकर गोलियां बनाकर छाया में सुखाकर रख लें। १-१ गोली दिन में ४-५ बार चूसनी चाहिये, चूसकर गुनगुने पानी से कुल्ला कर लें। मुखपाक, स्वर मंग, जिह्वा विकार, दन्त ओष्ठ, तालु आदि रोगों में लाभदायक है।

४. जीर्ण मुखपाक पर स्वानुभूत व्यवस्थापत्र—

क-कामदुधा २ रस्ती, प्रवालपिष्टी २ रस्ती, मक्ता-

पिष्टी २ रस्ती, शतपत्र्यादि चूर्ण १ माशा। प्रातः सायं ठंडे जल से सेवनीय।

ख-आमलकी रसायन १-१ माशा १० बजे ३ बजे ठंडे पानी से सेवनीय।

ग-खदिरादिष्ट चार-चार चम्मच बराबर पानी से भोजन के बाद सेवनीय।

घ-खदिरादि वटी चूसना, मुखपाकहर योग तथा बोरोग्लीसन ४-५ बार लगाना।

ङ-मुन्दररेचन, पंचसकार व अविपत्तिकर चूर्ण १ माशा सोते समय सेवनीय। हमारी चिकित्सा में विगत १० वर्षों में दर्जनों ऐसे रोगी भी आये जिनको मुखपाक ५-१०-१५ वर्षों से भी पुराना हो गया था। एलोपैथिक के विटामिन बी कम्प्लेक्स के Beplex आदि उच्चतम इजे-क्शन लेने पर २-३ महीने ठीक रहते तथा दवा का असर समाप्त होने पर फिर हो जाते थे।

प्रयोग अवधि—उक्त प्रयोग की अवधि चालीस दिन है। हमने जीर्ण मुखपाक के रोगियों को ४० दिन तक इसका प्रयोग कराया तथा उन्हें पुनः यह शिकायत आज तक नहीं हुई। मुखपाक को ठीक करने में ५ से १० दिन तक इसका प्रयोग पर्याप्त है पर असाध्य जीर्ण रोगियों को धैर्य पूर्वक चालीस दिन तक सेवन करना चाहिए।

५. घन्वन्तरि लेप (वैद्य सहवर)—शिलाद्रव (जल में परिश्रुत किया) १०० ग्राम, मधु १०० ग्राम, उदुम्बर सत्व १० ग्राम, स्फटिका ३ ग्राम, मृतसंजीवनी सुरा १० मि.लि. सबको मिलाकर, छानकर रख लें। रुई की कवलिका से गले में लगावें। उपयोग—यह लेप रुई की फुरेरी से गले में दिन में ३-४ बार लगाने से तुण्डिकेरी (Tonsillitis) गलरोहिणी, स्वरमग में लाभदायक पाया गया है। पुराने टॉन्सिल तथा नये कास में यह गले में लगाना अत्यन्त लाभदायक है।

—आचार्य विश्वनाथ द्विवेदी

६. रुद्रशक्ति (कण्ठमाला पर सफल सिद्ध गुप्त प्रयोग) घटक—उत्तम फिनायल ६० मि.लि., कुसुम बीज तैल (पाताल यंत्र विधि द्वारा निष्कासित) १५ मि.लि., सत्यानाशी बीज तैल ७ मि.लि., मौसूरी चन्दन तैल ७ मि.लि. निर्माण विधि—क्रमशः सब तैलों को मिलाकर शीशी में

रख लें, इस दवा तैयार है। मात्रा—इसकी मात्रा अवस्थानुसार १०-१५ बूंद से ४०-५० बूंद तक की है।
अनुपान एवं सेवन विधि—केवल एक बार गोदुग्ध या निम्नांकित वूटियों के अर्क से दें। अर्कयोग—स्वर्णक्षीरी पचाऊ, ब्रह्मरन्धो, कचनार छाल, हाथी सुण्डी प्रत्येक आधा-आधा किलो का जोड़ूट चूर्ण १६ किलो पानी में २-३ दिन तक भिगोकर रखें। फिर आठ बोतल अर्क विधानानुसार परिश्रुत कर लें। यह अर्क कण्ठमाला में उत्तम प्रभावक है। गुण और उपयोग—कण्ठमाला जैसा हठो रोग समूल नष्ट हो जाता है।

७. कण्ठामृत—कायफल, कालीमिर्च, कुलञ्जन, अकरकरा, सोंठ प्रत्येक का १०-१० रत्ती काइछन चूर्ण मेथिलेटेड स्प्रिट १३ औंस में मिलाकर बीसी में भरकर रख दें तथा १० दिन बाद छानकर रख लें। इस कण्ठामृत तैयार है। उपयोग—रुई की फुरेरी से गले में लगाने से टांगिल शोथ, क्रीडा गिरना, गले का दर्द, पानी या थूक निगलने में दर्द आदि कण्ठ रोग ठीक होते हैं।

८. कण्ठलेप—लौंग, सोंठ, कालीमिर्च, पोपल, कुलञ्जन, मुलहठी, गुद टकण प्रत्येक का कपड़छन चूर्ण ३-३ ग्राम, प्याज स्वरस ६० मि.लि., मूतसंजीवनी सुरा ६० मि.लि. सबको मिलाकर कांचपात्र में १ सप्ताह तक मुख बन्द कर रखें तथा पन्द्रह दिन छानकर रख लें। उपयोग—गलशुण्डी शैथिल्य व कौवा गिना में अनुभूत है।

९. गलशुण्डी क्षोशन—फिटकरी १० ग्राम, मांजूफल १० ग्राम, पानी १०० मि.लि. में मिलाकर चतुर्थांग बना लें। रुई की फुरेरी से कौवा गिरने पर २-३ बार लगाने से ही आश्चर्यजनक लाभदायक है। कभी-कभी कौवा गिरने से रोगी को शुष्क कास व गले में खरखरी बनी रहती है। ऐसी स्थिति में २-३ दिन में इस प्रयोगसे काग-लिया सिक्कड़कर छोटा हो जाता है। टांगिल की सूजन व गले के दर्द में भी इससे लाभ होता है।

१०. कण्ठ रोहिणी पर सफल प्रयोग—प्याज के रस की भाप देने से आशातीत लाभ होता है। आवश्यकतानुसार प्याज का रस निकालकर अंगारे या तप्त तवा पर डालें तथा घूर्णों को मुख और नाक में जाते दें। रोगी को पेट के बल लिटाकर उसका मुँह खुला रखें तथा गर्म तवे पर प्याज का रस डालें।

११. अमलतास क्वाथ—अमलतास वृक्ष की छाल का चूर्ण १० ग्राम को जल २०० मि.लि. में पकावें। ५० मि. लि. शेष रहने पर छानकर रख लें। कण्ठ शोथ व गलगन्धि शोथ की तीव्रतास्थिति में जब डाक्टर लोग आपरेशन द्वारा भी रोगी बचाने में असमर्थ समझें इस योग की १-१ बूंद रोगी के मुँह में डालने जावे। एक-एक बूंद मरणासन्न रोगी के लिए सुधाविन्दुवत् प्रभाव दिखायेगी तथा कुछ बूंद गले में जाते ही रोगी शान्ति अनुभव करेगा।

१२. आयुर्वेदिक बेलाडोना—लाल गुंजा (बुंधची) १०० ग्राम, वच्छनान १० ग्राम अलसी की भूसी १० ग्राम, त्रिवारा थूहर १० ग्राम तथा सहजने के पत्ते का रस ५० मि. लि. गुंजा के ऊपर के छिलके उतारकर उभे पानी में फूलने दें। एक दिन पानी में मींगने से गुंजा नरम हो जाने पर उसे खरल में डालकर खूब घुटाई करें। फिर उपरोक्त दवा डालकर सहजने के पत्ते के रस में घुटाई करते-करते मलहम जैसी बना लें। कपड़े पर लगा कर विद्रधि पर लगावें सूखने पर यह जमकर चिपक जावेगी। गुण—किमी भी तरङ्ग की विद्रधि, गलगड, गडमाला, वदसहन के लिए उपयोगी है। गिल्टी दब जायेगी या पककर फूट जावेगी (गुप्त सिद्ध प्रयोगांक)

विशेष—हम इसकी बत्तिया बनाकर सुखा लेते हैं तथा रोगी को पानी में धिसकर लगाने देते हैं साथ में कचनार गुग्गुलु खाने को देते हैं आशातीत लाभप्रद है।

१३. पायरिया नाशक मंजन—(स्व० हुकीम अजमल खां देहली का गुप्त प्रयोग—(सुचानिधि दन्त रोगाङ्क) घटक—भल्लातक शुष्क ८ नग, मांजूफल ८ नग, सुपारी ८ नग, पीली कौड़ी ३२ नग। इनको जलाकर चूर्ण कर लें। इसमें हिगुल, निम्बपत्री १६ माशे (हिगुल को निम्बपत्री की तुल्य ५ तोला में लपेटकर हल्की आंच देने से निम्बपत्री बनता है) मुर्दासिगी १६ माशे, राज १६ माशे, नीलाथोथा ८ माशे। सबको पीस छान मिलाकर मंजन तैयार कर लें।

प्रयोग—रात में सोते समय दाँतों पर मलें और सो जायें। प्रातः पानी से मुँह धो लें।

१४. दन्त विकासन (रसयोगसागर)—जंग मरम, ताम्र भस्म, अभ्रक मरम समभाग को अमृता स्वरस की भावना देकर लघुपुट में फंककर रखें तथा १-१ रत्ती की मात्रा। त्रिफला चूर्ण + मिश्री २५ मि.लि. ग्राम से ५० मि.लि. की मात्रा में देने से बच्चों के दाँत जल्दी निकलते हैं।

क्या आपको अलारसिन सूचीपत्र

(1980) हिन्दी संस्करण मिला है ?

अलारसिन सूचीपत्र :- आपकी दैनिक चिकित्सा प्रयोजना में उपयोगी मार्गदर्शक इसमें • घटकद्रव्य • रोग लक्षण • मात्रा की सूचना के अलावा अलारसिन प्रोडक्ट्स पर राष्ट्रीय-अंतरराष्ट्रीय अनेक • रिसर्च परिणाम का निचोड़ है।



अलारसिन • वैश्वकीय • दंतल • पशु-पक्षी औषध में 1947 से आयुर्वेदिक अनुसंधान के अग्रसर (पायोनियर्स)। ऐलोपैथिक व आयुर्वेदिक चिकित्सक जगत के आदर प्राप्त रिसर्च प्रोडक्ट्स के निर्माता।

मन्थन : MANTHAN (अलारसिन रिसर्च विभाग) की अलारसिन के कई वर्ष पूर्व निम्न मुद्रा लेख पर स्थापना की गई।

आ नो भद्राः क्रतवो यन्तु विश्वतः। नानौषधिभूतं जगति किञ्चिद् द्रव्यमुपलभ्यते।

अलारसिन प्रोडक्ट्स संक्षिप्त में-

(सो. जी. एच. एम., कई एक स्टेट गवर्नमेंटों-नगरपालिकाओं, जिला परिषदों इत्यादि में खरीद के लिए मान्य है।)

आर कंपाउण्ड (R. COMPOUND) : सभी वायु रोगों में : आमवात, संघिवात; सभी शोथजन्य विट्टिनिया; मृदु अवयव, अघात, मृत्तन, नकड़ाहट, वेदना में, कटिशूल, गुत्रसी, पक्षाघात इ. दंत रोगों में सभी शोथजन्य तथा शूलयुक्त विट्टिनिया में।

बंगशिल (BANGSHIL) : सूत्रकच्छ, दाहयुक्त, फट्टयुक्त, मन्द व पुन्ह-पुन्ह मूत्र प्रवृत्ति; मूत्राशय-शोथ व नाडियों की दुर्बलता, मधुमेह चिकित्सा में।

एलोस कंपाउण्ड (ALOES COMPOUND) : मामिक धर्म विट्टिनिया : कष्ट-आर्तव, अल्प-आर्तव, नष्ट-आर्तव, अनियमित मामिक; बंध्यत्व।

लेप्ताडीन (LEPTADEN) : मातृ-स्त्व उपत्ति-उत्तेजक, मात्रा व गुणवर्धक। स्त्व के प्रोटोन, कैल्शियम, फेट तथा क्षारीय तत्वों में सुधार व स्थिरता लाती है। बार बार गर्भपात, अकाल प्रसूति, गर्भश्राव, रक्ताविट्टि से शिशुमृत्यु में।

फोर्टेज (FORTEGE) : थकावट (शारीरिक, मानसिक, संभोगीय) शिर पतन, स्तंभन-शक्ति की कमी, नपुंसकता, स्वप्न दोष, धातु क्षोणता, शुक्राणुओं की विविध विट्टिनिया।

मायरॉन : MYRON (सिल्वर कोटेड : SILVER COATED) : (होग्योल गुग्गुलु, बंग, कमीश, शिलाजित, लोप्र, धातु फूल, अहमा-यत्र, अहमाघन, रसौत, अभ्रक) श्वेत प्रदर, कटिशूल, प्रसूति बाद टोनिक : कटिशूल में, गर्भाशय को दृढ़ करने और उसे नैसर्गिक स्थिति में लाने के लिए हीराबोल और गुग्गुलु का परम्परागत उपयोग होता ही है।

जीवर (G32) : मसूढ़े, दांत, मुख में मालिश, गण्डे, कुल्लू के लिये। मसूढ़े रोग : शीताद, सौषिर, पायोरिया, सूजन, सूत, पूय, पिल-पिलापन, वेदना।

दंत रोग : दुबुधे, हिल्ले, दंत पुष्पट, पपड़ी, प्लाक, मुख व गले में सूजन, छाले।

आयापॉन (AYAPON) : हर प्रकार के रक्त श्राव में : अर्श, रक्त प्रदर, अति-आर्तव, गर्भपात व प्रसूति परचात् रक्त श्राव।

शुक्तिन (SOOKTYN) : (शुचित भस्म, कपूर काचली, पिपलीमूल इ.) अम्लपित्त, अजीर्ण, खट्टी हकार, मोने में जलन, पेट्टिक व हयुवेनल अलसर, उदरशूल, कामला, यकृत की कार्य शिथिलता, मंद अपि।

डीकोफसीन (DEKOFCSYN) : सुषर्ण वसंत मालती युक्त योग : सभी प्रकार की सूखी व सकक, नवीन, पुगनी व हठीली प्लांसी की औषध के अलावा अद्वितीय टोनिक भी। सर्दी-शुकाम, फलू में खांसी, बेचेनी, कमजोरी के लिए।

सायलेडीन (SAILEDIN) : (सर्पगंधा, वचा, भुङ्गाज, जीवन्ती, कृषी, कम्पोत्री, शृंगपुष्पी) विविध मानसिक रोगों में ट्रैक्विलाईजर, हृद्द जनो में चिडाचिडापन व निद्रादोष।

आर्जिन (ARJIN) : (सर्पगंधा, पुनर्नवा, मालकागनी, शिलाजित, हरीतकी, अर्जुन, विलव, अपासर्ग, अनंत मूल, कदुकी) रक्तचाप वृद्धि (हार्ट बी. पी.) में।

वैद्यस्त्री के लिए : एलोस कंपाउण्ड • लेप्ताडीन • मायरॉन • बंगशिल। पुरुष के लिए : फोर्टेज, बंगशिल

प्रोस्टेट : पौरुष ग्रन्थी की वृद्धि और शोथ फोर्टेज + बंगशिल

अलारसिन प्रोडक्ट्स के पैकिंग व प्राप्ति स्थान : कैम्ब्रिज के यहाँ रोगी के लिए हर औषध 50 और 100 गोलीयों के पैकिंग में। अलारसिन स्टॉकिस्ट के यहाँ : केवल चिकित्सकों के लिए 50 और 100 गोलीयों के पैकिंग कंपनी भावसे।

केवल चिकित्सकों के लिए स्पेशियल 1000 गोलीयों के पैकिंग और स्पेशियल स्कीम सीधा अलारसिन फैक्ट्री से खरीदने पर ही (इस स्कीम का लाभ उठाने के लिए देखिए चिकित्सक प्राईस-लिस्ट)।



केवल रजिस्टर्ड चिकित्सकों व अस्पतालों के लिए अलारसिन निर्मित भगवान धन्वन्तरि कलाकृति (जब तक स्टॉक में है) हमारा दृढ़ विश्वास है कि आपके औषधालय में इस कलाकृति का प्रतिष्ठापन दर्शकों को सब प्रकार से स्वस्थ जीवन की प्रेरणा देगा। और व्यवसाय को यशस्वी-वर्चस्वी बनाएगा।

क्या आपको हमारे यहाँ से साहित्य, स्पेशियल स्कीम की सूचना, उपहार, सैम्पल इ. डाक से नियमित रूप से मिलते हैं? अगर नहीं तो :-

• सूची पत्र • चिकित्सक प्राईस लिस्ट • भगवान धन्वन्तरि कलाकृति के लिए छपया रजिस्ट्रेशन नं., डिमी, पिन नं. पूरा पता के साथ पत्र व्यवहार करें।

अलारसिन मार्केटींग प्राईवेट लि. 12, के. दुभाष मार्ग, ऑरिकॉन हाऊस, फोर्ट, बम्बई 400023.

Alarasin and -v-81



बिजली की मशीन

आधुनिक विज्ञान ने यह प्रमाणित कर दिया है कि बिजली में असीन शक्ति है तथा उसका प्रत्येक क्षेत्र में उपयोग किया जा सकता है। हमने अनेक प्रयत्नों के पश्चात् चिकित्सकों के काम में आने वाली ऐसी सस्ती तथा बहु-रोगोपयोगी मशीन का निर्माण किया है जो अनेक रोगों में इतना शीघ्र लाभ करती है कि वह एक चमत्कार ही प्रतीत होता है जिससे यह अन्य रोगियों को भी, जोकि आपके चिकित्सालय में बंटे हैं, अपनी ओर आकर्षित करती है।

इसे सैलों द्वारा चलाया जाता है जो सर्वत्र मिल जाते हैं तथा इसे दुर्गम ग्रामों तथा बड़े-बड़े महलों में समान रूप से प्रयोग किया जा सकता है। इसमें खर्चा भी बहुत कम होता है लेकिन आप प्रति रोगी १-२ रुपया आसानी से प्रतिदिन ले सकते हैं। मशीन टिकाऊ है, सुन्दर है तथा बहुत दिनों तक निर्बाध कार्य करने वाली है।

इस मशीन के प्रयोग से तीव्र पार्श्वशूल, गृध्रसी, सन्निवशून, कटिशूल, उदरशूल, अफड़न, लंगड़ापन, लकवा (पक्षाघात), बांत का दर्द, तीव्र वातज शिरःशूल, किसी अङ्ग में ठण्ड लग जाने के कारण होने वाला दर्द, पुरानी चोट का दर्द, मोच आना आदि अनेक रोग तुरन्त ही दूर होते हैं। प्रत्येक चिकित्सक के पास इस मशीन का होना अत्यावश्यक है। इसके निम्न प्रकार हमारे पास उपलब्ध हैं। आप किसी भी प्रकार की बिजली की एक मशीन मंगाकर रोगियों पर प्रयोग कर यश एवं धन प्राप्त करें—

१. बिजली की मशीन तीन बड़े गोल सैलों से चलने वाली रेगुलेटर सहित ८०.००
२. " " बिजली तथा सैल किसी से भी चलने वाली रेगुलेटर सहित सर्वोत्तम १५.००

खर्चा—सैल-टेक्स प्रत्येक

जाडर देते समय २० रुपया एडवांस अवश्य भेजें।

पता—**दाऊ मैडीकल स्टोर्स,** डी-७८, औद्योगिक नगर, अलीगढ़।

पहिले परीक्षा करें

(३१ दिसम्बर १९८१ तक)

१. नवशक्ति चन्द्रोदय वटी—एक सैट में दो शीशी हैं—एक शीशी में २१ गोली तथा दूसरी शीशी में १२५ गोली हैं। १२५ गोली का बिक्री मूल्य १५ रुपये है तथा अधिकतम कमीशन कम करके ११.२५ हैं। २१ गोली बिना मूल्य हैं। जो १७ रुपये मनिआर्डर से भेज देंगे उनको हम एक सैट रजिस्टर्ड पार्सल से भेज देंगे। पहिले आप २१ गोली का पैकिंग खोलकर व्यवहार करें तथा सन्तुष्टि होने पर १२५ गोली वाला पैकिंग खोल लें और व्यवहार कर लें। यदि २१ गोली सेवन करने पर आपकी सन्तुष्टि नहीं होती है (जिसकी सम्भावना नहीं है) तो आप १२५ गोली वाली शीशी बिना सील खोले रजिस्ट्री से वापिस भेज दें तो पोस्ट, पैकिंग, बिक्रीकर तथा मनिआर्डर कमीशन काटकर शेष रकम दस रुपये ७० पैसे मनिआर्डर से आपको वापिस कर देंगे। इस योजनान्तर्गत अधिक सैट मंगाना चाहें तो उनके मूल्यादि निम्न प्रकार हैं—

	मनिआर्डर भेजने पर	बी० पी० से मंगाने पर
१ सैट (१२५ + २१ गोली)	१७.०० रुपये	१८.०० रुपये
२ सैट	३१.५० रुपये	३३.०० रुपये
४ सैट	५७.०० रुपये	५९.०० रुपये
१० सैट	१३३.०० रुपये	१३८.०० रुपये
५०० गोली (इसके साथ बिना मूल्य परीक्षणार्थ गोलियां नहीं हैं)	५०.०० रुपये	५२.०० रुपये
१००० गोली	९५.०० रुपये	९७.०० रुपये
२००० गोली	१८०.०० रुपये	१८५.०० रुपये

इन मूल्यों में पोस्ट, पैकिंग, बिक्रीकर शामिल हैं। किसी को और कोई कमीशन नहीं दिया जायेगा।

२. सिद्ध मकरध्वज नं० १—१० ग्राम मंगाने वाले को १ ग्राम बिना मूल्य भेजेंगे। मूल्यादि इस प्रकार होंगे—

	मनिआर्डर भेजने पर	बी० पी० से भेजने पर
१० ग्राम + १ ग्राम	६०.०० रुपया	६१.५० रुपया
२० ग्राम + २ ग्राम	११५.०० रुपया	१२०.०० रुपया
५० ग्राम + ५ ग्राम	२७०.०० रुपया	२७५.०० रुपया

३. सिद्ध चन्द्रोदय [स्वर्ण भस्म युक्त]—सिद्ध मकरध्वज में नीचे रही स्वर्ण भस्म को घोटकर इसका निर्माण होता है। आयुर्वेद का अनुपम रसायन है। इसके भी प्रत्येक १० ग्राम के साथ १ ग्राम बिना मूल्य।

	मनिआर्डर भेजने पर	बी० पी० से मंगाने पर
१० ग्राम + १ ग्राम	१३५.०० रुपया	१४०.०० रुपया
२० ग्राम + २ ग्राम	२६०.०० रुपया	२६५.०० रुपया
५० ग्राम + ५ ग्राम	५८०.०० रुपया	५९०.०० रुपया

इन मूल्यों में पोस्ट, पैकिंग, बिक्रीकर शामिल हैं। अन्य किसी प्रकार का कमीशन किसी को नहीं दिया जावेगा।

४. बसन्त कुसुमाकर रस—मधुमेह रोगियों के लिए आयुर्वेद की अनुपम औषधि है। वीर्य विकारों में अत्युत्तम प्रभाव दर्शाता है। इसका १० ग्राम का मूल्य १४० रुपया है। इस योजनान्तर्गत पोस्ट, पैकिंग, बिक्रीकर आदि सहित तथा अधिकतम कमीशन कम करके मूल्यादि निम्न प्रकार रहेंगे—

	मनिआर्डर भेजने पर	बी० पी० से
१० ग्राम + १ ग्राम	१२०.०० रुपये	१२५.०० रुपये
२० ग्राम + २ ग्राम	२३७.०० रुपये	२४२.०० रुपये
५० ग्राम + ५ ग्राम	५३५.०० रुपये	५४०.०० रुपये

५. स्वर्ण बसन्त मालती नं० १ — ज्वर एवं कास तथा क्षय रोगियों के लिए आयुर्वेद की सर्वोत्तम प्रसिद्ध अनुभूत औषधि है। एलोपैथी के अनेकों इन्जेक्शन लगवाकर भी जिन रोगियों को लाभ नहीं हुआ है वह भी इसके सेवन से स्वस्थ हुए हैं। इसका १० ग्राम का मूल्य १४० रुपया है। इसके लिए बसन्त कुसमाकर रस के समान ही मनिआर्डर भेजें या बी० पी० से मंगालें (क्योंकि मूल्य समान हैं)
६. वृ० वात चिन्तामणि रस, रसराम रस, योगेन्द्र रस — इन तीनों में से १० ग्राम कोई भी औषधि मंगाने पर उसके साथ १ ग्राम का उसी औषधि का पैकिंग बिना मूल्य भेजा जायेगा।
७. शरद ऋतु में सेवनीय — कामशक्ति केशरी वटी, नपुंसकत्वारि वटी — वीर्य विकारों में यह अनुभूत है। बसन्त कुसमाकर रस के साथ इन्हें सेवन कराने से अपूर्व लाभ होता है। ६०-६० गोली का मूल्य इन तीनों औषधियों का २१५) है। अधिकतम कमीशन तथा रियायत करके १५६) रु० + विक्रीकर एवं पोस्ट व्यय २०) प्रथक-कुल १७६) मनिआर्डर भेजने पर हम ६०-६० गोली के स्थान पर ६९-६६ गोली भेजेंगे तथा ७.५० रु० का बोनस कूपन भेजेंगे। जिनका २० रुपया एडवांस नहीं मिलेगा उन्हें ६० गोली ही भेजी जायेगी।

बोनस कूपन

षण्वन्तरि के जो सदस्य कमीशन काट कर १०१ रुपये से अधिक के आयुर्वेदिक कैपसूल या उपरोक्त कोई भी मूल्यवान औषधि, या शास्त्रीय औषधियां मंगायेगे उनको ५% बोनस कूपन भेजा जायेगा। इस बोनस कूपन को आप २ माह में अपने आगामी आर्डर के साथ भेज दें तो उसके बिल में बोनस की रकम को कम कर दिया जायेगा। यदि आपका दूसरा आर्डर कमीशन कम करके १०१ रुपये से ऊपर का है तो पुनः एक बार और द्वितीय बोनस कूपन जारी किया जायेगा। उसके भी २ माह में प्राप्त होने पर (आर्डर के साथ) उसकी रकम उस आर्डरके बिल में कम कर दी जायेगी। आशा है कि आप इस योजना से अवश्य-अवश्य ही लाभ उठायेगे।

एडवांस अवश्य भेजें

नोट — बोनस कूपन उन्हीं को दिया जायेगा जो उपरोक्त विवरण के अनुसार पूरा रुपया या कम से कम २० रुपये एडवांस भेजेंगे। बिना एडवांस वाले आर्डर प्रेषित करने पर बोनस कूपन जारी नहीं किया जायेगा।

नोट — उपरोक्त रियायतों की अन्तिम अवधि ३१ दिसम्बर १९८१ है।

— आदेशपत्र तथा मनिआर्डर भेजने का पता —

निर्मल आयुर्वेद संस्थान, डी-७८ औद्योगिक नगर, अलीगढ़ - १६

सुप्रसिद्ध आयुर्वेदिक कैपसूल

क्र.सं	नाम कैपसूल	गुण संक्षेप में (रोग निर्देश)	५० कैप	१००
१	रुदनो कैपसूल न० १ (स्वर्ण बसन्तमालती युक्त)	कफ, खांसी, जीर्ण ज्वर, तपेदिक आदि के लिए सुप्रसिद्ध।	२६.५०	५२.००
२	रुदनो कैप. (लघुमालतीयुक्त)	"	१४.५०	२८.००
३	ज्वरोना कैपसूल	वात, कफ एवं जीर्ण ज्वर, मलेरिया, इन्फ्लुएन्जा, खांसी, श्लेष्मिक ज्वर नाशक।	१४.५०	२८.००
४	रक्तरोगारि "	फोड़ा फुन्सी, खुजली, चकत्ता व अन्य चर्म विकारों में।	१४.५०	२८.००
५	वातरोगारि "	गठिया, हाथ पैरों की सूजन, कमर का दर्द, गुद्घसी आदि वात रोगों में अतीव लाभकारी। पहले कोष्ठ शुद्धि करें।	२६.५०	५२.००
६	ल्यूकोल "	श्वेत प्रदर, रक्त प्रदर, मासिक धर्म अक्षिप्त दिन रहना।	१६.५०	३२.००
७	नवशक्ति "	स्तम्भन शक्ति बढ़ाते हुए संभोगजन्य निर्बलता को दूर करता है। बल, वीर्य, कान्ति और शक्ति बढ़ाता है।	१६.५०	३२.००
८	स्वासारि "	नया या पुराना स्वांस-दमा, कुरुर खांसी, जुकाम आदि।	१०.००	१६.००
९	अर्शारि "	बादी तथा खूनी दोनों प्रकार के अर्श पर अत्युपयोगी।	१०.००	१६.००
१०	रजोमुखदा "	कष्ट रजता तथा रजः प्रवर्तन की परेशानी दूर करता, मासिक धर्म साफ लाता है।	१०.००	१६.००
११	गोनोरा "	पेशाब में जलन, पेशाब लगकर आना, मवाद जाना आदि	१५.००	२६.००
१२	मेधा "	मस्तिष्क की दुर्बलता दूर कर स्मरण शक्ति बढ़ाता है।	१४.५०	२८.००
१३	कैल्सीमा "	कैल्शियम की कमी, ज्वर के पश्चात् की कमजोरी, खांसी।	१०.००	१६.००
१४	रक्तचापारि "	अनिद्रा, बेचैनी, उन्माद, मस्तिष्क की उत्तेजना, रक्तचाप वृद्धि को दूर करने में अनुपम।	१२.५०	२४.००
१५	अवेदन "	शरीर में कहीं भी तथा कौन भी दर्द हो तुरन्त दूर होगा।	११.००	२१.००
१६	पाण्डु शपन "	रक्ताल्पता एवं पांडु रोग नाशक अचूक औषधि है।	१३.००	२५.००
१७	शोषारि "	बालकों को सूखा रोग के लिए अत्यर्थ औषधि है।	१५.००	२६.००
१८	हृद्रोगाश्लक "	दिल की घड़कन बढ़ना, दिल का बैठना, हृदय की दुर्बलता तथा सभी प्रकार के हृद्रोगों में तुरन्त लाभप्रद कैपसूल है।	१५.००	२६.००
१९	क्लैडारि "	नपुंसकता, शीघ्रपतन, पतलापन, स्वप्नदोष, स्तम्भनशक्ति की कमी दूर कर बल, वीर्य, कान्ति तथा ओज बढ़ाते हैं।	२१.००	४१.००
२०	अतिसारघ्न "	ग्राही, क्षोभद्वर, शामक तथा आमपाचक हैं। बाज्वातिसार, अपचन जनित अतिसार में लाभकारी है।	१२.५०	२४.००
२१	कुमिहारी "	पेट में हर प्रकार के कीड़ों पर शीघ्र प्रभावकारी कुमिजन्य व्याधियों के लिए उत्तम, उबकाई, कुमिज आमाशयशूल, नजला, जुकाम, अहचिनाशक।	१३.००	२५.००
२२	गैसारि "	भोजन के बाद गैस बनती है तो इनको अवश्य व्यवहार करें। पेट का भारीपन, उदरशूल, क्षुधामांघ में लाभकारी	१३.००	२५.००
२३	हिस्टोना "	स्त्रियों को होने वाले दौरों के लिए लाभकारी।	१४.५०	२८.००
२४	स्वप्नप्रमेहारि "	स्वप्न प्रमेह नाशक सुपरीक्षित कैपसूल।	२६.५०	५२.००
२५	मलेरियाश्लक "	पारी से आने वाले ज्वर के लिए उत्तम।	१६.००	३१.००
२६	मधुमेहारि "	मधुमेहनाशक सुपरीक्षित।	२६.५०	५२.००
२७	पूत्रदा "	गर्भावस्था में लगातार ४७ दिन लेने से निश्चय ही पुत्र प्राप्ति।	१ सेंट	२७.५०

पता - निर्मल आयुर्वेद संस्थान, डी-७८ औद्योगिक नगर, अलीगढ़

बहुमूल्य रस-रसायन

- सिद्ध मकरध्वज रस**—(मै० र०) ज्वराधिकार—यह सर्व रोगहर शक्तिप्रद अत्युपयोगी रसायन है। इसके सेवन से बल, पौष्ट्य, कान्ति की वृद्धि होती है। अनुपान भेद से तथा अन्य औषधियों के साथ मिश्रण कर प्रायः सभी रोगों में व्यवहार किया जाता है। मूल्य—१० ग्राम ६५.००
- कुमार कल्याण रस**—(मै० र०) स्वर्ण-मुक्तायुक्त—बच्चों के श्वास, पसली चलना, सूखा रोग, शारीरिक दुर्बलता, वमन, अतिसार, बाल संग्रहणी में हितकर। मूल्य—१० ग्राम २५५.००
- जयमंगल रस**—(मै० र०) स्वर्ण युक्त—जीर्णज्वर, विषम ज्वर, अस्थि मेदा-मज्जा मांसगत ज्वर तथा सभी दोषों से होने वाले ज्वरों को नष्ट करता है। मूल्य—१० ग्राम २२०.००
- वसन्त कुसमाकर रस**—(मै० र०) स्वर्ण मुक्तायुक्त—बलवर्धक, वृष्य, बाजीकरण एवं मधुमेह नाशक अनुपम रसायन। मूल्य—१० ग्राम १४०.००
- स्वर्ण वसन्त मालती**—(मै० र०) स्वर्ण मुक्तायुक्त—जीर्ण ज्वर, विषम ज्वर, खांसी, दमा, दुर्बलता नाशक सुप्रसिद्ध औषधि। मूल्य—१० ग्राम १४०.००
- योगेन्द्र रस**—(मै० र०) स्वर्ण मुक्तायुक्त—नये-पुराने जटिल वात रोगों की श्रेष्ठ औषधि। प्रमेह, बहुमूत्र, पक्षाघात, मृगी एवं राजयक्ष्मा में प्रभावी। मूल्य—१० ग्राम २४०.००
- रसरत्न रस**—(मै० र०) स्वर्ण मुक्तायुक्त—पक्षाघात, कम्पवात, कानों में सांय-सांय, सिर में चक्कर, अङ्गों में निर्बलता, वात विकार नाशक। मूल्य—१० ग्राम ११०.००
- वृ० वात चिन्तामणि रस**—(मै० र०) स्वर्ण मुक्तायुक्त—यह भयंकर जटिल वात रोगों की सुप्रसिद्ध दवा है। सन्निपात, प्रलाप, भ्रम, शीतांग आदि में उपयोगी। मूल्य—१० ग्राम २००.००
- श्वास कास चिन्तामणि रस**—(मै० र०) स्वर्ण मुक्तायुक्त—पुराने कठिन श्वास-कास में स्थायी लाभ देने वाली दवा। मूल्य—१० ग्राम १००.००
- प्रवाल पंचामृत रस**—(मै० र०) मुक्तायुक्त—श्वास कास, अम्लपित्त, उदर रोग, गुल्म, यकृत प्लीहा रोग, अजीर्ण, रक्ताल्पता नाशक। उत्तम आयुर्वेदिक कैल्शियम है। मूल्य—१० ग्राम ६०.००
- लक्ष्मी विलास रस**—(मै० र०) स्वर्ण रहित—त्रिदोष, ज्वर, सर्दी-जुकाम, कफ, न्यूमोनिया, इन्फ्लूएन्जा, श्वास-कास, सिर दर्द आदि रोगों में गुणकारी है। मूल्य—१० ग्राम ४.२५
- सूतशेखर रस**—(यो० र०) स्वर्ण रहित—अम्लपित्त का सुप्रसिद्ध दवा है। खट्टी डकार, हृदय, कण्ठ की जलन में हितकर। मूल्य—१० ग्राम ३८.००
- नव० चन्द्रोदय वटी**—त्रीण विकार के साथ होने वाली खांसी, जुकाम, सर्दी, कमर का दर्द, मन्दाग्नि, स्मरण-शक्ति का ह्रास आदि व्याधियां दूर होकर क्षुधा बढ़ती है। शरीर हृष्ट-पुष्ट व निरोग बनता है। इसके गुणों के कारण ही इसका दूसरा नाम 'पौष्ट्यदाता' भी है। कतिपय चिकित्सक इसको प्रयोग कराकर अनेक निराश रोगियों को आरोग्य लाभ प्राप्त कराते हैं। अतः इसका एक नाम 'निराश बन्धु' भी है। मूल्य—४१ गोली ५.००, १२५ गोली १५.००, ५०० गोली ५८.००, १००० गोली ११०.००।

निर्मल आयुर्वेद संस्थान, डी-७८ औद्योगिक नगर, अलीगढ़

शास्त्रीय प्रामाणिक औषधियां

कूपीपक्व रसायन

	१० ग्राम	३ ग्राम	मुक्ता शुक्ति पिष्टी	५० ग्राम	१० ग्राम	३ ग्राम
सह मकरध्वज नं० १	६५.००	२०.००	जहर मोहरा पिष्टी	४.७५	१.३०	×
" नं० २	५०.००	१५.५०		१२.५०	२.७५	१.२५
सिद्ध चन्द्रोदय (स्वर्ण भस्म युक्त)	१५५.००	४७.००		पर्यटी		
रस सिद्धुर	१८.००	५.५०	रस पर्यटी	४५.००	६.२५	३.००
मालु सिद्धुर	१८.००	५.५०	श्वेत पर्यटी	४.५०	१.३५	×
स्वर्ण वज्र	१२.००	३.८५	पंचामृत पर्यटी	४५.००	६.२५	३.००
रस माणिक्य	१०.००	३.२५	लोह पर्यटी	४५.००	६.२५	३.००

भस्म

रस रसायन गुटिका गूगल

	५० ग्राम	१० ग्राम	३ ग्राम		१० ग्राम	१ ग्राम
अभ्रक भस्म (शतपुटी)	४५.२५	६.५०	३.५०	कुमार कल्याण रस	२५५.००	२६.००
कपर्द भस्म	७.२५	१.७५	×	वसंत कुसुमाकर रस	१४०.००	१४.५०
गोदन्ती हरताल भस्म (श्वेत)	५.७५	१.३५	×	वृ० वात चिंतामणि रस	२००.००	२०.५०
ताम्र भस्म	३५.००	७.२५	×	योगेन्द्र रस	२४०.००	२४.५०
नाग भस्म	१७.५०	३.७५	१.५०	रसरज रस	११०.००	११.५०
प्रवाल भस्म नं० १	३०.५०	६.७५	२.२५	स्वर्ण वसंत मालती	१४०.००	१४.५०
" नं० २	१७.७५	३.७५	१.५०		५० ग्राम	१० ग्राम
" चन्द्रपुटी	१४.२५	३.२५	१.२५	अग्नितुण्डी (विषमुष्टिका) वटी	५.२०	१.३५
बंग भस्म श्वेत	५७.००	१२.००	३.७५	आरोग्य वधिनी वटी	८.२०	१.६५
मृग शृंग भस्म	७.२५	१.७५	×	गंधक रसायन	६.७५	२.२५
माण्डूर भस्म	४.७५	१.२५	×	घोड़ा चोली (अश्व कंचुकी) रस	८.२०	१.६५
मुक्ता भस्म	×	२२०.००	६७.००	चंद्रप्रभा वटी	१२.५०	२.७५
यशद भस्म	११.००	२.७५	×	वृ० वात गजांकुश रस	१२.५०	२.७५
तोह भस्म नं० १	६०.००	१२.५०	४.००	महामृत्युञ्जय रस	१५.००	३.२५
" नं० २	१५.५०	३.००	१.२५	लघु मालती वसंत	१५.५०	३.५०
स्वर्ण माक्षिक भस्म	१८.२५	३.५०	१.५०	लक्ष्मी विलास रस (नारदीय)	२२.००	४.५०
गह्व भस्म	५.००	१.३०	×	त्रिभुवन कीर्ति रस	११.००	२.३०
शुक्ति (मुक्ताशुक्ति) भस्म	६.००	१.६०	×	वृ० योगराज गूगल	१५.५०	३.५०
त्रिवंग	३५.००	७.२५	२.५०	योगराज गूगल	६.५०	१.६०
				कज्जली नं० १ (बराबर गंधक पारद)	३०.००	३.१०
प्रवाल पिष्टी	१४.२५	३.२५	×	गंधक आमलासार शुद्ध	३.२५	१.२५
मुक्ता पिष्टी	×	२१०.००	६३.५०	शुद्ध पारद हिगुलोथ	५०.००	५.२५

पता—निर्मल आयुर्वेद संस्थान, डी-७८ औद्योगिक नगर, अलीगढ़

निर्मल आयुर्वेद संस्थान अलीगढ़

द्वारा निमित्त पूर्ण प्रभावशाली आयुर्वेदिक कैपसूल

नवशक्ति कैपसूल

बल, वीर्य, कांति, शक्ति, पुरुषार्थ बढ़ाने वाली दिव्य-
षधियों के मिश्रण से यह कैपसूल तैयार किया गया है।
नामर्दी-नपुंसकता, वृद्धावस्थाजन्य निर्वलता तथा शीघ्र-
पतन की विशेष उत्तम दवा है। इसके सेवन से स्तम्भन
काफी होता है तथा सम्भोग के कारण हुई निर्वलता दूर
होती है। परीक्षित कैपसूल हैं। अवश्य लाभ करते हैं।

५० कैपसूल १६५०, १०० कैपसूल ३८००।

ज्वरोना कैपसूल

इसके सेवन से सभी प्रकार के ज्वर में और विषे-
तया वातज्वर, कफ एवं विषम ज्वर में लाभ होता है।
सर्दियों में होने वाले प्रतिश्याय (जुकाम) के लिए उत्तम
है। शरीर का दर्द भी कम हो जाता है। निमोनिया या
एम्प्युएन्जा में इसे चाय के साथ सेवन करें। १०० कैप-
सूल २८००, ५० कैपसूल १४५०।

रुदनो कैपसूल नं० १ (स्वर्ण बसंत मालतीयुक्त)

स्वर्ण बसंत मालती आयुर्वेद शास्त्र की प्रसिद्ध और
चमत्कारिक औषधि है। यह जीर्ण ज्वर, विषम ज्वर,
घातुगत ज्वर, हृदय रोग, घातुगत क्षीणता को दूर करती
है। इसके साथ रुदती फल घूर्ण व अन्य प्रभावकारी
औषधियों का मिश्रण कर इन कैपसूलों में भरते हैं जिससे
कि वह क्षय रोगियों के लिए बहुत अधिक लाभ करते हैं।

१०० कैपसूल ५२०० ५०, कैपसूल २६५०।

रुदनो कैपसूल नं० २ (लघु मालती युक्त)

स्वर्ण बसंत मालती युक्त रुदनो कैपसूल तथा इन
कैपसूलों में सिर्फ यह अन्तर है कि इसमें स्वर्ण बसंत
मालती के स्थान पर लघु मालती का प्रयोग किया गया
है। लघु मालती का निर्माण भी स्वर्ण बसंत मालती के
समान ही होता है वेदस इसमें स्वर्ण भरम नहीं डाली
जाती। अतएव साधारण अवस्थाओं में तथा निर्धन

रोगियों में इनको प्रयोग करें। —१०० कैपसूल

२८००, ५० कैपसूल १४५०।

ल्यूकोल कैपसूल

इसके व्यवहार से श्वेत एवं रक्त प्रदर, योनिशूल,
कमर का दर्द, मासिक धर्म विकृति, मूत्रकृच्छ्र आदि नष्ट
होते हैं। प्रदर के साथ शरीर में दर्द हो या यकृत की
विकृति हो तो यह कैपसूल शीघ्र लाभप्रद है। १००
कैपसूल ३८००, ५० कैपसूल १६५०।

रक्तरोगारि कैपसूल

इसके व्यवहार से सभी प्रकार के कुष्ठ, खाज खुजली
आदि सम्पूर्ण रक्त विकारों में लाभ होता है। १०० कैप-
सूल २८००, ५० कैपसूल १४५०।

वातरोगारि कैपसूल

वृ० वातचिन्तामणि रस, रसरज रस आदि औष-
धियों से निमित्त यह कैपसूल समस्त वायु रोगों की उत्तम
औषधि है। इसके व्यवहार से वात रोगों में अवश्य लाभ
होता है जैसे कि गठिया हाथ, पैरों की सूजन, कमर का
दर्द, गृध्रसी, पक्षाघात (Facial Paralysis), अपतंत्रक।
१०० कैपसूल ५२००, ५० कैपसूल २६५०।

गोनोरा कैपसूल

सुजाक रोगों से ग्रसित रोगी को भयंकर वेदना होती
है। लेकिन इस कैपसूल के प्रयोग से अल्प समय में ही रोगी
की समस्त वेदनायें दूर हो जाती हैं तथा पेशाब बिना तक-
लीफ के उतरने लगता है। १०० कैपसूल २६००, ५०
कैपसूल १५००।

मेधा कैपसूल

इसके सेवन से स्मरण शक्ति बढ़ती है। जो छात्र
परिश्रम करते हुए भी अपना पाठ भूल जाते हैं उनके लिए
अत्युपयोगी है। १०० कैपसूल २८००, ५० कैपसूल १४५०।

पुत्रदा कैपसूल

कहीं-कहीं स्त्रियों के साथ ऐसी समस्या है कि उन्हें

बार-बार लड़कियां ही होती हैं तथा वह चाहती हैं, कम से कम १ लड़का हो जाय तब वह परिवार नियोजन करायें। ऐसी स्त्रियों से हमारा निवेदन है कि जैसे ही गर्भावधान का पता चले, वे इन कैपसूलों का एक सेट मंगाकर प्रयोग करें। ७७ दिनों का एक सेट २७.५०।

अवेदन कैपसूल

दर्द किसी भी तरह का क्यों न हो इस कैपसूल के सेवन से वह दूर हो जाएगा। सर्दी, जुकाम, इन्फ्लूएन्जा, अधकपारी, मलेरिया ज्वर का वेचैनी, पसली का दर्द, वायु का दर्द, चोट-फोड़े का दर्द में यह तुरन्त आराम देता है। वायु के कारण होने वाले जोड़ों के दर्द, दन्तशूल भी लाभ होता है। निरापद है। हृदय को हानि नहीं पहुंचाता। १०० कैपसूल २१.००, ५० कैपसूल ११.००।

रक्तचापारि कैपसूल

रक्तचाप वृद्धि (हाई ब्लड प्रेशर) में बहुत श्रेष्ठ है। इनसे मस्तिष्क में रक्त का दबाव कम होता है और शांत निद्रा आती है। १०० कैप २४.००, ५० कैप १२.५०।

हृद्रोगान्तक कैपसूल

हृदय के सभी रोगों यथा हृच्छला, चक्कर आना, जलन होना आदि इसके प्रयोग से दूर होते हैं। दिल की धड़कन तुरन्त ठीक होकर हृदय की क्रिया नियमित होती है। १०० कैपसूल २६.००, ५० कैपसूल १५.००।

वलेव्यारि कैपसूल

नपुंसकता, शीघ्रपतन, इन्द्रियों की निबंलता, वीर्य का अभाव, स्तम्भन शक्ति की कमी के लिए अत्युत्तम हैं। नियमित व्यवहार करने से बला, वीर्य, कान्ति, बीज तथा शक्ति बढ़ती है। १०० कैप ४१.००, ५० कैप २१.००।

गैसरि कैपसूल

ये कैपसूल गैस के लिए बहुत ही उत्तम हैं। अजीर्ण, भूख का कम लागना, अफरा, पेट का भारीपन, पेट में गैस बनना बन्द होता है। उदरशूल में भी लाभदायक हैं। सुप्ती सी छाया रहना, शरीर का भारीपन, थकावट आदि ठीक होती है। उदर विकार में बहुत प्रभावशाली हैं। १०० कैपसूल २५.००, ५० कैपसूल १३.००।

मलेरियान्तक कैपसूल

यह पाली देकर आने वाले ज्वर के लिए उत्तम हैं।

२-३ दिन के प्रयोग से मलेरिया ज्वर चला जाता है। १०० कैपसूल ३१.००, ५० कैपसूल १६.००।

स्वप्नप्रमेहारि कैपसूल

वीर्य पुष्ट एवं गाढ़ होता तथा स्वप्नदोष विकार दूर होता है। १०० कैपसूल ५२.००, ५० कैप २६.५०

मधुमेहारि कैपसूल

मूत्र शर्करा को शीघ्र हटाते हैं। १०० कैपसूल ५२.००, ५० कैपसूल २६.५०।

नवशक्ति चन्द्रोदय वटी

आयुर्वेद चिकित्सा में सबसे अधिक प्रसिद्ध चन्द्रोदय है। इस अनुपम रसायन द्वारा इन गोलीयों का निर्माण किया जाता है। इसके अतिरिक्त अन्य मूल्यवान एवं प्रभावी द्रव्यों को भी इसमें डाला जाता है। यह गोल्यां भोजन को पचाकर रस रक्तादि सप्त धातुओं को क्रमशः सुधारती हुई शुद्ध वीर्य का निर्माण करतीं और शरीर में नवजीवन व नवस्फूर्ति भर देती हैं। वीर्यविकार के साथ होने वाली खांसी, जुकाम, सर्दी, कमर का दर्द, मन्दाग्नि स्मरण शक्ति का ह्रास आदि व्याधियां दूर होकर क्षुधा, बढ़ाती है तथा हाट-पुष्ट व निरोग बनता है। ४० वर्ष की आयु के बाद मनुष्य को अपने में एक प्रकार की कमी और शिथिलता का अनुभव होता है। ऐसा रोग प्रतिरोधक शक्ति में कमी आ जाने के फलस्वरूप होता है। नवशक्ति चन्द्रोदय वटी इस शक्ति को पुनः उत्तेजित करती और मनुष्य को सबल, स्वस्थ, स्फूर्तियुक्त बनाये रखती है। ४१ गोली ५), १२५ गोली १५), ५०० गोली ५०), १००० गोली ११०)।

कामशक्तिवर्धनार्थ तथा नपुंसकता नाश के लिए

कामशक्ति केशरी वटी—६० गोली ८५.००

नपुंसकत्वारि वटी—६० गोली २२.५०

बसन्त कुसुमाकर रस—एक-एक रत्ती की ६० गोली १०५.००। एक माह के लिए तीनों दवाओं का मूल्य २१५.०० होता है। कमीशन कम करके १५६.०० नोट होगा। तैलटैक्स व खर्चा अलग।

निर्मल आयुर्वेद संस्थान, डी-७८ औद्योगिक नगर, अलीगढ़

चिकित्सा में उपयोगी यन्त्र शस्त्र संग्रह

हाइड्रोस्टिक सेंट—इस सेंट द्वारा नाक, कान तथा गले को अन्दर से देखते हैं। टाचे के ऊपर कान देखने का बाला, नासिका प्रेक्षण यन्त्र तथा गला व जवान देखने की जीबी, तीनों में से कोई सा एक फिट हो जाता है। बिना सैल पुरे सेंट का मूल्य केवल ७८.००, गाउलैंड टाइप स्वर यन्त्र दर्पण रहित ११४.००।

आमाशय प्रक्षालनी नलिका—विष के खा लेने पर पुरन्त हो आमाशय प्रक्षालन को मूल्य १३.७५।

नमक का पानी चढ़ाने का यन्त्र (Saline Apparatus)—हेजा में नमक का पानी चढ़ाने को। मूल्य ७.५०।

मोतीमाला देखने का शीशा—प्लास्टिक का हैडिल छोटा शीशा ३.७५, बड़ा ४.७५, घातु का हैडिल सर्वोत्तम १.७५, बड़ा साइज ८.७५।

स्टेथिस्कोप

भारतीय सर्वोत्तम डबल चैस्ट पीस २४.५०, उत्तम सिगिल चैस्ट पीस १७.५०, साधारण १२.५०।

स्टेथिस्कोप रखने का थैला—सम्पूर्ण चमड़े का दो जेब वाला मूल्य २२.५०। जिप (जंजीर) या बटन लगा एक जेब का साधारण ११.५०।

पैन टाच—चिकित्सकों के लिए गले, नाक आदि की परीक्षा करने को सैल सहित केवल १४.००।

थर्मोमीटर (तापमापक यन्त्र)—भारतीय ४.२५।

धमनी संदर्श Artery (Forceps)—स्टेनलैस स्टील ५ इन्च ८.५०, ६ इन्च ११.००।

सूचिका संदर्श (Needle Holder)—त्वचा को सीते समय सुई को इसीसे पकड़ा जाता है। इसके बिना सीवन कर्म सम्भव नहीं। स्टेनलैस स्टील का १४.५०।

धागा सीवन कर्म को—नायलोन का पैकिट २.२५, रेशमी १ गुच्छी २.२५, सफेद या काली १ रील १०.५०।

कैटगट—मांसपेशियों के सीवन कर्म को ६.५०।

सूचिका (Needle) सीवन कर्म के लिए—६ सुई का पैकिट १०.५०।

शीशे पर लिखने की पेन्सिल—मूल्य केवल १.५०।

मसूढ़े झीरने का चाकू—स्टेनलैस स्टील का सीधा

४.५०, स्टेनलैस स्टील का फोल्डिंग ६.००।

इन्जेक्शन सिरिज—सम्पूर्ण कांच की २ मि०लि० की ५.७५, ५ मि०लि० की ७.७५, १० मि०लि० १०.५०। रेकांड सिरिज—२ मि०लि० का ११.००, ५ मि०लि० की १५.००, १० मि०लि० की १८.५०।

ल्यूरोलाक भारतीय—२ मि०लि० ७.५०, ५ मि०लि० ११.००, १० मि०लि० की १३.५०।

नाइलोन की सिरिज—२ मि०लि० ३.००, ५ मि०लि० ५.००, १० मि०लि० ६.५०।

इन्जेक्शन की सुई (नीडिल)—एक दर्जन १००, बढ़िया जापानी एक दर्जन ३३.००।

परवाल उखाड़ने की चीमटी (Cilia Forceps)—मूल्य ४.५०, स्टेनलैस स्टील ७.००।

एनिमा सिरिज (बस्ति यन्त्र)—रबड़ का भारतीय उत्तम ११.५०, प्लास्टिक का ६.००।

गला व जवान देखने की जीबी (Tongue Depressure)—स्टेनलैस स्टील सीधी ६.२५, एल टाइप स्टील ७.५०।

गरम पानी की थैली—मूल्य १४.५०।

बरफ की थैली—मूल्य ७.७५।

कान धोने की पिचकारी—घातु की एक औंस (२५ मिलि.) १७.५०, २ औंस (५० मिलि.) की २३.००, ४ औंस (१०० मिलि.) की ३०.००।

आपरेशन करन का चाकू—इसमें हैडिल प्रथक होता है तथा काटने वाला ब्लेड प्रथक होता है जो कि खराब होने पर बदला जा सकता है। ६ ब्लेड सहित ११.७५, स्टेनलैस स्टील का ६ ब्लेड सहित १३.७५।

विश्चूरी—इसका फलाक पतला तथा तिरछा होता है। इसके द्वारा भेदन किया जाता है। स्टेनलैस स्टील की सीधी ४.२५, स्टेनलैस स्टील की फोल्डिंग ८.५०।

चीमटी—स्टेनलैस स्टील ४" ३.७५, ५" ४.७५। दांतों में दवा डालने की चीमटी स्टील ८.००।

चाकू—स्टेनलैस स्टील का सीधा ४.२५, स्टेनलैस स्टील का फोल्डिंग ८.५०।

दांत उखाड़ने का जमूड़ा—मूल्य १५.५०, स्टेनलैस स्टील का २६.००।

पता—दाऊ मैडीकल स्टोर्स, डी-७८ औद्योगिक नगर, अलीगढ़

दांत उखाड़ने के जस्तुओं का सेट—इसमें ७ प्रकार के जम्ब, दांत उन्नामक यन्त्र, मसुड़े चीरने का चाकू आदि आवश्यक उपकरण एक बहुत सुन्दर कपड़े से मढ़े डिब्बे में हैं। मू० १६५.००, स्टील के उपकरण २२५.००।

कान में से दाना निकालने का यन्त्र—यह यन्त्र कान में से दाने आदि को सुगमता से खींचकर लाता है। मू० ३.७५, स्टील का ६.००।

ग्लेसरीन की पिचकारी (प्लास्टिक)—गुदा में ग्लेसरीन प्रवाहने के लिए मू० २ आँस (५० एम.एल.) ३.७५, ४ आँस (१०० एम.एल.) की ५.२५।

स्तनों से दूध निकालने का यन्त्र—मू० ४.५०।

सूत्र कराने की नली (कैथीटर)—रबड़ का १.५०, धातु के लिये धातु का ४.००, पुरुषों के लिए धातु का ५.५०।

जलोदर में उदर से पानी निकालने का यन्त्र—जलोदर रोग में उदर गद्गद से पानी निकालने हेतु स्टेनलैस स्टील का १२.००।

कैंची—सीधी स्टेनलैस स्टील की ४ इञ्ची ५.७५, ५ इञ्ची ६.७५, ६ इञ्ची ७.७५, ७ इञ्ची ८.७५।

रबड़ के बस्ताने—चीड़फाड़ करते समय चिकित्सक इन बस्तानों को हाथ में पहनते हैं। मू० १ जोड़ी ४.५०। कांटा (Scales)—निकिल पालिश किया हुआ लकड़ी के बक्स के अंदर रखा हुआ। मू० बांटों सहित ४०.००।

दन्त उन्नामक यन्त्र (Dentl Elevator)—इस यन्त्र की सहायता से दांतों को उकसाया जाता है। मू० १८.००।

नासिका प्रेक्षण यन्त्र—इससे नाक चीड़ जाती है तथा आसानी से परीक्षा कर सकते हैं। स्टील का मू० १४.००।

सुरमा लगाने की सलाई—(कांच की) १ प्रोस ३.००।

योनि प्रक्षालन यन्त्र—मूल्य १८.५०।

योनि परीक्षण यन्त्र—मूल्य २३.५०।

हुनोकेट—स्कू द्वारा कसने वाला शिरान्तर्गत इंजेक्शन लगाने के लिए अति उपयोगी प्लास्टिक का १६.५०।

पता—दाऊ मैडीकल स्टोर्स, डी-७८ औद्योगिक नगर, अलीगढ़

चिकित्सा जगत का नवीनतम आविष्कार

इलेक्ट्रॉनिक रक्तचापमापक यन्त्र



इस यन्त्र से रोगी का रक्तचाप अत्यन्त सुविधा से देखा जाता है। यहाँ तक कि रोगी स्वयं अपना रक्तचाप देख सकता है। स्टेथोस्कोप की कोई आवश्यकता नहीं पड़ती। इसमें बैटरी चार्ज में लगने वाले छः सेंज लगते हैं तथा बीप-बीप की ध्वनि होती है एवं लाल बत्ती जलती है जिससे डायल देखकर रक्तचाप देखा जाता है। इस यन्त्र द्वारा देखा गया रक्तचाप अन्य सभी यन्त्रों की अपेक्षा सर्वाधिक सही एवं विश्वस्त होता है। आप भी अपने चिकित्सालय में अवश्य ही इस यन्त्र को मंगाल

मूल्य—६ सेंज सहित इस यन्त्र का मूल्य ६८० रुपये तथा विदेशी ७८५ रुपये का है। पोस्ट व्यय-पैकिंग, वय्य एवं विक्रीकर प्रथक। कम से कम ५०) एडवांस अवश्य भेजें।

रक्तचापमापक यन्त्र—पारदयुक्त मूल्य १५५) पोस्ट पैकिंग व्यय एवं विक्रीकर प्रथक
डायल टाइप मूल्य १४५) " "

—पता—

दाऊ मैडीकल स्टोर्स, डी-७८ औद्योगिक नगर, अलीगढ़

श्री प्रिंटिंग प्रेस द्वारा निर्मल आयुर्वेद संस्थान, अलीगढ़ के लिए मुद्रित। प्रकाशक एवं सम्पादक—शास्त्रबाल गुरु।

'धन्वन्तरि' के विशेषिक

रियायती मूल्य में

१५ सितम्बर से २१ दिसम्बर १९८१ तक

पूर्व प्रकाशित विशेषिकों के नाम	एक प्रति का पूरा मूल्य	१ प्रति का रिया. मूल्य	५ प्रति या अधिक ममाने पर १ प्रति का रिया. मूल्य
बनौषधि विशेषिक—भाग ४	१५.००	१२.००	२०.००
" " भाग ६	१५.००	१२.००	१२.००
संदिग्ध बनौषधि अंक	१४.००	१०.००	५.०००
प्राणिज-सन्निज द्रव्यों का	१२.००	८.००	६.००
सफल सिद्ध प्रयोगों का	१२.००	८.००	५.००
चिकित्सा विशेषिक—भाग २	१२.००	८.००	५.००
प्राकृतिक चिकित्सा का	१६.००	११.००	७.५०
शास्त्रीय सिद्ध प्रयोगों का भाग १	१५.००	१०.००	७.००
" " भाग २	१५.००	१०.००	७.००
ऊर्ध्वतन्त्र रोगों का	१५.००	१०.००	७.००
नारी रोगों का	१५.००	१२.००	८.०००

धन्वन्तरि के नव विशेषिकों का विवरण
जुलाई १९८१ के अंक में देखें

नियम

१. यह रियायत २१ दिसम्बर तक ही रहेगी। इसके अतिरिक्त और कोई कमीशन नहीं होगा।
२. पैकिंग व्यय, रेल भाड़ा, स्टेशन पहुँचाने, पोस्ट-व्यय प्रत्यक्ष होंगे।
३. अभिन विशेषिकों के रेट के मंत्रों के अन्तर्गत प्रोन्ट में स्वकीय अधिक होता है। रेट में ममाने पर अपने पाठ का रेट स्टेशन तथा लाइन साफ-साफ लिखें तथा २० रुपये एडवांस अवश्य भेजें।
४. आई के साथ एडवांस अवश्य भेजें। बिना एडवांस के हमारे आई-नों को अंग प्रयोग नहीं हलिये गेरी है। और ममाने वाले भेजें गेरी है।

पता—निर्मल आयुर्वेद संस्थान,

डी-७३ औद्योगिक नगर, अलीगढ़।

धन्वन्तरि रजि. नं० ए३०/अली०—१६०

Registered with the Registrar of Newspapers of India under R. N. 2197/2

खाली कैपसूल

इस रोग रोगियों के कैपसूल विक्रयों रहे हैं।
मूल्य नम्र अनुपात में

	१००० कैप.	१०० कैप.
१००० मयों के लिए	४०.००	४.२५
१००० मयों के लिए	४०.००	४.२५
१००० मयों के लिए	४२.५०	४.५०
१००० मयों के लिए	६.००	७.००

यह रोग रोगियों के कैपसूल नही दिया जावेगा
अर्थात् एक एक पैक मात्र १००० कैपसूल ममाने पर पोस्ट
भेजें की।

—ममाने का पता—

पता—निर्मल आयुर्वेद संस्थान, डी-७३ औद्योगिक नगर अलीगढ़

शक-
निर्मल

धन्वतरि

आयुर्वेद का सर्वाधिक
प्रचलित मासिक



शक—

निर्मल आयुर्वेद संस्थान *

७८ औद्योगिक नगर, अलीगढ़

नवम्बर (द्वितीय) १९८१

वर्ष ५५ अंक ११

धन्वन्तरि

के

ग्राहक बनने के नियम

१. 'धन्वन्तरि' का वार्षिक मूल्य १६ रुपये है लेकिन मनीआर्डर द्वारा वसुलि भेज देने पर १८ रुपये है। बी. पी. उन्नीस रुपये की भेजी जायेगी।
२. वार्षिक मूल्य मनीआर्डर से भेजना सुविधाजनक भी है तथा एक रुपये की आपको वचत भी है।
३. 'धन्वन्तरि' का सन् १९७२ का वार्षिक शुल्क पूरा न भेजकर यदि आप केवल १० रुपये भेजेंगे तो हम दो नौ रुपये की बी. पी. के स्थान पर सात रुपये की ही बी. पी. भेजेंगे क्योंकि सात रुपये की बी. पी. भेजने पर हमें १)६० रजिस्ट्रेशन फीस कम लगानी होगी। पूरा मूल्य भेज देने पर विशेषांक रजिस्ट्री से भेजने पर इस फीस में कमी नहीं होती है। इस कारण आपसे आग्रह है कि आप मात्र १० रुपये ही एडवांस भेजें। इससे आपको दो रुपये की वचत होगी तथा बी. पी. से भेजने के कारण विशेषांक भी आपको ही मिलेगा।
४. 'धन्वन्तरि' का वर्ष जनवरी से प्रारम्भ होकर दिसम्बर तक है तथा पूरे वर्ष के लिए ग्राहक बनाये जाते हैं। ग्राहक किसी भी समय बनाये जा सकते हैं, लेकिन उन्हें जनवरी से उस सभ्यगतक प्रकाशित सभी विशेषांक, बद्ध भेजकर जनवरी से ही ग्राहक बना लिया जाता है।
५. 'धन्वन्तरि' के ग्राहकों को प्रति वर्ष एक विशाल विशेषांक तथा तीन या चार लघु विशेषांक एवं अवशिष्ट भागों के साधारण अंक दिए जाते हैं। विशाल विशेषांक तथा दो लघु विशेषांक २-२ माह के संयुक्तांक होते हैं।
६. गत वर्ष (सन् १९७१ में) जरा व्याधि चिकित्सांक, प्रतिशयाय अंक तथा मुख एवं कण्ठ रोग चिकित्सांक प्रकाशित किये गये हैं। सन् १९८२ में विशाल विशेषांक 'उत्तर चिकित्सांक' तथा तीन लघु विशेषांक प्रकाशित किये जायेंगे। इन तीन लघु विशेषांकों के विषयों की घोषणा बाद में की जायेगी।
७. इस समय सन् १९८१ के सभी विशेषांक एवं साधारण अंक उपलब्ध हैं। १७ रुपये मनीआर्डर से भेजकर पूरे वर्ष की फाइनल रजिस्ट्री से मंगालें।
८. धन्वन्तरि का वार्षिक शुल्क भेजने या पत्राचार का सही पता यह है—

व्यवस्थापक—“धन्वन्तरि”

निर्मल आयुर्वेद संस्थान

डो-७८ औद्योगिक नगर, अलीगढ़।

बिनम्र निवेदन है कि आप इसी पते पर अपना पत्र लिखें या मनीआर्डर भेजें। इसी पते से आप शास्त्रीय एवं पेटेण्ट आयुर्वेदिक औषधियाँ एवं आयुर्वेदिक कैप्सुल मंगायें।

९. विशेष निवेदन—हम 'धन्वन्तरि' को अधिकाधिक उपयोगी तथा सुन्दर बनाने का प्रयास कर रहे हैं। आपका भी कर्तव्य है कि आप धन्वन्तरि के २-३ नवीन ग्राहक बनाकर हमको अवश्य सहयोग दें। 'धन्वन्तरि' के जितने अधिक ग्राहक होंगे हम उतना ही अधिक उसे उपयोगी बना सकेंगे। आप भी अपना सहयोग अवश्य दें।
१०. सम्भवतः आप 'धन्वन्तरि' के देरी से प्रकाशित होने के कारण अप्रसन्न होंगे। निवेदन है कि अपरिहार्य कारणों से ही ऐसा हुआ है तथा हम समय से प्रकाशित करने का प्रयास कर रहे हैं तथा कटिबद्ध हैं। दिसम्बर १९८१ का अंक छप गया है तथा वह आपको एक सप्ताह पश्चात् भेजा जायेगा।

दाऊदयाल गर्ग

प्रधान सम्पादक—“धन्वन्तरि”

धन्वन्तरि' का



धन्वन्तरि

के

कृपया अधिक से अधिक

नवीन ग्राहक बनावें

ज्वर चिकित्सांक

इसके विशेष सम्पादक हैं—आयुर्वेद जगत के प्रसिद्ध प्रकाण्ड विद्वान, अनेकों आयुर्वेदिक पुस्तकों के लेखक, 'धन्वन्तरि' के कई लघु विशेषांकों के विशेष सम्पादक आचार्य श्री बंदा अम्बालाल जी जोशी आयु. कैसरी, आयु., मकराना मोहल्ला, जोधपुर (राज.) । आपसे 'धन्वन्तरि' के सभी पाठक भली प्रकार परिचित हैं । आप अत्यन्त योग्य आयुर्वेद चिकित्सक, सफल लेखक हैं तथा इस विशेषांक के लेखन आवि में दिन-रात महीनों लगे रहे हैं ।

इस विशेषांक 'ज्वर चिकित्सांक' में सभी प्रकार के ज्वरों का सांगोपांग वर्णन एवं उनकी चिकित्सा दी जायेगी । विस्तृत विषय सूची इस वर्ष के प्रतिष्ठाय अङ्क में प्रकाशित की थी ।

'ज्वर चिकित्सांक' आयुर्वेद के विद्यार्थियों, आयुर्वेद चिकित्सकों, आयुर्वेद प्रेमियों तथा साधारण चिकित्सकों एवं गृहस्थों को प्रतिदिन के उपयोग की वस्तु होगा । विषय को समझाने हेतु अनेकों चित्र भी इसमें होंगे ।

इस विषय पर स्वतंत्र रूप से आयुर्वेद या ऐलोपैथी में कोई भी पुस्तक उपलब्ध नहीं है तथा न किसी आयुर्वेद पत्रिका का कोई विशेषांक ही निकला है, इस कारण पाठकों को जो भी सामग्री प्राप्त होगी वह सर्वथा नई जानकारीयों को देने वाली होगी । यह एक ऐसा साहित्य होगा जिस पर 'धन्वन्तरि' के पाठक गर्व कर सकेंगे ।

इसके अतिरिक्त सन् १९८२ में तीन लघु विशेषांक भी प्रकाशित किये जायेंगे जिनके विषयों की घोषणा बाद में की जायेगी ।

हमारा विनम्र निवेदन है कि मात्र १६ रुपये के इस अल्पतम वार्षिक मूल्य में (जिसमें कि पाँच रुपये का पोस्ट व्यय भी शामिल है) इस भीषण मंहगाई के समय 'धन्वन्तरि' जो साहित्य दे रहा है उस पर विचार करें तथा 'धन्वन्तरि' के २-४ नवीन ग्राहक अवश्य-अवश्य बनाकर हमारी सहायता एवं हमें सहयोग प्रदान करें ।

'धन्वन्तरि' लेट नह होगा—अलीगढ़ में साम्प्रदायिक दंगों के कारण, जोकि पिछले तीन वर्ष से होते रहे हैं तथा अन्य अपरिहार्य कारणों से भी 'धन्वन्तरि' लेट होता रहा है । अब 'धन्वन्तरि' के प्रकाशन की दो प्रेसों में व्यवस्था है । आशा है कि सन् ८२ में 'धन्वन्तरि' ठीक समय पर प्रकाशित होगा । हमने स्वयं भी एक मशीन खरीद ली है । प्रयास है कि वह शीघ्र ही चालू हो जाये ।

पता—निर्मल आयुर्वेद संस्थान, डी—७८ औद्योगिक नगर, अलीगढ़

नवशक्ति चन्द्रोदय बट्टी

उत्तमता का प्रमाण

“पहिले परीक्षा करें”

योजनान्तर्गत गतवर्ष एवं इस वर्ष अनेकों सज्जनों ने नवशक्ति चन्द्रोदय बट्टी मंगाई थीं। किसी एक भी व्यक्ति ने नभूना व्यवहार करके शीशी वापिस नहीं कीं। अस्तु यह निर्विवाद सिद्ध होता है कि नवशक्ति चन्द्रोदय बट्टी अनुपम गुणों से युक्त है। आप भी एक बार परीक्षा अवश्य करें।

आप भी इस योजना से लाभ उठावें। शीघ्र ही १७.०० मनिआर्डर भेज दें। हम १२५ गोली की एक शीशी (जिसका का मूल्य १५.०० होता है) का सील बन्द पैकिट तथा २१ गोली का एक पैकिट रजिस्ट्री से भेज देंगे। पहिले आप २१ शीशी वाला पैकिट खोलकर व्यवहार करें। सन्तोष पर १२५ गोली की शीशी का सील बन्द पैकिट खोलकर व्यवहार करें। यदि सन्तोष न हो (जिसकी सम्भावना नहीं है) तो १२५ गोली वाली शीशी का सील बन्द हालत में ही उसी पासल में पैक करके रजिस्ट्री से वापस भेज दें। हम पोस्ट पैकिंग व्यय ६) कम करके ११.०० मनिआर्डर से आपको भेज देंगे।

नोट—☀ २ सेंट के लिए ३१.५०, ४ सेंट के लिए ५७.०० का मनिआर्डर भेजें। ५०० गोली के एक पैक के लिए ५०), १००० गोली के लिए ६५), २००० गोली के लिए १८०) का मनिआर्डर भेजें। पोस्ट खर्च + सेलटेक्स + पैकिंग आदि सभी इसमें शामिल हैं।

☀ वी. पी. से मंगाने पर पोस्ट व्यय अधिक लगता है अतः १ सेंट १८.०० का, २ सेंट ३३.०० के, ४ सेंट ५६.०० के, ५०० गोली ५२) की, १००० गोली ६७.०० तथा २००० गोली १६५) की वी. पी. भेजी जायेगी।

☀ अगर आप मनिआर्डर भेज रहे हैं तो प्रथक से पत्र न लिखें, पूरा विवरण उसके कूपन में ही लिख दें। इससे दो बार भेजने की भूल नहीं होगी। जहाँ तक हो सके मनिआर्डर भेजकर ही मगायें।

शीघ्रता करें, यह रियायत २८ फरवरी १९८२ तक ही है।

पता--निर्मल आयुर्वेद संस्थान,

डॉ०-७८ औद्योगिक नगर, अलीगढ़



क्या ! किसका !! कहा !!

—: सम्पादक एवं प्रकाशक :—

दाऊदयाल गर्ग

निर्मल आयुर्वेद संस्थान, अलीगढ़

११ वर्ष ५५

वार्षिक मूल्य (१९८१) १७.००

” (१९८२) १६.००

इस अङ्क का मूल्य—२.००

मोरा प्रिंटिंग प्रेस, मामू भांजा

रोड, अलीगढ़ द्वारा निर्मल आयुर्वेद
संस्थान अलीगढ़ के लिये मुद्रित ।

भाग ५५

नवम्बर १९८१ द्वितीय

अङ्क ११ (द्वितीय)

आयुर्वेद में पुनर्जन्म	डा० मधुसूदन प्रसाद मिश्र बी.ए.एम.एस. ५
सन्तति निरोध : प्राच्य दृष्टिकोण	डा० राजेश्वरप्रकाश भटनगर आयु. बृह. ७
थोपापस्मार (हिस्टीरिया)	श्री सप्तोष कुमार सोनी आयु० रत्न ६
प्रमेह	राजवैद्य श्री लक्ष्मणदत्त कौशिक १५
गर्भावस्था के रोग एवं चिकित्सा	डा० जमुनादेवी शर्मा आयुर्वेदाचार्य २३
शिवत्र (स्वेत कुष्ठ)	डा० अशोक कुमार वैद्य एम. ए. ३३
परीक्षित प्रयोग	श्री वैद्य ब्रह्मदत्त जी शास्त्री आयु० ३७
	श्री वैद्य चन्द्रशेखर व्यास आयु० ३६
स्वास्थ्य प्रश्नोत्तरी	कवि० वेद प्रकाश गुप्ता बी.आई.एम.एस. ४१
साहित्यालोचन	डा० दाऊदयाल गर्ग ए., एम. बी. एस. ४२
ट्रैडिशनल नाम समाप्त ! लेकिन नया खतरा.....?	

श्री गणेश प्रसाद ४३

‘धन्वन्तरि’ के वार्षिक शुल्क में दो रुपये की वृद्धि

‘धन्वन्तरि’ के प्रकाशन में प्रयुक्त होने वाले कागज के मूल्य में ६ रुपये प्रति रिम की वृद्धि, प्रेस की स्याही, कम्पोजिंग व्यय, छपाई व्यय आदि में निरन्तर होती हुई वृद्धि के परिणामस्वरूप हमें अत्यन्त विवशतापूर्वक “धन्वन्तरि” के वार्षिक मूल्य में मात्र दो रुपये की वृद्धि करनी पड़ रही है। आशा है कि हमारे कृपालु, सहृदय ग्राहक आजकल की संहगाई को देखते हुए इसे स्वीकार करेंगे तथा हमेशा की तरह सहयोग बनाये रखेंगे। इस प्रकार ‘धन्वन्तरि’ का सन् १९८२ से वार्षिक शुल्क बी० पी० से १६ रुपये तथा मनिआर्डर द्वारा अग्रिम भेजने पर १८ रुपये होगा। अनेकों ग्राहकों ने पूर्ववत् १६ रुपये या १७ रुपये सन् १९८२ के लिये भेज दिये हैं उनको हम ३ रुपये या २ रुपये की बी० पी० से इस वर्ष का विशाल विशेषांक “ज्वर-चिकित्सांक” मई माह में भेजेंगे।

एडवांस केवल मात्र १० रुपये भेजें

‘धन्वन्तरि’ का सन् १९८२ का वार्षिक शुल्क पूरा न भेजकर यदि आप केवल १० रुपये भेजेंगे तो हम नौ रुपये शेष की बी. पी. के स्थान पर सात रुपये की ही बी. पी. भेजेंगे। क्योंकि सात रुपये की बी. पी. भेजने पर हमें १)६० रजिस्ट्रेशन फीस कम लगानी होगी। पूरा मूल्य भेज देने पर विशेषांक रजिस्ट्री से भेजने पर इस फीस में कमी नहीं होती है। इस कारण आपसे आग्रह है कि आप मात्र १० रुपये ही एडवांस भेजें। इससे आपको दो रुपये की वचत होगी तथा बी. पी. से भेजने के कारण विशेषांक भी आपको ही मिलेगा।

कृपया ‘धन्वन्तरि’ के नीवन ग्राहक अधिक से अधिक बनायें तथा उनसे भी वार्षिक शुल्क पूरा न भिजवाकर दस रुपये ही भिजवायें। अपना मनिआर्डर या पत्र इस पते पर भेजें। आयुर्वेदिक औषधियों के आदेशपत्र भी इसी पते पर दीजियेगा।

निर्मल आयुर्वेद संस्थान, डी-७८ औद्योगिक नगर, अलीगढ़

प्राणाचार्य भवन आयुर्वेदिक संस्थान, विजयगढ़

द्वारा नव वर्ष एवं गणतन्त्र दिवस के अवसर पर विशाल

उपहारी योजना

(१५ जनवरी ८२ से २८ फरवरी ८२ तक)

उपहार निम्न औषधियों पर दिया जायगा—

१— कासान्तक	१०० मिलि.	३.७५,	५० मिलि.	२.००
२— बाल कल्याण घुटी	१०० मिलि.	४.५०,	५० मिलि.	२.५०
३— उबेर निग्रह	७० मिलि.	२.५०		
४— उदरामृत सुधा	२०० मिलि.	६.७५,	१०० मिलि.	३.७५
५— कामिनी सुधा	२०० मिलि.	५.००,	१०० मिलि.	३.००
६— चन्द्रोदय गुटिका (मकरध्वज घटी)	४२ गोली	५.००		
७— च्यवनप्राश स्पेशल (केशर युक्त)	५०० ग्राम	३०.००,	२५० ग्राम	१६.५०
८— च्यवनप्राश (स्वानुमृत)	५०० ग्राम	२०.००,	२५० ग्राम	१२.००

औषधियों पर निम्न प्रकार उपहार दिये जायेंगे जो कि सर्वोत्तम क्वालिटी की स्टील के होंगे ।

५०.०० नैट के आर्डर पर	१ चम्मच स्टील
१००.०० " "	१ कटोरी बड़े साइज की
१५०.०० " "	१ कटोरा स्टील
२००.०० " "	१ गिलास + १ चम्मच
३००.०० " "	१ गिलास + १ कटोरा
४००.०० " "	१ फुल प्लेट + १ कटोरी + १ चम्मच
५००.०० " "	१ फुल प्लेट + १ गिलास + २ कटोरी + १ चम्मच
६००.०० " "	१ थाल स्टील का बड़ा + १ कटोरी
७००.०० " "	१ थाल स्टील का बड़ा + १ गिलास + १ कटोरी + १ चम्मच
८००.०० " "	१ थाल + १ गिलास + २ कटोरी + २ चम्मच
९००.०० " "	१ थाल + १ गिलास + २ कटोरी + १ क्वाटर प्लेट + ३ चम्मच
१०००.०० " "	१ टिफिन कैरियर + ३ गिलास

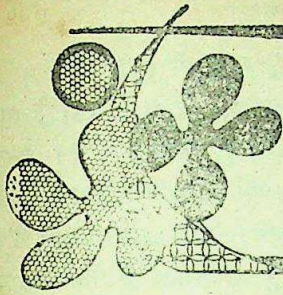
५००) ६० से ऊपर के माल पर १२ नग पर १ फ्री दिया जायगा । १०००) से ऊपर के आर्डर पर विशेष उपहार दिये जायेंगे जोकि सर्वाधिक आकर्षक होंगे ।

उपहार एवं कमीशन के नियम

- १—उपहार नियमानुसार कमीशन ५०) तक १५%, १००) तक २०%, १००) से ऊपर २५% कमीशन काटकर नैट मूल्य पर दिया जायगा ।
 २—२५०) से कम का माल F.O.R. नहीं दिया जायगा ।
 ३—उपहार माल के साथ ही भेजा जायगा ।
 ४—१०% घन अग्रिम आना अनिवार्य है ।
 नोट—अन्य औषधियों के सूचीपत्र के लिए लिखें ।

(पूर्णतः शास्त्रोक्त व पेटेन्ट औषधि निर्माता)

प्राणाचार्य भवन आयुर्वेदिक संस्थान, विजयगढ़ (अलीगढ़)



आयुर्वेद में पुनर्जन्म

डा० मधुसूदन प्रसाद मिश्र बी.ए.एम.एस., ग्रा./पो. डुमरिया बुजुर्ग, बस्ती

इस लोक तथा परलोक में हित की इच्छा रखने वाला मन, बुद्धि, पौरुष तथा पराक्रम से सम्पन्न पुरुष को तब इच्छाओं अथवा एषणाओं की चाह होती है। यथा—
१-प्राणैषणा २-धनैषणा और ३-परलोकैषणा। इन इच्छाओं में से प्राणैषणा सबसे मुख्य है, जैसाकि च० सू० ११/४ में वर्णित है कि—‘प्राण परित्यागे हि सर्वत्यागः’ अर्थात् प्राणनाश से सर्वनाश होता है। प्राणों की चाह के पश्चात् धन की चाह होती है। क्योंकि पुरुष जीवनेच्छा के बाद धन की इच्छा करता है। उस पुरुष से बढ़कर दूसरा पापी नहीं जिसकी आयु दीर्घ हो पर उपकरण (साधन) धन न हो। अतः उपकरणों की प्राप्ति के लिए प्रयत्न करना चाहिए। उपकरण—धन प्राप्ति के उपाय में हैं—कृषि, पशुपालन व्यापार एवं सरकारी नौकरी आदि। इसके अतिरिक्त अन्य भी कर्म जो सत्पुरुषों द्वारा निश्चित न हों और धन सम्पत्ति को बढ़ाने वाले हों उन कर्मों को करें। इस प्रकार मनुष्य श्रेष्ठ कर्मों के करने से तथा धनाढ्य हो जाने से सफल दीर्घ जीवन और प्रतिष्ठा को प्राप्त करता है।

धनैषणा के बाद परलोकैषणा का क्रम है। परन्तु परलोक के विषय में सन्देह है कि—मृत्यु के बाद पुनर्जन्म कैसे सम्भव हो सकता है? परलोक अथवा पुनर्जन्म के विषय में सन्देह इसलिए भी हो सकता है कि बहुत से लोग प्रत्यक्ष को ही प्रमाण मानते हैं, पुनर्जन्म परोक्ष है अतएव वे पुनर्जन्म की सत्ता को नहीं मानते और दूसरे कुछ ऐसे भी हैं जो कि—आगमशास्त्र के बचनों पर विश्वास करके पुनर्जन्म पर विश्वास करते हैं, परन्तु श्रुतियां भी परस्पर विरुद्ध मिलती हैं, जैसे—कोई तो माता पिता को ही जन्म का कारण मानते हैं, कोई स्वभाव को, कोई पर निर्माण को और कोई यहच्छा (ऐसे ही अचानक) को—

मातरं पितरं चैके मन्यन्ते जन्म कारणम् ।

स्वभावं पर निर्माणं यहच्छां चापरेजनाः ॥

—च. सू. ११/४

अतः संशय पैदा होता है—क्या पुनर्जन्म होता भी है या नहीं?

बुद्धिमान पुरुष को चाहिए कि वह नास्तिक बुद्धि (अर्थात् परलोक नहीं है ऐसी बुद्धि) को छोड़ दे और इसमें किसी प्रकार का सन्देह न करे क्योंकि प्रत्यक्ष थोड़ा है और अप्रत्यक्ष (परोक्ष) अधिक है, जिसे हम आगम, अनुमान तथा युक्ति आदि प्रमाणों द्वारा जानते हैं। यदि केवल प्रत्यक्ष ही प्रमाण हो तो जिन इन्द्रियों द्वारा हम प्रत्यक्ष करते हैं, वे स्वयं ही अप्रत्यक्ष हैं। इस प्रकार इन्द्रियों का अस्तित्व ही नहीं रहता, पुनः प्रत्यक्ष किस तरह हो। प्रत्यक्षवादी के मत में एक यह दूषण उत्पन्न होता है, जिससे प्रत्यक्ष की प्रमाणता भी नहीं रहती। इस प्रकार इन्द्रिय ज्ञान के लिए हमें अनुमान का ही सहारा लेना पड़ता है जैसे—‘चक्षुर्बुद्ध्यादिकाः करण कार्याः क्रियात्वाच्छिदि क्रियावत्’ अर्थात् चक्षुर्बुद्धि आदि पांच इन्द्रिय बुद्धियां किसी साधन द्वारा उत्पन्न होती हैं—क्रिया होने से छेदन क्रिया के सदृश, अर्थात् छेदन क्रिया जिस प्रकार आरे आदि द्वारा सम्पन्न होती है उसी प्रकार चक्षुर्बुद्धि (ज्ञान) आदि भी किसी द्वारा उत्पन्न होनी चाहिए। जिनके द्वारा ये उत्पन्न होती हैं वे ही इन्द्रियां हैं।

जैसे अति निकट होने से आंख में लगा हुआ अञ्जन दिखाई नहीं देता। आकाश में उड़ता हुआ पक्षी अत्यधिक दूर होने से दिखायी नहीं देता। मन के अन्यत्र लगे होने से पास में ही बजती हुई घोल की आवाज सुनायी नहीं देती। अतः प्रत्यक्ष ही प्रमाण है अन्य नहीं ऐसा कहना युक्तिसंगत नहीं है।

आत्मान्तर निरपेक्ष (हमारे आत्मा को मानने के बिना ही) माता पिता को कारण मानना आदि श्रुतियां प्रमाणिक नहीं क्योंकि ये तर्क लुपी तुला पर उलने से निराधार प्रमाणित होती है।

आत्मा सातुः पितुर्वा यः सोऽपत्यं यदि सञ्चरेत् ।

द्विविधं सञ्चरेदात्मा सर्वो वाऽवयवेन वा ॥

सर्वश्रोतसञ्चरेन्मातुः पितुर्वा सरणं भवेत् ।

निरन्तरं नावयवः कश्चित्सूक्ष्मस्य चात्मना ॥

—च. सू. ११/३१०

जैसे यदि माता और पिता का ही आत्मा अपत्य अर्थात् सन्तान हो जाती हो अर्थात् यदि उत्पत्ति में माता पिता की आत्मा के अतिरिक्त दूसरी आत्मा होती ही न हो तो हम यह पूछते हैं कि आत्मा किस प्रकार सञ्चार करता है—क्या उसका कोई अवयव सन्तान में जाता है अथवा सारा ही जा है ? यदि सारा ही जाय तो माता और पिता की तत्काल मृत्यु हो जानी चाहिए। यदि अवयवः जाता हो तो इसमें विप्रतिपत्ति होती है कि सूक्ष्म आत्मा का अवयव (टुकड़ा) हो ही नहीं सकता, जैसे—आकाश, काल, मन, बुद्धि आदि सूक्ष्म पदार्थों के टुकड़े नहीं हो सकते। यदि कहा जाय कि माता या पिता की बुद्धि या मन अपत्य में सञ्चरित होकर चेतना को पैदा करता है तो भी उपर्युक्त दोष आते हैं। अर्थात् मन और बुद्धि ये सूक्ष्म हैं। अतः निरवयव होने से इनके अवयव का सञ्चार नहीं हो सकता, और यदि सम्पूर्ण का सञ्चार हो तो माता पिता तत्काल ही बुद्धि तथा मनरहित हो जाय पर ऐसा नहीं होता।

जो केवल माता पिता को ही जन्म कारण मानते हैं, उनके पक्ष में चार प्रकार की योनियां ही नहीं होनी चाहिए। चतुर्विध योनि—जरायुज, अण्डज, स्वेदज, उद्भिज हैं। यदि माता पिता ही कारण हों तो माता पिता के बिना ही उत्पन्न होने वाले स्वेदज तथा उद्भिज कृमियों में चेतनता ही नहीं होनी चाहिए। परन्तु माता पिता के बिना भी उनमें चेतनता होती है, अतएव चतुर्विध योनि माननी पड़ती है। अतः माता पिता को ही जन्म का कारण मानना युक्ति संगत नहीं है।

स्वभाववादी को जत्तर—छहों धातुओं का अर्थात् पञ्चमहाभूत और आत्मा का स्वलक्षण ही स्वाभाविक जानना चाहिए। पृथिवी के कठिनता आदि, जल के द्रवता

आदि तेज के उष्णता आदि, वायु का तिर्यग्गमन आदि, आकाश का अप्रतिघात (अवकाश) तथा आत्मा के ज्ञान आदि जो आत्मीय लक्षण हैं वे ही स्वाभाविक हैं। परन्तु इनके संयोग और वियोग में कर्म ही कारण है अर्थात् यदि आत्मा को न माना जाय और केवल मात्र भूतों से ही चेतन शरीर पैदा हो जाय यह असम्भव है क्योंकि भूत जड़ हैं। यदि इन महाभूतों के संयोग से भी चेतनता मान ली जाय तो बाल्य आदि अवस्था भेद से बहुत चेतन माने पड़ेंगे। अर्थात् प्रतिक्षण शरीर में महाभूतों का संयोग हो रहा है। संयोग होने से ही चेतना की उत्पत्ति हो जाएगी। पुनः पूर्व चेतन के समय किए हुए का द्वितीय चेतन के समय स्मरण नहीं होना चाहिए, परन्तु स्मरण होता है। अतः एक चेतन वह भी नित्य मानना पड़ता है, यही आत्मा है। इसी के कारण शरीर में चेतना होती है। परन्तु गर्भोत्पत्ति काल में भूतों का आत्मा के साथ सम्बन्ध होने में कर्म (अदृष्ट-पूर्वजन्मकृत कर्म-धर्माधर्म) ही कारण है। अर्थात् उच्चनीच कुल आदि विषमता दीखने से उसके पूर्व जन्म कृत कर्म को ही कारण मानना पड़ता है, इसी प्रकार इनके वियोग में भी कर्म कारण है। जब पूर्वजन्म कृत कर्म को कारण माना तो स्वतः पूर्व जन्म को मानना पड़ेगा।

अनादेश्चेतना धातोर्नश्यते परनिर्भ्रतिः॥

पर आत्मा सचेद्धेतु रिष्टोऽस्तु परनिर्भ्रतिः ॥

—च. सू. ११/११

पर निर्माण को भी हम जन्म का कारण नहीं मान सकते। परनिर्माण से अभिप्रायः ईश्वर द्वारा निर्माण से है। अर्थात् जैसे ईश्वर मन तथा शरीर को बनाता है वैसे ही संकल्प द्वारा आत्मा को बनाकर चेतनदेव नर आदमियों को बनाता है। इस प्रकार आत्मा की नित्यता नहीं रहती। परन्तु बिना उपादान के किसी वस्तु का बनाना सम्भव नहीं। यदि ईश्वर ने ही आत्मा को बनाया हो तो किन उपादानों से बनाया ? पञ्चमहाभूतों द्वारा आत्मा का बनाया जाना किसी तरह से भी सिद्ध नहीं किया जा सकता क्योंकि ये (पञ्चमहाभूत) जड़ हैं और आत्मा चेतन है। जड़ वस्तु द्वारा चेतन का उत्पन्न होना असम्भव है। क्योंकि—‘कारण गुणपूर्वकः कार्यं गुणो दृष्टः’ यह ही नियम है। परन्तु आत्मा अनादि एवं चेतन है, अतएव इसका परनिर्माण नहीं हो सकता। यदि ‘पर’ शब्द से आत्मा का

(विषांश पृष्ठ १० पर देखें)

सन्तति निरोध : प्राच्य दृष्टिकोण

डा० राजेन्द्रप्रकाश भटनागर, प्राध्यापक-राज० आयुर्वेद महाविद्यालय, उदयपुर (राज०)

वर्तमान देशकाल परिस्थितियाँ भिन्न होने से सन्तति नियमन अथवा सन्तति निरोध की समस्या प्रादुर्भूत हुई है। वस्तुतः भारतीय इतिहास के मध्ययुग में भी इस समस्या का जोर रहा, किन्तु उसकी पृष्ठभूमि में उद्देश्य बाज जैसे न थे अपितु उसका लक्ष्य सामाजिक कतिपय कुरीतियों को प्रकट न होने देना अथवा उन्हें विकसित न होने देना—रहा था। सामान्यतया उस समय संतति निरोध—पुरुष सापेक्ष और स्त्री सापेक्ष दोनों ही प्रकार का था।

१. पुरुष सापेक्ष सन्तति निरोध का उद्देश्य था—अन्तःपुरो में सेवा कार्य हेतु षण्ढ पुरुषों का निर्माण करना। ये पुरुष कंचुकी कहलाते थे। बाल्यावस्था में अण्डग्रन्थियों का बंधन अथवा निष्कासन करके पुरुष को पौरुषरहित बना दिया जाता था जिससे वे राजाओं और रईसों के अन्तःपुरो में रहते हुए भी कामोद्दीप्ति से रहित रहते थे। घोड़ों और बैलों के षण्ढाकरण की प्रथा बहुत प्राचीन है जिसे 'कुट्टन' कहते थे।

२. स्त्रीसापेक्ष सन्तति निरोध—प्रायः वेश्याओं में सन्तानोत्पत्ति बिना अबाध मंथन प्रवृत्ति हेतु एवं विवाहित अथवा विधवा अथवा कुमारी व्यभिचारिणी स्त्रियों में सन्तानोत्पत्ति न होने के उद्देश्य से प्रवृत्त था।

इस प्रकार सन्ततिनिरोध के प्राचीन उद्देश्य व्यक्तिगत एवं सीमित थे किन्तु आज देश की वृद्धिगत जनसंख्या के कारण होने वाली अन्न एवं व्यवसाय, धन की समस्या के कारण उत्पन्न सन्तति निरोध की समस्या एक राष्ट्रीय और व्यापक समस्या है।

उपाय—सन्तति निरोध के वर्तमान उपायों पर पर्याप्त विचार विमर्श किया जाता रहा है। किन्तु सभी ने निरपायी और निश्चित फलप्रद उपायों के अन्वेषण की प्रवृत्ति में अपनी सम्मति प्रकट की है। यद्यपि यह निश्चित है कि इस प्रकार के उपाय—बाह्य अथवा अन्तःप्रयोगी—कहाँ तक सफल हो सकेंगे। इसका पुनरभिनिर्धारण प्राच्यान्वेषणा-पुस्तकानों के आधार पर हो सकेगा अतएव उसका विवेचन सर्वथा अपेक्षित है।

आधुनिक युग में सन्ततिनिरोध के लिए मुख्य रूप से तीन प्रकार की विधियाँ काम में ली जाती हैं—
१ शस्त्रकर्म २ औषधि प्रयोग ३ बाह्य निरोध उपकरण। शस्त्रकर्म भी अनेक प्रकार का है। पुरुषों और स्त्रियों में भिन्न-भिन्न प्रकार से किया जाता है। औषधि प्रयोग बाह्य और आन्तरिक प्रकार से दो प्रकार के हैं। बाह्य प्रयोग से कुछ नवीन गर्भनिरोधक उपकरणों का प्रयोग किया जाता है जो गर्भाशय मुख, योनिमार्ग अथवा शिश्न पर प्रयुक्त करने से शुक्राणु और डिम्बाणु का संयोग होने में बाधक हैं। प्राचीनकाल में शस्त्रकर्म और बाह्य गर्भनिरोधक उपकरणों का प्रचलन रहा हो ऐसा संदर्भ भोल्लेख प्राप्त नहीं होता। अतएव इसे सर्वथा आधुनिक ही समझना चाहिये। प्राचीनोक्त सन्तति निरोध कर उपायों की तालिका नीचे दी जा रही है—

प्राचीनकाल में सन्तति निरोध के उपाय—

(अ) गर्भपूर्व कालिक (गर्भाधान निरोधक)

१—बाह्य प्रयोग

(i) लेप

(ii) गिबु

(iii) अश्र्यंग

(iv) धूपन

२—अन्तः प्रयोग

(i) निश्चित काल प्रभावी

सामान्य प्रयोग

कल्प प्रयोग

(ii) अनिश्चित काल प्रभावी

सामान्य प्रयोग

कल्प प्रयोग

(ब) गर्भधारण पश्चात् कालिक (गर्भनाशक)

१—गर्भच्छावन (गर्भपाती)—बाह्य एवं अन्तः प्रयोग

२—अपरापातन (गर्भसावी) बाह्य एवं अन्तः प्रयोग

इसके अतिरिक्त कुछ अन्य प्रकार के उपायों का इस प्रसंग में उल्लेख किया जा सकता है। आचार्य चरक के

शब्दों में इसका वर्गीकरण इस प्रकार है—

१. गर्भोपघातकराः भावाः—ये भाव (प्रयोग) गर्भ धारण के पश्चात् उसे नष्ट करते हैं।¹

२. मातादि भावों² का असंपत्—व्यापत्तिकरण इससे गर्भ की उत्पत्ति ही नहीं होती।

अन्य निम्न उपाय—

१. आत्म संयम—ऋतुस्राव के पश्चात् षोडश रात्रियों तक स्त्री गमन न करना।

२. आसन परिवर्तन—अथवा विपरीत आसन का संभोग प्रयोग वस्तुतः गर्भ अनास्थापक और गर्भनाशक प्रयोगों का उल्लेख आयुर्वेदीय चिकित्सा ग्रन्थों में ११ वीं शती के बाद में मिलता है। ११ वीं शती के चक्रपाणि-कृत चक्रवर्त्त में इसका वर्णन नहीं मिलता। किंतु १२ वीं शती के शोडलकृत गदनिग्रह में 'गर्भाधान निरोधक' तीक्ष्ण प्रयोग उल्लेखित हैं। वस्तुतः इन प्रयोगों का वर्णन काम शास्त्र और उससे सम्बन्धित ग्रन्थों में बहुत प्राचीनकाल से मिलता है। मध्ययुग में इसका प्रयोग प्रचार-प्रसार समाज में विशेष रहा अतः उस समय बने हुए आयुर्वेदीय ग्रन्थों में इसका क्रमशः अपनाया जाना स्वाभाविक है। योग रत्नाकर, वैद्यबल्लभ, स्त्रीचिकित्सा, बन्ध्याजीवन, हर्मेसलला आदि ग्रन्थों में गर्भनिवारक, गर्भपातक, फल पुष्प निवारक, बन्ध्याकारक, गर्भधारण निरोधक प्रयोग मिलते हैं। इनका स्रोत वे ही कामशास्त्र विषयक ग्रन्थ रहे हों, इसमें कोई संदेह नहीं। मध्ययुग में कामशास्त्र पर कामसूत्र, कट्टनीमत, अनंगरंग, रतिशास्त्र, रतिरहस्य, पंचसायक, रतिमंजरी, शृंगारदीपिका, समय मातृका, नर्ममाला, कुचिमारतन्त्र आदि ग्रन्थ बने थे। इनमें प्रायः अनेक प्रकार के गर्भरोधक प्रयोग निर्दिष्ट हैं।

मेरे दृष्टिकोण में एतत् विषयक अनुभूत प्रयोगों की जानकारी हमें—व्यावसायिक परम्परागत वेश्याओं, ग्रामीण बच्चों, ग्रामीण धात्रियों और कतिपय ग्रामीण लोक गीतों और मुहावरों कहावतों के आधार पर प्राप्त हो सकती है। इस विषय में अधिक अन्वेषणों की आवश्यकता है। तथापि इस मार्ग में उक्त प्राच्य तथ्यों के आधार पर निरपायी—सुखोदक और सुनिश्चित फलप्रद गर्भनिरोधक

उपायों की खोजकर लेना असम्भव नहीं है। इस ओर प्रयोगकर्त्ता और अन्वेषणकर्त्ता को आयुर्वेद के सर्वतन्त्र सिद्धान्त को कदापि भूल नहीं जाना चाहिये—“दोष भेषजदेश काल बल शरीर साराहार सात्म्यसत्त्व प्रकृति वयसां मानमवहितमनसा यथावज्ज्ञेयं भवति शिष्याः दोषा दिमानामत्तत्वात् क्रियायाः।” (च० वि० १/३)—क्योंकि इसी आधार पर वास्तविक सिद्धि-सफलता निर्भर है।

शुक्र पर प्रभाव करने वाली औषधियाँ

कुसुमबीज—अवृष्य (भा. प्र.), भूतणम्—अवृष्य (भा. प्र.), यवानिका—शुक्रहृत् (भा. प्र.), शतपुष्पा—शुक्रहृत् (भा. प्र.), खाखसफलोद्भवं—धातूनां शोषक (भा. प्र.), बल्कल (Papaver Somniferum) सेवनात् पुंस्त्व-नाशनम् (भा. प्र.), त्वक्पत्र (तज) (Cinnamon) शुक्रहृत् (भा. प्र.)

कण्टकारी (Solanum Xanthocarpum)—शुक्रस्य रचनभेदि (भा. प्र.), शिग्रुबीज (Hyperanthera Morinag Willd)—अवृष्य (भा. प्र.), कालिन्द (तरबूज) (Citrullus Vulgaris)—शुक्रहृत्, कटभी (Careya Arborea)—तत्फलं तुवरं ज्ञेयं विशेषात्कफ शुक्रहृत् (भा. प्र.) मोक्ष मोरवा (Schribera wisteno-oides)—शुक्रनुत् (भा. प्र.), निष्पाव (Lcbleb Valgaris)—शुक्रनाशनः (भा. प्र.), चणकः (Ciccer Arietinum)—आद्रोऽस्ति कोमलो रुच्यः पित्तशुक्रहृते हिमः (भा. प्र.), कुलत्थ (Dolicus biflorus)—शुक्रहृत् (भा. प्र.)। अतसी (Lini Semina)—शुक्रवातघ्नी (भा. प्र.) यावन्नाल (ज्वार)—अवृष्य (भा. प्र.) शाक—वर्णं बिनाशयति रक्तमथापि शुक्रं (भा. प्र.) सूची (Atropa Belladona)—शुक्रशोषण, सर्पगन्धा—Rauwolfia Serpentina—कामावसादक (पु०) आर्तवजनक (स्त्री), पारसीक यवानी—Hyoscyamus Reticulatus—कामावसादक।

भंगा—गर्भाशय संकोचक, बचा—गर्भाशय संकोचक, कलिहारी—गर्भ पातिनी (भा. प्र.), रेणुका—गर्भपातिनी (भा. प्र.) शिशिपा—गर्भपातिनी (भा. प्र.) चित्रक—गर्भ पातिनी, कालाजाजी-रजः स्रावकारी, करवीर—गर्भपातिनी, शिग्रु—गर्भपातिनी, कपास—गर्भपातिनी

¹ समस्त अति गुरु, उष्ण, तीक्ष्ण और दारुण ज्येष्ठार्थे, उत्कट आसन, विषम आसन, कनि, आसन, वात मूत्र पुरीष के वेगों को रोकना, दारुण अनुचित व्यायाम करना, प्रमित भोजन करना, अभिघात, प्रपीडन, गड़ढा, कूप ध्वनियों को बहुत सुनना (च. शा. ४/१८ तथा ८/२१)

² गर्भोत्पादक भाव—माता, पिता, आत्मा, सात्म्य, रस, सत्त्व, (च. शा. ४/४)

योषापस्मार (हिस्टीरिया)

श्री सप्तोषकुमार सोनी आयु० रत्न, मदन महल स्टेशन के पास, जवलपुर (म० प्र०)

सर्वप्रथम यूनानी चिकित्सक इस रोग को गर्भाशय की विकृति से होने वाला रोग मानते थे और उन्होंने इस रोग का नाम 'इरुतनाकुलरहम' रखा था, जिसका अर्थ रहम की खराबी से गला घुटना होता है। क्योंकि इस रोग में रोगिणी ऐसा महसूस करती है, जैसे पेट में एक गोला उठकर उसके गले को घोंट रहा हो। यूनानी चिकित्सकों का अनुकरण पाश्चात्य वैज्ञानिकों ने भी किया और इसका नाम 'हिस्टीरियाटिस' रखा, जिसका अर्थ 'गर्भाशय प्रदाह' है अब इसको केवल 'हिस्टीरिया' ही कहते हैं। उन्हीं की देखा देखी कुछ भारतीय चिकित्सकों ने भी इसका नाम 'योषापस्मार' जो उपरोक्त नामों का ही समानार्थी है, नामकरण किया। युवावस्था में कामेच्छा की पूर्ति भली भाँति न होने के कारण कुछ वैद्य इसे कामोन्माद मानते हैं। कुछ वातज उन्माद और कुछ वैद्य अपतन्त्रक कहते हैं। योषापस्मार निश्चित रूप से वात व्याधि ही है। वात कुपित होने के निम्नलिखित कारण चरक संहिता में कहे गये हैं—

रुक्षशीताल्प लघ्वन्न व्यवायति प्रजागरैः ।
विषमाहुषधाराच्च दोषासृक स्रवणावपि ॥
लघेन प्लवानात्यध्व व्यायामति विचेष्टितः ।
घातूनां संक्षयाच्चिन्ता शोक रोगातिकर्षणात् ॥
दुःख शब्दासनात्क्रोधाद्वा स्वप्नाद्भ्रयावपि ।
वेग सन्धारणाद्भावादिघातादभोजनात् ॥
जर्म घाताद्गजोष्ट्राश्च शीघ्र यातावतंसनात् ।
(अवतंसनम् गजादिभ्यः पतनम् च)

वेहे स्रोतांसि रिक्तानि यूरिधित्वाऽनिलोबली ॥

करोति विविधान्व्याधीन्सर्वाङ्गसंश्रिताम् ॥

आधुनिक समय में योषापस्मार होने के जो कारण माने जाते हैं वही लगभग पूरे के पूरे अत्यन्त स्वरूपान्तर से आचार्य चरक ने ऊपर के श्लोकों में कह दिए हैं केवल

'रजोऽभावश्चनारीणां जरायुविकृतेस्तथा' ही लक्षण नहीं आया किन्तु गर्भीरतापूर्वक विचार करने से ज्ञात होता है कि रजोऽभाव और गर्भाशय विकृति में भी मुख्य रूप से वात दोष की ही प्रधानता होती है।

यह रोग मन के साथ विशेष सम्बन्ध रखता है। इसलिए जिन स्त्रियों की बहुत कोमल प्रकृति है और जिनका जीवन बहुत अधिक विलासी होता है उनको अपने पति के किसी भी कारण से चिन्ता, शोकादि की अति व्याप्ति से यह रोग हो जाता है। आचार्य ने वात दोष का जब मन के साथ विशेष सम्बन्ध होता है तब 'मूर्च्छा मदात्योन्माद मदापस्मार मानसाः' आदि रोगों की गणना की है।

पाश्चात्य वैज्ञानिकों का कहना है कि अधिक भोग-विलास का जीवन और आलस्य, कुविचारों में पड़े रहने का स्वभाव, बुरी पुस्तकों का स्वाध्याय और अत्यधिक विषय भोग यह योषापस्मार (हिस्टीरिया) रोग के कारण हैं।

मानसिक बिडोष भी इसका प्रमुख कारण माना जाता है। अत्यधिक लाड़ प्यार का जीवन भी रोगवर्धन में सहायक देखा गया है। हिस्टीरिया रोग में ज्ञान तन्तुओं (Nervous System) की विकृत अवस्था होती है, जिसके कारण अस्वेच्छा, ज्ञान क्रियाओं की अधिकता और मानसिक शक्ति की ग्यूनता होती है। हिस्टीरिया किसी भी रोग के पश्चात् होने वाली निर्बलता अथवा निर्बल करने वाले रोग या रक्त की कमी अथवा आहार की कमी या मस्तिष्क या शारीरिक आघात के कारण हो सकता है, जो कि रोगी को निर्बल बनाता है। यद्यपि यह भी सत्य है कि गर्भाशय की विकृति से भी ज्ञानतन्तु विकृत हो सकते हैं। यह भी रोग के कारणों में से एक हो सकता है, किन्तु यह बात नहीं है कि गर्भाशय की विकृति से ही यह रोग होता हो, इस रोग का मुख्य कारण ज्ञान तन्तुओं की निर्बलता ही है चाहे वह किसी भी कारण से हो।

लक्षण—

क्रुद्धः स्वैः कोपनेर्वायुः स्थानादूर्ध्वप्रपद्यते ।
 पीडयन्मृदुव्यंगत्वा शिरः शङ्खौ च पीडयेत् ॥
 घनुर्वन्तामयेद् यात्राध्याक्षिपेन्मोहयेत्ततः ।
 स कृच्छ्रादुच्छ्वसेच्चापि स्तब्धश्चोऽथ निमीलकः ॥
 कपोत इव कजेच्च निःसंज्ञः सोऽपतंत्रकः ।
 दृष्टि संस्तभ्य संज्ञा च हत्वा कंठेन कूजति ॥
 हवि युक्ते नरः स्वास्थ्यं याति मोहं वृते पुनः ।
 वायुना दारुणं प्राहुरेके तदपतानकम् ॥

अर्थात् अनेक प्रकोपक कारणों से कुपित वायु अपने स्थान को छोड़कर हृदय को पीड़ित करता हुआ ऊपर की ओर जाता है और सिर तथा शंख प्रदेश में जाकर उन्हें पीड़ित करता हुआ शरीर को घनुष के समान झुका देता है, अंगों में आक्षेप उत्पन्न करता है और मूर्च्छा उत्पन्न कर देता है । तब वह संज्ञाहीन रोगी कण्ठ के साथ श्वास छोड़ता है, उसके नेत्र और पलक स्तब्ध हो जाते हैं और वह कबूतर के समान घुर-घुर करता है । यह रोग अपतंत्रक है । दृष्टि को स्तब्ध करके और संज्ञानाश करके कण्ठ में घुर-घुर करती हुई वायु जब हृदय को छोड़ देती है तब मनुष्य स्वास्थ्य लाभ करता और पुनः वायु प्रकोप होने पर मूर्च्छित हो जाता है । इस दारुण व्याधि को अपतानक कहते हैं ।

यद्यपि हिस्टीरिया रोग के लक्षण कौन-कौन और कितने हैं यह निश्चित रूप से बताना असम्भव नहीं तो कठिन अवश्य है, क्योंकि भिन्न-भिन्न रूपाओं में भिन्न-भिन्न लक्षण पाये जाते हैं । यदि चिकित्सक रूपा से भिन्न-भिन्न कष्टों के बारे में पूछता जावे तब वह उसके पूछे हुए सभी कष्टों को स्वीकार करती जाती है । हिस्टीरिया ही ऐसा रोग है, जिसके लक्षण अनेक रोगों के समान हो सकते हैं, क्योंकि इस रोग का सम्बन्ध विशेष रूप से मन से है । रोगिणी निश्चितरूप से हिस्टीरिया से ही पीड़ित है यह निर्णय करने के लिए हम एक विधि लिखते हैं—यदि रोगिणी अपने शरीर के किसी भाग में दर्द बतलावे तो वहाँ से उसका ध्यान हटाकर उस जगह को छूने या दबाने पर उसे वह दर्द की चुभन जो वास्तव में महसूस होनी चाहिये नहीं होगी, किन्तु यदि रूपा को यह ध्यान रहे कि यह वैद्य मेरा दर्द टटोल रहे हैं तो वह

बहुत जोर से चीखेगी । यदि उसे बातों में लगाकर धीरे-धीरे उस स्थान पर जहाँ वह दर्द बतला चुकी है अपना हाथ रखकर उससे बातें करते जावें तथा उस स्थान को दबाते जावें तब वह बातों की धुन में न तो चीकेगी और न दर्द से चीखेगी ही ।

कभी-कभी रोगिणी ऐसा श्वास लेती है कि देखने वालों को मृत्यु का भ्रम होता है, कभी काँपती है, हाँफती है, चौकती हैं और कभी-कभी इतना बल करती है कि २-३ मनुष्यों के समाले नहीं संभलती, कभी चुप रहती है,

पृष्ठ ६ का शेषांश

ग्रहण करें और वह जन्म में कारण हो तो परनिर्माण हमें भी मान्य है । अर्थात् आत्मा ही कर्मानुसार किए हुए कर्मों के फल को भोगने के लिए पुनः इस लोक में आता है ।

अथवा इसे दूसरी प्रकार भी समझ सकते हैं । अर्थात् गह्रां परनिर्माण से अभिप्रायः दो हो सकते हैं । या तो आत्मा का परनिर्माण या शरीर मात्र का परनिर्माण (दूसरे द्वारा बनाया जाना) । यदि यह सिद्ध हो जाय कि आत्मा का परनिर्माण होता है तो पुनर्जन्म सिद्ध नहीं हो सकता । अतएव इसका उत्तर दिया है कि—अनादि चेतन का परनिर्माण नहीं हो सकता अन्यथा आत्मा की अनित्यता हो जायगी । यदि शरीर का परनिर्माण ही अभिप्रेत हो तो इसमें हमें कोई विप्रतिपत्ति नहीं । अर्थात् यदि ईश्वर को भी हम शरीरोत्पत्ति में कारण मानें तो वह पुरुष के कर्म की अपेक्षा ही शरीरोत्पत्ति में कारण होता है । अन्यथा लोक में नियम नहीं रह सकता और ईश्वर पर भी दोष आएगा । यदि कर्म की अपेक्षा न मानी जाय तो किसी का जन्म उच्चकुल में और किसी का नीच कुल में होने का कोई कारण नहीं बता सकते । यदि यह कहें कि ईश्वर जिसको जहाँ (अपनी इच्छा से) चाहता है वहाँ उत्पन्न कर देता है तो उसमें पक्षपात का दोष आता है । अतः पुरुष कर्म की सहायता से ही ईश्वर इन नानाविध प्राणियों को उत्पन्न करता है । अतः यदि आत्मा को ही शरीर के निर्माण में कारण मानें तो कोई आपत्ति नहीं होनी चाहिए । इसी प्रकार शरीर का पर (आत्मा) निर्माण हमें भी अभीष्ट है । और इस प्रकार कर्म, कर्मफल आदि के माने जाने के कारण पुनर्जन्म स्वयं ही सिद्ध हो जाता है ।

कभी बकती, वरती, दाँत पीसती, कभी ऐंठन दिखाती है, जिससे उसकी आकृति गठरी जैसी हो जाती है, कभी-कभी आगे झुककर कभी मस्तक पीछे झुकाकर चीखती चिल्लाती है। कभी-कभी सिर में कील ठोकने जैसी पीड़ा बतलाती है। इसमें रोगिणी को वातोन्माद के समान 'अस्थान हास्य' स्मित नृत्य गीत वाद्याङ्ग विक्षेपण रोदनानि' लक्षण भी होते हैं, किन्तु अन्तर यह होता है कि वातोन्माद में यह सभी लक्षण स्थायी होते हैं जबकि हिस्टीरिया में एकदम अस्थायी।

आवेश के बिना हिस्टीरिया की पहचान कठिन होती

है, किन्तु आवेश के समय उसके लक्षण वातोन्माद (अपस्मार) के समान होते हैं, इसलिए इसे योषापस्मार यानी स्त्रियों का अपस्मार कहते हैं। किन्तु हिस्टीरिया में अपस्मार की तरह अचानक आक्षेप नहीं होता और बेहोशी में सर्वथा वेसुधी नहीं होती, पुनर्लियाँ नहीं फैलती, जिह्वा नहीं कसती, शरीर और वस्त्रों को विशेष हानि नहीं होती, रोगिणी इधर-उधर देखती है, आवेश बहुत देर तक रहता है, रोगिणी चीखती, चिल्लाती तथा रोती बहुत है। इसके अतिरिक्त हिस्टीरिया की आक्षेप के आगे पीछे जो स्थिति होती है वह अपस्मार में नहीं होती है।

हिस्टीरिया और अपस्मार में अन्तर

हिस्टीरिया	अपस्मार
१. यह रोग सिर्फ स्त्रियों को होता है।	यह रोग पुरुषों को भी होता है।
२. यह रोग यद्यपि बाल्यावस्था में होता है परन्तु प्रारम्भिक युवावस्था में अधिक होता है।	यह रोग बहुधा १५ वर्ष की आयु से पूर्व होता है।
३. दौरा होने पर रोगी को ज्ञान हो जाता है और शरीर को किसी प्रकार की हानि नहीं होती।	दौरे के समय रोगी अचानक गिर जाता है जिससे गिर तथा मुख पर चोट आ सकती है।
४. दौरे की प्रारम्भिक स्थिति में रुग्णा सामान्य रहती है तथा बड़ी हुई दशा में चिल्लाती है।	दौरे का प्रारम्भ ही जोरदार चीख से होता है।
५. रोगिणी दौरे के समय इतनी वेगवान होती है कि कभी-कभी कई मनुष्य एक साथ पकड़ते हैं।	आक्षेप के समय रोगी को पकड़ना आवश्यक होता है क्योंकि उसका संचालन देर तक होता रहता है।
६. रोगी असंगत शब्दों को बोलता है और वेगवान संचालन में हौश भी आ जाता है।	रोगी सर्वथा वेसुध होता है और बोल नहीं सकता।
७. अन्तर्वेग के लक्षण होते हैं जैसे रोगी निद्रावस्था में काम कर रहा हो।	मनोविकार तथा अन्तर्वेग के लक्षण नहीं होते।
८. जिह्वा को कोई कष्ट नहीं होता। मल मूत्र प्रायः नहीं छूटता।	आक्षेप के समय प्रायः रोगी अपनी जिह्वा काट लेता है और कभी-कभी मल मूत्र भी निकल जाता है।
९. चित्त भ्रम होता है रोगिणी का ध्यान दूसरी ओर लगाया जा सकता है।	आक्षेप के समय चित्त भ्रम, असंगत, अस्पष्ट और अयुक्त तथा जल्दी-जल्दी होता है।
१०. आक्षेपों का स्वास्थ्य पर बुरा प्रभाव नहीं पड़ता और उष्णता नहीं बढ़ती।	आक्षेपों का स्वास्थ्य पर बुरा प्रभाव पड़ता है तथा उष्णता बहुत बढ़ जाती है।
११. आक्षेप के पश्चात् आलस्य और तन्द्रा प्रायः नहीं सताती।	आक्षेपों के पश्चात् आलस्य और तन्द्रा बहुत महसूस होती है।
१२. हिस्टीरिया की रोगिणी एक ही दौरे में कई प्रकार की मानसिक स्थिति का प्रदर्शन कर सकती है।	इसमें ऐसा नहीं होता। प्रायः रोगी एक ही स्थिति में रहता है।
१३. ब्रोमाइड से विशेष लाभ नहीं होता।	ब्रोमाइड से लाभ होता है।
१४. दृष्टि क्षेत्र में संकुचन होता है।	दृष्टि क्षेत्र में कोई संकुचन नहीं होता।
१५. रोगिणी को आग और पानी से भय नहीं रहता क्योंकि इनसे रोगिणी दौरे के समय दूर हो जाती है।	दौरा आग पानी के पास ही पड़ता है अतः इनसे खतरा रहता है।

हिस्टीरिया चिरकाल तक रहने पर भी स्वास्थ्य अधिक नहीं बिगड़ता। हिस्टीरिया के लक्षण जिन-जिन रोगों से मिलते हैं वे रोग स्वयं जो-जो हानियाँ करते हैं वे हिस्टीरिया के समय नहीं करते।

हिस्टीरिया के लक्षण जो शरीर के विभिन्न अंगों एवं प्रणालियों पर पाये जाते हैं अधोलिखित हैं—

(अ) आक्षेप—रोगिणी संज्ञाहीन के समान गिरती है, किन्तु गिरते समय सम्झल कर इस प्रकार गिरती है कि चोट न लगे परन्तु किसी को चोट पहुँचा सकती है। खतरे के स्थानों जैसे चूल्हा, कुआँ इत्यादि में (पर) नहीं गिरती। दांत बंध जाते हैं किन्तु जीभ कभी नहीं कटती, अंगुली मुँह में डालने पर काट सकती है। माँसपेशियों में विचित्र प्रकार की अकड़न होती है किन्तु प्रतिक्षेप (Reflexes) में विकार नहीं आता। रोगिणी चीखती, चिल्लाती तथा रोती है। श्यामता, पीताम्यता, अनैच्छिक मस मूत्र त्याग आदि लक्षण नहीं होते हैं। बसत या थूक की प्रवृत्ति होती है किन्तु अपस्मार के समान फेन नहीं निकलता। आक्षेप का समय अनिश्चित रहता है किन्तु जितनी उपेक्षा की जावे उतनी शीघ्र शांत हो जाता है, सहानुभूति और उपचार से आक्षेपों में वृद्धि होती है।

(आ) मानसिक विकृति—इच्छा शक्ति एवं सहनशीलता का प्रभाव—छोटी-छोटी बातों को अधिक महत्व दिया जाता है। विस्मृति—रोगिणी बहुत सी बातों को भूल जाती है, कभी-कभी अपना पिछला जीवन पूर्णतया भूल सकती है और ऐसा व्यवहार करती है जैसे वह कोई अन्य व्यक्ति हो (भूतीन्माद)।

(इ) संज्ञावह संस्थान (Nervous System)—

(i) दृष्टि, श्रवण शक्ति, गंध, स्वाद आदि ग्रहण करने की शक्तियों के विकार बतलाये जाते हैं किन्तु वस्तुतः कोई विकृति नहीं पायी जाती। दृष्टि शक्ति के अभाव की दशा में आँख के पास तुकीली वस्तु ले जाने से आँख बन्द हो जाती है। श्रवण शक्ति के अभाव की दशा में सोते समय गोर मचाने या पुकारने से नींद खुल जाती है। स्वाद ग्रहण करने की शक्ति का अभाव होने पर भी रोगिणी कड़वी औषधियाँ नहीं खाती।

(ii) सिर में भयंकर पीड़ा जैसे कोई कीलें ठोक रहा हो। इसी तरह वक्ष, उदर आदि में पीड़ा बताती है।

(iii) स्थानिक संज्ञानाश किसी भी अंग में बतलाया जा सकता है, किन्तु उस अंग में चोट पहुँचाना रोगिणी को सहन नहीं होता।

(ई) चेष्टावह संस्थान—

(i) अनेक प्रकार के घात (Paralysis) बतलाये जा सकते हैं और पेशियाँ अकड़ी हुई अथवा ढीली मिलती हैं, ऐच्छिक क्रियाओं का लोप हो जाता है किन्तु खांसते समय वे पेशियाँ सही कार्य करती हैं। घात के कुछ चिह्न मिल सकते हैं परन्तु पूरे चिह्न कभी नहीं मिलते।

(ii) कई प्रकार की अकड़नें कम्प आदि मिल सकते हैं। विशेषतः बोलते समय जीभ का अकड़ना तथा वाक् शक्ति में कई प्रकार के विकार पाये जा सकते हैं। उदर की पेशियों की अकड़न से 'वायुगोला' उत्पन्न होता है।

(उ) अनैच्छिक पेशियाँ—

(i) गले की पेशियों के स्तम्भ के कारण गोला सा रुका हो ऐसी अनुभूति होती है।

(ii) रुग्णा की क्षुधा नष्ट हो जाती है और वह खाना पीना एकदम बन्द कर देती है। यदि बलपूर्वक खिलाने का प्रयास किया जावे तो आक्षेप आ जाता है। इस प्रकार बिना खाये पिये वह महीनों गुजार देती है और अत्यन्त कृश हो जाती है।

इसके अतिरिक्त हृल्लास, अत्यधिक वमन, निगलने में कष्ट, ह्रिक्का, घूल, मूत्रावरोध, स्वेद प्रवृत्ति, त्वचा में रक्ताधिवय, हृदय में घड़कन इत्यादि विकार भी पाये जाते हैं।

(अ) ज्वर—हिस्टीरिया जन्य ज्वर भी पाया जाता है। अधिकतर यह कृत्रिम होता है।

(ए) यौन विकार—स्त्रियों में योनि स्तम्भ (Vaginismus), मैथुन के प्रति अत्यधिक घृणा या भय आदि पाया जाता है किन्तु कभी-कभी मैथुन के प्रति अत्यधिक रुचि भी पायी जाती है। ऐसी स्थिति में रुग्णा किसी से भी यौन निवेदन कर सकती है।

योनि स्तम्भ के मामलों में मैथुन के लिए प्रवृत्त होते समय पुरुष जननेन्द्रिय का स्पर्श होते ही योनि इतनी बुरी तरह से संकुचित हो जाती है कि प्रवेश असंभव हो जाता है।

(ऐ) त्वचा रोग—अनेक प्रकार की कृत्रिम पिड़िकायें व्रण आदि पाये जा सकते हैं। रोगिणी इन्हें स्वयं तैयार करती है, इसलिए सामान्य प्रकार के भी हो सकते हैं।

इस प्रकार हम देखते हैं कि हिस्टीरिया के लक्षण बहुत व्यापक होते हैं। हिस्टीरिया के लिए हिन्दी में बहुत से पर्याय समय-समय पर विद्वानों द्वारा प्रयुक्त किये गए हैं, जिनमें ये मुख्य हैं—अपतंत्रक, योषापस्मार, योषोन्माद, स्मरोन्माद, कामोन्माद आदि। परन्तु वास्तव में यह रोग अपस्मार नहीं है और न ही उन्माद या अपतंत्रक है अपितु इनके कुछ न कुछ लक्षण पाये जाने के कारण यह नामकरण किये गये हैं। कुछ अंशों में 'कामोन्माद' अवश्य एक उचित पर्याय हो सकता है किन्तु 'तब' जब उसका (काम) व्यापक अर्थ लिया जावे।

चिकित्सा—

यह रोग यदि अविवाहित स्त्रियों को हो तो शीघ्रातिशीघ्र उनका विवाह कराना चाहिये। यदि स्त्री विवाहिता है और उसका पति दूर हो तो उसके पास भेज दिया जावे। यदि रोगिणी विधवा हो तो उसे वीर्य (रज) कम करने वाली तथा कामेच्छाशामक औषधियाँ दें।

आवेग काल में तीक्ष्ण नस्य का प्रयोग करना चाहिये। यथा—

१. मूर्च्छान्तक नस्य का प्रयोग करें।

२. चमार दूधली के फल १ तोला, कालीमिर्च एक तोला को मिलाकर घोट कपड़छान करके रखें। नस्य दें।

३. नीसादर, वचा, इलायची के दाने, चूना, काली मिर्च, सोंठ प्रत्येक एक तोला और कपूर आधा तोला। इनको एकत्रित कर श्लक्ष्ण चूर्ण बनाकर शीशी में भरकर रखें। ध्यान रहे डॉट बहुत मजबूती से लगा रहे। नस्य के रूप में आवश्यकतानुसार इसका प्रयोग करें। इससे तत्काल मूर्च्छा दूर हो जाती है।

रोगिणी की बेहोशी दूर हो जाने के पश्चात् निम्नलिखित में से किसी औषधि का प्रयोग करें—

१. शुद्ध हींग २ तोला, वच २ तोला, जटामांसी ४ तोला, कूठ ४ तोला, काला नमक ४ तोला, वायविङ्ग ४ तोला को मिलाकर वस्त्रपूत चूर्ण कर लें। मात्रा—३

से ६ मासे चूर्ण दिन में ३ बार जल के साथ प्रयोग करें। उपरोक्त योग २ माह में हिस्टीरिया रोग का शमन करता है।

२. अश्वगन्धारिष्ट और कुमारी आसव समभाग एक से २ तोला तक भोजन के बाद प्रातः सायं प्रयोग करें। इस प्रयोग से हिस्टीरिया के समस्त विकारों का शमन होकर शरीर दृष्ट पुष्ट हो जाता है।

३. ब्राह्मी के रस में समभाग वच, कूठ और शंख पुष्पी का समभाग कल्क मिलाकर यथाविधि घृत सिद्ध करें। यह ब्राह्मी घृत योषापस्मार को नष्ट कर मेघावृद्धि करता है।

४. ब्राह्मी ६ माशा, मुतकका १० दाने, मगज बादाम १० दाने, सोंफ ६ माशा, कालीमिर्च १ माशा इन सबको मिलाकर चूर्ण करें तथा २ तोला मिश्री के साथ प्रातः सायं प्रयोग करें।

५. भूतमैरव महा १ तोला, वात चिन्तामणि वृहत् आधा तोला, सर्वेश्वर पर्पटी आधा तोला, स्वर्ण वसन्त मालिनी आधा तोला, स्वर्ण भस्म आधा तोला और रत्न भागोत्तर रस आधा तोला को मिलाकर ६४ पुड़िया बनावें। प्रातः सायं च्यवनप्राश या अश्वगन्धादि अवलेह के साथ प्रयोग करें।

६. प्रमदानन्द रस—लोह भस्म, रजत भस्म, स्वर्ण भस्म, शुद्ध पारद, शुद्ध गंधक और शुद्ध शिलाजीत समभाग में चित्रक स्वरस की ३ भावना दें। १-१ रत्ती की गोलीयाँ बनाकर त्रिफला चूर्ण १॥ से ८ मासे तक रोगानुसार प्रयोग करें।

उपरोक्त वर्णित प्रयोगों के द्वारा इस रोग को जीता जा सकता है। रोग काल में शुद्ध वायु में टहलना, प्रसन्न वातावरण और विभिन्न आमोद प्रमोद की व्यवस्था रहे। रोगिणी को शोक, भय, चिन्ता, क्रोध आदि से बचाया जावे। ऐसी व्यवस्था की जावे कि रुग्णा चुपचाप आलस्य और अकर्मण्यता में न पड़ी रहे, बल्कि किसी न किसी कार्य में लगी रहे, इससे दौरे कम पड़ा करते हैं। यदि इन सब बातों का ध्यान रखा जावे तो यह दारुण व्याधि आसानी से शीघ्र नष्ट हो जाती है।

धन्वन्तरि

Formulated for the care of motherhood

Satavarex

GRANULES

A Multipurpose Tonic for the use in-



Pre & Postnatal care & Lactation.

HELPS In * GALACTOPOIESIS * LACTOGENESIS
* GALACTOKINESIS



COMPOSITION:

Satavarex contains Shatavari (Asperagus Racemosus) 20% in the form of granules. It is safe and no side effects have been observed.

- * As a nutritive Tonic.
- * In ladies it also helps in development of breast.
- * In pregnancy it nourishes the foetus and acts as multipurpose tonic.
- * It is an aphrodisiac and can be used for both males and females.

- * In Oligospermia-it increases the spermatozoa in seminal fluid and also increases the seminal fluid.
- * As a nervine sedative and in epilepsy.
- * As a geriatric tonic, it helps in controlling the ageing effect.
- * As a general tonic-in all devitalising conditions.



ZANDU
PHARMACEUTICAL WORKS LTD.
GOXHALE ROAD (S), DADAR, BOMBAY 400 025.



राजवैद्य श्री लक्ष्मणदत्त कौशिक

जहाँगीराबाद (बुलन्दशहर)

प्रमेह महारोगों में एक रोग है, जिसकी गणना सुश्रुताचार्य ने दुश्चिकित्स्य रोगों में की है। यह रोग स्वभाव ही से महादुष्ट है। इसका इलाज करना सहज नहीं है। जब इस रोग का आरम्भ होता है तब कोई भी रोगी इसकी परवाह नहीं करता, किन्तु “अणुहि प्रथमं भूत्वा पश्चाद्भोगो विवर्द्धते।”—इस चरकोविन के अनुसार जब प्रमेह अपना स्थान जमा लेता है तब इसकी चिकित्सा करने को चित्त चाहता है। ऐसी दशा में जब प्रमेह जड़ पकड़ लेता है तब रोगी का छटपटाना और प्यारे मित्रों से यह कहना कि “सर्वस्वेनापि मे कश्चिद्विषगानीयतामिति।” किस काम आ सकता है। जड़ पकड़ने के बाद प्रमेह जीवन व्यापी रोग हो जाता है; वह मृत्यु से पहिले पीछा नहीं छोड़ता। यह रोग जैसा प्रबल है उसके लिये वैसी ही रासायनिक औषधि की आवश्यकता है सुश्रुताचार्य का यह कथन बाल बराबर भी अद्यत्य नहीं है। प्रमेह बहुत प्रकार के होते हैं (उनका खुलासा वर्णन इसी लेख में आगे चलकर होगा) साधारणतः सभी प्रमेहों में पेशाब अधिक होता है, और कभी-कभी पेशाब में कुछ गंदलापन और छिछड़े से भी दिखाई दिया करते हैं। प्रमेह बाप से बेटे के भी हो जाता है, ऐसा प्रमेही शरीर से सदा कुश और जन्मभर कमजोर रहता है। प्रमेह कुपथ्य से भी पैदा होता है, कुपथ्य प्रमेही इसी से मोटा बेडौल और प्रायः जन्मभर चिड़चिड़ा रोगी रहता है। प्रमेह एक प्रकार का मूत्ररोग है, इसीलिये इसके विशेष दुर्गुण प्रथम मूत्र द्वारा ही मालूम हो जाने हैं।

प्रमेह किनको होते है ?

जो दिनभर बैठक (बैठे रहने) का काम करते हैं, जिनको नींद बहुत प्यारी मालूम होती है और दिन रात में समय कुसमय खूब ही सोते हैं, जो चलने फिरने आदि की किसी प्रकार की भी प्रतिदिन कसरत नहीं करते हैं, जो दूध दही अथवा गुड़ और शक्कर के बने हुए मीठे पदार्थ सदैव सेवन करते हैं, जो नमी और तरी में रहने वाले जीवों का मांस खाते हैं, जो नये ही नये गेहूं जो

आदि अन्न विशेष खाते हैं, जो कफ करने वाली लुआवदार अधिक चिकनी और बातें फुला देने वाली खुराक खाते हैं, तथा पोखर (जोहड़) तालाब और नदियों का वगैर साफ किया हुआ नया जल पीते हैं, उनको कफ के प्रमेह हो जाते हैं। जिनको रात दिन आग के सामने काम करना पड़ता है, जो मज्ज, गांजा, चरस, चडू, तमाखू, सिगार, सिग्रेट, बीड़ी, शराब जैसी हानिकारक नशीली गर्म चीजें प्रतिदिन सेवन कर जीवन नष्ट करते हैं, जो त्तिकारक वस्तु मिर्च, खटाई, चाय, तेल, नमक, जलन पैदा करने वाली चीजों को अधिक मात्रा से सेवन करते रहते हैं अथवा तेजाब जैसी उताव वस्तुओं से बने हुये पदार्थ अथवा चूर्ण आदि अधिक सेवन करते हैं उनको पित्त के प्रमेह हो जाते हैं। जिनके शरीर में पित्त और कफ क्षीण होने से वायु अधिक और शरीर रूखा बना रहता है, जो वायु पैदा करने वाले रूखे, चरपरे, कसैले पदार्थों को अधिक सेवन करते हैं और पीष्टिक अच्छे पदार्थ कभी नहीं खाते उनको वायु के प्रमेह हो जाते हैं। नीचों के संग दोष से जो स्वयं नीच प्रकृति होकर कुमार्ग में प्रवृत्त हो जाते हैं और कच्चे ही वीर्य को हाथ से अथवा अन्य मार्ग से बेतरह नष्ट करते हैं, जो वाजीकरण अथवा वीर्यवर्द्धक औषधि का सेवन करते हुए भी ईश्वरीय नियमों से विरुद्ध पशु की तरह मैथुन करते में अधिक प्रवृत्त रहकर वीर्य को बेतरह नष्ट करते हैं उनको शुक्रमेह हो जाता है।

अधिक पुरुषों से सम्भोग करने वाली, रजस्वला अथवा दूषित योनि वाली स्त्री के साथ सम्भोग करने से मूत्र नली में एक प्रकार का पुयसावी व्रण (मवाद देने वाला घाव) हो जाता है और उससे पीवसहित दूषित वीर्य का स्राव मूत्र के साथ साथ होता रहता है। इस मेह को व्रण मेह, औपसर्गिक मेह अथवा आगंतुक मेह कहते हैं। यह प्रमेह प्रायः दूषित स्त्री से सम्भोग करने वाले, आते हुये वीर्य को असमय रोकने वाले अथवा मूत्र का वेग रहते हुए भी विषय करने वाले पुरुषों को होता है।

जो अहर्निश स्त्री सङ्ग में दत्तचित्त रहते हैं और

किसी प्रकार का व्यायाम (कसरत) नहीं करते हैं, जो किसी प्रकार के विषयुक्त कुपथ्य सेवन कर लेते हैं उनको सोम रोग, बहुमूत्र अथवा जल प्रमेह हो जाता है। किसी प्रकार का भी प्रमेह हो जाने पर जो अपना ठीक-ठीक इलाज नहीं करते, अथवा कफ के प्रमेहों के रहते हुए भी मधुर और पीष्टिक पदार्थ खाते ही रहते हैं अथवा जिनके शरीर की सब धातुयें अधिक दिनों में प्रमेह के द्वारा गल जाती हैं तब वायु द्वारा वे सब मूत्र मार्ग से आती रहती हैं, उनको मधु प्रमेह रोग हो जाता है।

प्रमेह कितने होते हैं ?

प्राचीनाचार्यों के विचार से २० प्रमेह होते हैं। जैसे कफ के दस (उदकमेह, दधुमेह, सान्द्रमेह, मुरामेह, पिष्ट-मेह, शुक्रमेह, सिकतामेह, शीतमेह, शनैर्मेह और लालामेह)

पित्त के छः (क्षारमेह, नीलमेह, कालमेह, हारिद्रमेह, मांजिष्ठमेह और रक्तमेह)। वायु के चार (मज्जामेह, वसामेह, हस्तिमेह, मधुमेह)। मेरे विचार से आधुनिक समय में होने वाले इन नवीन चार प्रमेहों (व्रणमेह, शुक्रमेह, जलमेह और मधुमेह) को भी इसी कक्षा में सम्मिलित करना चाहिए इनको सम्मिलित करने के कई कारण हैं। उन कारणों में से पहिला मुख्य कारण इनकी उत्पत्ति (निदान) का भिन्नत्व है। जैसे—शुक्रमेह यद्यपि कफ के प्रमेहों में गिना जा चुका है परन्तु उसके और नवीन शुक्रमेह के निदान भिन्न-भिन्न हैं। इसी प्रकार कफ के उदकमेह से भिन्न नवीन जलमेह है। नवीन जलमेह की समता सोमरोग अथवा बहुमूत्र से है और व्रणमेह रोग सुजाक नाम में परिणत होता है, नवीन मधुमेह का मुख्यत्व उसके निदान पर है। यह नवीन यह मधुमेह है जिसके लिए वाग्भटाचार्य ने लिखा है—“कालेनोपेक्षिताः सर्वे यद्यांति मधुमेताम्”

इन चारों नवीन प्रमेहों के लक्षण और स्थान भी प्रायः एक ही हैं अतः इनकी प्रमेहों में गणना करना उचित ही प्रतीत होता है। इसीलिए जिनको ये चारों नवीन प्रमेह होते हैं प्रथम ही विवरणपूर्वक लिख चुके हैं और आगे चलकर इनकी क्रमानुसार लक्षण और चिकित्सा भी अलग लिखी जायेगी।

प्रमेह कैसे होते हैं ?

इस बात का निर्णय करने के लिए समस्त प्रमेहों की

दो श्रेणी मुख्यतया कल्पित करनी चाहिए। इस कल्पना से प्रमेह सहज और दोषज दो प्रकार के माने जायेंगे। इससे जो प्रमेह सहज होते हैं वे पितृक दोष से होते हैं, जिनके पिता को प्रमेह अथवा मधुमेह होता है उनके वीर्य के दोष शरीर के उन्हीं अङ्ग और धातुओं में व्याप्त हो जाते हैं; जो प्रमेहों के दूषित रहते हैं। इससे सहज प्रमेहों को यह रोग न्यूनधिक रूप में यावज्जीवन रहता है। इसीलिये सहज प्रमेहों सदैव कृश और निर्बल रहता है। दूसरी प्रमेह श्रेणी दोषज है, दोषज प्रमेह कुपथ्यों से होता है, उन कुपथ्यों का वर्णन हम “प्रमेह किनको होते हैं ?” में लिख आये हैं। कुपथ्य प्रमेहों के मेद धातु विशेष रहती है इसीलिये वह बेडौल मोटा और बलहीन रहता है।

दोषज प्रमेह कैसे होते हैं— इस प्रश्न पर चरकाचार्य और सुश्रुताचार्य लिखते हैं कि जब मनुष्य इस प्रकार कुपथ्य सेवन करता है तब प्रथम ही उसका कफ दूषित होकर बढ़ता है, कफ बढ़कर अपने समान गुण वाले मेद में जाकर मिल जाता है और मेद में मिलकर, शरीर की त्वरी को बढ़ाकर मांस को फुलाकर, शरीर में द्रव भाग को बढ़ाता है। यही द्रव भाग वजनी होने के कारण कफ और मेद धातु से मिला हुआ सूत्रनलिका द्वारा मूत्र के साथ-साथ गिरा करता है। जब कफहीन होता है तब पित्त से और कफपित्त के स्थूल होने पर वायु से प्रमेह असाध्य दशा में प्राप्त होते जाते हैं। यह रीति केवल कफ, पित्त, वायु के प्रमेहों की है। जब मनुष्य कुमार्ग से बिना विचारे लापरवाही से कच्चे वीर्य को नष्ट करता है तब उसकी वीर्यवाहिनी नसें और मूत्राशय निर्बल हो जाता है अतः वह अपरिपक्व पतला वीर्य छोटे मोटे साधारण कार्यों से बिना समय के ही मूत्र द्वारा गिरता रहता है। शुक्रमेह की सम्प्राप्ति इस प्रकार होती है—

दूषित योनि वाली स्त्री के साथ व्यवहार करने से सूत्रवाहिनी नलिका के मध्य की कफ वाहिनी चमड़ी दूषित होकर गल जाती है। धीरे-धीरे उससे पीड़ा सहित मूत्र और पीव जाने लगते हैं। यह व्रणमेह एक सप्ताह के भीतर ही अपना पूर्णरूप धारण कर लेता है।

निदान में कहे हुये कारणों से समस्त शरीर का जल भाग जब मूत्र द्वारा अधिक परिमाण में गिरने लगता है तब जलमेह या बहुमूत्र रोग उत्पन्न हो जाता है।

शरीर में मधुर रस की अधिकता होने पर मधुमेह उत्पन्न हो जाता है।

प्रमेहों में शरीर की कौन-कौन सी धातु बिगड़ती हैं ?

रस (किये हुए भोजन का पाक होकर जो जल की भांति तरल प्रथम धातु बनती है।) रक्त (खून) मांस, मेद (घी की भांति जमने वाली श्वेत धातु), मज्जा (हड्डियों के भीतर की पतली मोम जैसी धातु) वीर्य, ओज (हृदय में रहने वाला वीर्य तत्व, जिसके नष्ट होने से मनुष्य का जीवन नष्ट हो जाता है) वसा (चर्बी, मांस से उत्पन्न पतला स्नेह) अम्बु (शरीर का जलतत्व) लसीका (प्रत्येक धातु के मध्य में रहती हुई तराई) ये सब चीजें सभी प्रमेहों में बिगड़ जाती हैं। इसी से प्रमेह के महा भयंकर होने का अनुमान कर सकते हैं। जिस रोग में शरीर की हड्डियों को छोड़कर सभी धातु, शरीर के पोषक तत्व और ओज जैसा रत्न दूषित हो जाता है उससे क्या अन्य कोई भी महा भयङ्कर रोग हो सकता है ?

प्रमेहों का आरम्भ क्यों कर मालूम हो ?

पहले से नीचे हाथों में और घुटने से नीचे पैरों में, हथेली और तलुवों में जलन मालूम हो। समस्त शरीर और विशेषकर मस्तक पर चिकनाई झलके। पेशाब कुछ गँदला और तादाद से अधिक आने लगे। आलस्य की विशेषता। प्यास का अधिक लगना। पसीने में अधिक दुर्गन्ध आना। जरासा परिश्रम करने से हाँफ जाना। बार-बार थूकना। जीभ और दाँतों में बैल जमना। सिर के बालों में खुद ही लटी पड़ना। नाखून अधिक और जल्दी बढ़ना, प्रमेहों के आरम्भ में प्रायः ये ही लक्षण होते हैं। यदि ये समस्त अथवा अधिकांश लक्षण प्रतीत होने लगे तो प्रमेह अवश्य होगा ऐसा विश्वास करना चाहिए।

कफ के प्रमेहों के क्या लक्षण होते हैं ?

१. उदकसेह में—पेशाब अधिकांश साफ, बहुत सफेद, बिना गन्ध का, ठंडा और पानी जैसा आता है।

२. इक्षुमेह में—पेशाब कुछ मीठा, गँदला, सफेदी लिये और अधिक होता है।

३. सांद्रमेह में—पेशाब गंदा छिछड़ेदार अधिक होता है। देखने में पतला रहने पर भी रखा रहने पर २४ घण्टे में गाढ़ा लसदार हो जाता है।

४. सुरामेह में—पेशाब शराब जैसा कुछ बदबूदार इसकी पीली रङ्गता का होता है और किसी पात्र में रख

देने में ऊपर साफ पतला और नीचे गाढ़ा हो जाता है।

५. पिष्टमेह में—पेशाब सफेद, उड़द की पिट्टी जैसा घुला हुआ सा, अधिक होता है। पेशाब होते समय शरीर के रोम खड़े हो जाते हैं। सुखने पर पेशाब सफेद जम जाता है।

६. शुक्रमेह में—पेशाब सफेद फुटकी-छिछड़ेदार और मिला सा होता है।

७. सिकतामेह में—पेशाब में चींटी के ळड़े के समान सफेद दाने से आते हैं।

८. शीतमेह में—पेशाब जल जैसा, मिठास लिये, साफ, बहुत ठंडा होता है।

९. शनैर्मेह में—पेशाब की धार नहीं बँधती। पेशाब बार-बार थोड़ा-थोड़ा होता है।

१०. लालामेह में—पेशाब लसदार, चिकनाहट लिये चोपदार होता है।

चिकित्सा

१. दारुहल्ली, इन्द्र जी, त्रिकला, नागरमोषा प्रत्येक ७ मासे इन सबको अच्छी प्रकार कूटकर आधासेर जल में ओटावे। आधा पाव शेष रहने पर २ तोला असली शहद मिलाकर पीवे। इस प्रकार प्रातःकाल, सायंकाल इस क्वाथ को सेवन करने से सभी प्रमेह आराम होते हैं ४१ दिन सेवन करें।

२. भुनी हल्दी दो मासे, आंवले का रस ४ तोले, असली खालिस शहद २ तोले, सबको एक में मिलाकर प्रतिदिन ४१ दिन पीने से प्रमेह शान्त हो जाते हैं।

३. असली गिलोय का सत्त १ मासे से २ मासे तक खालिस शहद में मिलाकर चाटने से भी आराम होता है।

४. वृक्ष पर पके हुए आक के पीले १०० पत्ते लेकर एक हांडी में ५० पत्ते बिछा दें पुनः एक छटांक रुमी सिगरफ (अदरक के रस में घोटी हुई) की डली रखें पुनः शेष ५० पत्ते भी ऊपर जमा दें हड़ सम्पुट कर गजपुट में फूक दें। श्वेत भस्म तैयार होगी। मात्रा १ चावल के आधा भाग के समान है। गो के दूध की मत्तई में मिलाकर ४१ दिन सेवन करें। दूध, घी का अधिक सेवन करें।

नोट—ओषधि सेवन काल में नमक (खवण) का त्याग रखे और जल भी कम पीवे। ईश्वर की कृपा से २ सप्ताह में ही प्रमेहान्तक तथा नपुंसक भी बल, वीर्य युक्त हो जीवन का आनन्द प्राप्त करें। योग क्या है पत्थर की लकीर समझें—विश्वासो फलदायक। यह योग मेरे पूज्य

पिता राजवंध प० सोहनलाल शर्मा जी का हजारो रोगियों पर परीक्षित प्रयोग है। शेष अधिक प्रयोग लिखने से लेख बहुत ही बढ़ा हो जायेगा इसलिए यहां चार प्रयोग ही ठीक हैं।

कफ प्रमेहों के रोगी को पथ्यापथ्य—

इन प्रमेहों में पुराने जी, गेहूं की रोटी, मूंग की दाल, पुराने चावल का भात और आलू, शकरकन्द, करेला, मेंथी का शाक खाना चाहिये। किसी न किसी प्रकार की कसरत करना, घूमना बहुत ही अच्छा है। जो कफ प्रमेही दुबला पतला और निर्बल हो उसे ही घी दूध और ताकत की चीजें खाना अच्छा है। पुष्ट पुरुष जहाँ तक बने छली रोटी का सेवन करे और चलने फिरने की कसरत करता रहे। कफ प्रमेह में कड़ुवी चीजें और असली खालिस शहद का मीठा खाना उत्तम है।

पित्त प्रमेहों के लक्षण क्या हैं ?

१. क्षारमेह में—पेशाब बदबूदार और रङ्ग में खारी लमक के पानी जैसा होता है।

२. नीलमेह में—पेशाब हल्की नीली रङ्ग का गन्दला और गरम होता है।

३. कालमेह में—पेशाब देशी काली स्याही के घोवन सदृश आता है।

४. हारिद्रमेह में—पेशाब कुछ खारा कुछ कड़ुवा हल्की का ओटाया हुआ पानी जैसा पीला आता है।

५. मांजिष्ठमेह में—पेशाब गन्दलापन और सुर्खी लिये जखता हुआ आता है। किसी समय इसमें दुर्गन्धि भी आती है।

६. रक्तमेह में—पेशाब खारी, गरम, बदबूदार लाल रङ्ग का होता है।

पित्त प्रमेहों का इलाज क्या है ?

१. खस, पठानी लोध, अर्जुन की छाल, लालचन्दन प्रत्येक ७ माशे, सबको आधा सेर जल में ओटाकर तीन छटाक शेष रहने पर ठंडा करके दो तोले असली खालिस शहद मिलाकर पीना चाहिये।

२. विशुद्ध शिलाजतु १ माशे, आंवले का रस २ तोले, असली खालिस शहद २ तोले इन सबको मिलाकर प्रति दिन दोनों समय लेने से सब प्रकार के प्रमेह आराम होते हैं।

३. पठानी लोध ७ माशे, नागरमोथा ७ माशे, असली स्वच्छ रसोत ३ माशे, घाय के फूल ६ माशे सबका काढ़ा बनाकर दो तोले असली खालिस शहद मिलाकर पीने से पित्त प्रमेह आराम हो जाते हैं।

पित्त प्रमेहों के रोगी को पथ्यापथ्य—

इन प्रमेहों में पुराने चावल का भात पुराने अन्न जी गेहूं की रोटी मूंग की दाल (कभी-कभी उड़द की दाल भी खा सकते हैं) चने की दाल, आलू, शकरकन्द, कच्चा केला का शाक खाना अच्छा है। कभी-कभी थोड़ा सा गाय का अथवा बकरी का दूध गर्म करके असली खालिस शहद मिलाकर पीना अच्छा है। भोजन के पचाने और रोग नष्ट करने के लिये जितना परिश्रम (कसरत) होसके करना चाहिए। इन प्रमेहों में अधिक मीठी, गर्म और चरपरी चीजें बिल्कुल नहीं खानी चाहिये। क्योंकि इनमें किसी भी मीठी गर्म, चरपरी चीज के अधिक सेवन से रोग जोर पकड़ लेता है।

वात प्रमेही के लक्षण क्या हैं ?

१. बसामेह—में पेशाब घी की जैसी चिकनाई मिला हुआ तिरमिरेदार होता है। कुछ देर शीत स्थान में रखने से पेशाब के ऊपर चरबी की पतली पर्त जम जाती है।

२. मज्जामेह—में पेशाब लसदार, सफेद धातु मिला हुआ आता है।

३. हस्तिमेह—में पेशाब बहुत अधिक और मोटी धार से रात दिन आता ही रहता है।

४. मधुमेह—में पेशाब शहद जैसा गाढ़ा, मीठा, गन्धयुक्त और जमने लायक आता है।

वात प्रमेहों का इलाज क्या है ?

१. शतावरी पाक, मूसली पाक, गोक्षुरपाक, खाने अथवा प्रमेह के नाश करने वाली किसी भी एक या अनेक औषधियों में पकाया हुआ तिलका तेल खाने और मर्दन करने में उपयुक्त होते हैं।

२. वसन्त कुमाकर रस (निर्माता—निर्मल आयुर्वेद संस्थान, अलीगढ़ द्वारा बनी) सेवन करे। रोग को स्थाई रूप से दूर करने में सक्षम है। यह अत्यन्त ही गुणकारी और विश्वस्त महोषधि है।

३. गोखरू छोटे, कौंच के बीज, खरंटी, शतावर, सफेद मूसली प्रत्येक ३ तोले, गंगेरन की छाल २ तोले,

मिश्री सबके बराबर मिला लें। सेवनीय मात्रा ३ से ६ मासे तक कच्चे गी के दूध के साथ दें।

पथ्यापथ्य—उड़द की दास, गेहूं की रोटी कचालू, बुइया (जरवी) कच्चा केला, लहसोड़ा, फटहल का शाक, अच्छे पोष्टिक और बलकारक पदार्थ, तैल की पकी चीजें।

शुक्रमेह के लक्षण क्या हैं ?

शुक्रमेह में शिशनेन्द्रिय का मुख हर समय गीला बना रहता है और शनैः शनैः पतला जल जैसा वीर्य सरण होता रहता है। जब कभी शरीर में जरा भी कामशक्ति की उत्तेजना होती है तो जाग्रत अवस्था हो या स्वप्नावस्था उसी समय वीर्यपात हो जाता है। कभी-कभी वीर्याशय के निबल हो जाने के कारण मल मूत्र के त्याग के समय जरा सा श्रम होते ही वीर्यपात हो जाता है, मन मलिन शरीर क्लान्त और निस्तैज सा बना रहता है। अधिक समय तक इस अवस्था के रहने से कभी-कभी पुरुषत्व को हानि भी हो जाती है। भूख यथेष्ट नहीं लगती, पेट की आंत बिगड़कर कब्ज हो जाता है। दृष्टि मन्द हो जाती है, सिर में चक्कर आने लगता है और नेत्र के बाहरी भागों में स्याही झलकने लगती है।

शुक्रमेह का इलाज—

१. ढाक का गोंद, कीकर का गोंद, कीकर की फली, कीकर की छाल, मूसली स्याह, मूसली सफेद, मूसली सेमल, तालमखाना, मीठे इन्द्रियव (इन्द्र जी), बहुमन सफेद, बहुमन सुखं, सालम मिश्री, प्रत्येक २-२ तोले, कस्तूरी १ मासे, सिद्ध मकरध्वज २ मासे, जावित्री ४ मासे, सबके समान भाग मिश्री कूट छानकर चूर्ण बनाले। मात्रा १ तोला सुबह गोदुग्ध के साथ सेवन करें। इसी प्रकार रात को सेवन करें। यह हमारा १००० बार का अनुभूत योग है।

२. कूठ, कसेरू, देबदारू, त्रिफला, हल्दी, अर्जुन की छाल, लाल चन्दन, सफेद दूध, अगर, खरैटी के बीज, सब औषधि ३-३ मासे लेकर आध सेर जल में काढ़ा करें आधा पाव बाकी रहने पर १ तोले मिश्री मिलाकर १ महीने तक पीवें। इससे शुक्रमेह जाता है।

पथ्यापथ्य—जहाँ तक हो सके जिन बातों से वीर्य विशेष रूप से गिरता हो ऐसी बातों का परित्याग करना चाहिये। जब तक रोग आराम न हो स्त्री सङ्ग न करना चाहिए। इस रोग में पथ्य विधान वैसा ही करना उचित है जैसा पित्त प्रमेहों में लिख आये है।

व्रणमेह के क्या लक्षण हैं ?

यह रोग दूषित योनि वाली स्त्री के संसर्ग से होता है। तब विषय करने के दिन से ७ दिन के भीतर ही मालूम हो जाता है। इन्द्रिय के आगे कुछ-कुछ (कभी-कभी तीव्र) खुजली होती है, इन्द्रिय में बिना कारण बार-बार उत्तेजना होती है और उससे भीतरी घाव फटता सा जान पड़ता है, पेशाब करने पर बूंद-बूंद पेशाब बहुत कष्ट से होता है और पेशाब के साथ-साथ खून और पीव या दूषित वीर्य की बूंद गिरने लगती हैं। इन्द्रिय के अग्र भाग का रङ्ग लाल हो जाता है, फोतों में दर्द होने लगता है, पेशाब जल के साथ रुक-रुक कर होता है, उसमें कभी घार से गिरता है तो दो घार या बिना घार का गिरता है। कभी-कभी इस रोग में दोनों आँखें दुखती हैं, आमबात हो जाता है, और अण्डकोष सूज जाते हैं।

व्रणमेह का इलाज—

१. त्रिफला ३ तोले को कूटकर १ सेर पानी में ओटाये, आधा सेर बाकी रहने पर उसे छानकर कुछ गंध रहने पर शिशन इन्द्रिय को डुबो रखे। इससे पीड़ा कम होती है और घाव में भी फायदा होता है।

२. लोबान १० मासे, राल १० मासे, चन्दन के तेल में पीसकर २-२ मासे की मात्रा में दिन में ३ बार अनार शर्बत के साथ लेने से व्रणमेह (सुजाक) आराम होता है। एक बार में अनार शर्बत २ से ४ तोले तक लेना चाहिये। अगर अधिक औषधि बनी हो तो इसी आधार से बना लें।

पथ्यापथ्य—स्त्री सङ्ग न करना चाहिये, स्त्री सङ्ग करने से यह रोग स्त्री को भी हो जाता है और वीर्य के दूषित होने से सन्तान को भी रोगी कर देता है। इसमें पथ्य पित्त प्रमेही जैसा करना चाहिए। खटाई, मिर्च, गुड़, तेल, आरोग्य होने तक न खाना चाहिए।

जलमेह के लक्षण क्या हैं ?

जलमेह में पेशाब साफ, ठीक पानी जैसा शीतल, सफेद झलक वाला बहुत अधिक, क्षण-क्षण में आता रहता है। पेशाब आते समय कुछ पीड़ा या रुकावट नहीं होती, न उसमें कभी गन्दलापन ही दिखाई देता है। कंठ हर वक्त सूखता रहता है, शरीर में दुर्बलता रहती है, सिर मिथिल और दिमाग खाली हो जाता है। प्यास के

अधिक लगने से जितना जल अधिक पिया जाता है इस रोग की उतनी वृद्धि होती रहती है।

जलप्रमेह का इलाज—

१. पका हुआ केला १ छटांक, आंवले का अर्क (रस) दो तोले, शहद असली १ तोले इनको मिलाकर चाटकर ऊपर से गर्म करके ठंडा किया हुआ दूध मीठा मिश्री मिला कर पाव भर से आधा सेर तक पीना चाहिए। इस प्रकार प्रातःकाल और सायंकाल करना चाहिए।

२. चन्द्रप्रभा बटी एवं वसन्त कुसुमाकर रस (निर्माता-निर्मल आयुर्वेद संस्थान, अलीगढ़ द्वारा बनी) सेवन करें दोनों समय ४५ दिन।

३. अञ्जीर के बीज ३ मासे, अफीम १ रत्ती दोनों को मिलाकर दिन में तीन खुराक बनाकर तीन बार खाने से जलमेह में आराम होता है।

पथ्यापथ्य—अधिक जल पीना, गुड़ और शकर का अधिक खाना, स्त्रीसंग, कच्चे फलों का खाना, अधिक सोना या बैठे ही रहना जलमेही के लिए कभी अच्छा नहीं है। जौ और गेहूं की रोटी, चने, अरहर, मसूर की दाल, पके फलों का शाक, मक्खन निकला हुआ दूध, अच्छी पोष्टिक चीजें खाना फलदायक है। इस रोग वाले को खूब कसरत करना और घूमना अच्छा है। भोजन करके तत्काल सो जाना, एकान्त में बैठकर चिन्ता करना, ठंडे और पतले पदार्थों का अधिक खाना अच्छा नहीं।

मधुमेह

इस मधुमेह में पेशाब प्रायः पतला ही आता है किन्तु उसमें मिठास बना रहता है, जिससे उसके पृथ्वी पर पड़े रहने से चींटी चाटने लगती हैं। इस रोग से मनुष्य को बुढ़ापा शीघ्र आता है। शरीर में झुरियां पड़ जाती हैं और निर्वलता बढ़ती जाती है। इस रोग के रोगी बहुत कम आराम होते हैं।

मधुमेह चिकित्सा—

१. शिलाजतु बटी—शिलाजीत शुद्ध २ तोला, आंवला, १ तोला, भुनी हल्दी ३ मासे, लोहमस्म १५ मासे, मकर-ध्वज या चन्द्रोदय १॥ मासे सबको मिलाकर आंवले के रस में घोटे। फिर चने के बराबर गोली बना दें। इन गोलीयों को दिन में दो बार २ गोली से ४ गोली तक दूध से लेना चाहिए।

२. जो अन्य प्रमेहों में प्रयोग लिखे हैं वे सब मधुमेह में लाभ कर सकते हैं।

पथ्यापथ्य—केवल जौ की रोटी, जौ के सत्तू, मूंग की दाल, पुराने चावल का भात, घृत खाना चाहिए। मीठे में शहद का मीठा खाना चाहिए। भाकों में करेला विशेष अच्छा है। किसी प्रकार का व्यायाम (कसरत) और प्रतिदिन जितना हो सके चलने फिरने का अधिक अभ्यास करना चाहिए।

कौन से प्रमेही आराम नहीं हो सकते हैं ?

१. जिनको पित्ता के वीर्य दोष से जन्म के साथ ही प्रमेह हो गया है और शरीर से कृश है।

२. जिनको वात प्रमेह है और जो शरीर से निर्वल हैं।

३. जिनको प्रमेह का उपचार न करने से मधुप्रमेह हो गया है।

४. जिनके प्रमेह में उपद्रव पैदा हो गये हैं तथा फिर भी जो उसका इलाज करने में उषेक्षा करते हैं।

५. जिन कारणों से उन्हें प्रमेह हुआ है जानते हुए भी जो उन कारणों को नहीं छोड़ते। ऐसे प्रमेही आराम नहीं हो सकते हैं।

औषधि सेवन करने का परिणाम—

यदि मनुष्य अपनी पूरी ताकत में हो और रोग थोड़े ही दिन का (१-२ मास का) हो तो २१ दिन रोग दशा में और रोगमुक्ति के १५ दिन पीछे तक औषधि सेवन करना चाहिए। यदि रोग १ वर्ष का पुराना और रोगी का बल कुछ कमी पर आ गया हो तो रोग दशा में ४१ दिन तक और रोगमुक्ति पर २१ दिन तक औषधि सेवन चाहिए। यदि रोग ३ वर्ष से अधिक का हो और रोगी का बल बहुत घटकर निर्वलता आ गई हो तब कम से कम दो मास तक अथवा बल आने तक औषधि का पथ्य पूर्वक सेवन करना चाहिए। आराम होने पर भी दो मास तक पथ्य से ही रहना चाहिए क्योंकि प्रमेह रोग मयङ्कर होता है और जरा सा भी बाकी रहने पर पथ्य छोड़ने से तत्काल ही बढ़ जाता है। मधुमेह और शुक्रमेह में इन दिनों से ठीक दुगने दिनों तक औषधि और पथ्य सेवन करने चाहिए। इससे कम दिन दवा खाने से रोग का निर्मूल होना असम्भव है।

प्रमेह रोग के उपद्रव —

भोजन का न पचना, अरुचि, कै होना, निद्रा अधिक आना, खाँसी, पीनस—ये कफ प्रमेह के उपद्रवों में माने जाते हैं। शिश्नेन्द्रिय और वस्तिस्थान (मसने) में पीड़ा, अण्डकोषों का फटकर उनसे पानी, पीव सरना, बुखार, जलन, प्यास, खट्टी डकारें आना, मुच्छाँ, दस्तों का आना पित्त प्रमेहों के उपद्रव माने जाते हैं। अधोवायु का न निकलना, कण्ठ और छाती की जकड़न, बेचैनी, सर्वांग में दर्द, नींद न आना, शरीर सूखना, खाँसी श्वास वात प्रमेहों के उपद्रव होते हैं। प्रमेह की बढ़ी हुई दशा में हाथ पैरों के जोड़ में और जहाँ पर माँस अधिक है शरीर के उन्हीं भागों में दस प्रकार के फोड़े फुत्सियाँ निकलते हैं। ये भी रोग को असाध्य बनाते हैं।

घन घनहीन प्रमेह रोगी क्या करें ?

प्रमेह महाभयङ्कर रोग है, वह बिना अच्छी रसायन और बेशकीमती दवाओं के सहज में जा नहीं सकता, ऐसी दशा में घनी आदमी रुपये खर्च कर अपना इलाज कर सकते हैं परन्तु जिनके पास द्रव्य (घन) नहीं ऐसे 'घन घनहीन प्रमेह रोगी क्या करें ?' उनके लिये आयुर्वेद के प्राचीन आचार्य श्री सुश्रुत जी लिखते हैं—कि, जिसके घर में घन नहीं परिवार नहीं वह रोगी बिना छत्र (छाता) लिये नंगे पैरों चलकर केवल भिक्षा का अन्न भोजन करता हुआ देशभर में पैदल ही पर्यटन करे। रात्रि को छोड़कर दिन में किसी ग्राम में निवास न करे। इस प्रकार वह रुक्षान्न भोजन करता हुआ १ वर्ष तक बिचरे। अथवा जो घर से बाहर नहीं जा सकते वे प्रतिदिन जो की रोटी,

मूँग की दाल, कोदों, पुराने चावल का भात खाये। यदि उनका शरीर स्थूल हो तो घी दूध का कमी सेवन न करें। प्रतिदिन अपने हाथों गौ की समस्त सेवा करें और प्रति दिन यथाशक्ति खूब घूमें। इस प्रकार करने से प्रमेह रोग १ वर्ष या इससे ग्यूनाधिक दिनों में दूर हो जाता है।

प्रमेहों में देने लायक रस—

पारद भस्म, चन्द्रोदय, कांतलोह भस्म, शिलाजीत, शुद्ध रोष्य, माक्षिक भस्म, शुद्ध मैनसिल, सोंठ, मिर्च, पीपल छोटी, त्रिफला, अङ्गोल बीज, कैथ, भुनी हल्दी, ढाक का गोंद, कीकर का गोंद, तालमखाने इन सबको १-१ तोला पीसकर भृंगराज (जल माँगरा) के रस में २० बार भावना दे और सुखाले। इस औषधि को २-२ रत्ती या इससे अधिक प्रतिदिन प्रातःकाल और सायंकाल शहद में मिलाकर सेवन करने से सप्त प्रकार के प्रमेह जाते हैं। यह प्रयोग मेरे पुज्य पिता राजवैद्य सोहनलाल शर्मा जी का हजारों रोगियों पर परीक्षित प्रयोग है।

शक्तिबिन्दु—पित्त प्रमेह, मधुमेह, शरीर की दुर्बलता, निर्वलता (कमजोरी), धातु की कमी, दूषित वीर्य या सुजाक, पेशाब की जलन, पेशाब में खून जाना, शरीर का रुखापन व स्त्री-पुरुषों के गुप्त रोग के दूर करने के लिए अमोघ बज्र है, इनमें से किसी रोग की भी यह शक्ति नहीं कि जो शक्ति बिन्दु के सामने ठहर सके। यह शक्ति बिन्दु औषधि हमारी हजारों रोगियों पर परीक्षित है।

शेष इन रोगों पर बसन्तकुसुमाकर रस, चन्द्रप्रभावटी, सिद्ध चन्द्रोदय (निर्मल आयुर्वेद संस्थान, अलीगढ़ द्वारा बना) वृहत् कामसंदी न चूर्ण, कल्पतरु वटी आदि सेवन करने से अच्छा लाभ होता है।

एलोपैथी का मान मर्दन करने वाली आयुर्वेदिक शास्त्रोक्त बहुमूल्य औषधियाँ

सिद्ध मकरध्वज तं० १—शीतकाल में अनुपम शक्तिवर्धक रसायन	१० ग्राम ६५.००
सिद्ध चन्द्रोदय (स्वर्ण भस्म युक्त)—सन्निपात की अवस्था में उपयोगी एवं बलवर्धक रसायन	१५५.००
कुमार कल्याण रस—बच्चों के सुखा आदि सभी रोगों की अनुपम औषधि	२५५.००
बसन्त कुसुमाकर रस—मधुमेह रोग को जड़ से समाप्त करने वाली निरापद औषधि	१४०.००
वृ० वात चिन्तामणि रस—सभी प्रकार के वात रोग, आक्षेप अपस्मार में अद्वितीय	२००.००
रसराय रस—सभी वात व्याधियों, सभी प्रकार के शूल में अनुपम	११०.००
योगेन्द्र रस—हृद् दोर्बल्य, हृदयावसाद की अनुपम औषधि	२४०.००
स्वर्ण वसन्त मालती रस—राजयक्ष्मा, श्वास-कास नाशक बलवर्धक, आयुर्वेदिक अनुपम औषधि	१४०.००

निर्मल आयुर्वेद संस्थान, डी-७८ औद्योगिक नगर, अलीगढ़।

श्री ज्वाला आयुर्वेद भवन, अलीगढ़

द्वारा निर्मित

आयुर्वेदिक कैपसूल

एवम्

औषधियां

जो

- हानि रहित
- आशु गुणकारी
- तत्काल फलदर्शी
- विशुद्ध आयुर्वेदिक
- कुशल चिकित्सकों द्वारा

आधुनिक निर्माणशास्त्रा में निर्मित

इनका

अपनी चिकित्सा में उपयोग कर शत-प्रतिशत सफलता

प्राप्त कर यश एवं धन को प्राप्त करें। मूल्य सूची

एवं विवरण पत्रिका के लिये आज ही

लिखें। चिकित्सक, चिकित्सक एजेंसी

लेकर लाभ उठावें।

श्री ज्वाला आयुर्वेद भवन, मामू भांजा रोड, अलीगढ़

गर्भाविस्था के रोग एवं चिकित्सा

डा० जमुनादेवी शर्मा आयु० रत्न, साहित्यरत्न आयुवेदाचार्य आध्यापिका-द्वारिकावास आयु० कालेज, पाली-मारवाड़

नारी गर्भधारण करके 'गर्भिणी' संज्ञा को प्राप्त हो जाती है। यों तो स्वभाव से ही रोग सभी को आक्रान्त करते हैं वे पुरुष विशेष लिंग विशेष, जाति विशेष का भेदभाव नहीं रखते। फिर भी गर्भिणी को आक्रान्त कर साथ ही गर्भ को भी पीड़ित करते हैं। इसीलिये इन रोगों को 'गर्भिणी के रोग' नाम से सम्बोधित किया जाता है।

चिकित्सक को इन रोगों की चिकित्सा करते समय विशेष सतर्क रहना पड़ता है क्योंकि इस समय जब एक ही तीर से दो शिकार हो रहे होते हैं तब उसके सामने दो समस्याएँ सम्मुख आकर खड़ी होती हैं। पहली समस्या तो गर्भिणी की चिकित्सा रोगानुसार की जाय तथा दूसरी समस्या गर्भ को भी हानि न पहुँचाई जावे। अतः गर्भिणी के रोगों की चिकित्सा विधि भी अपना विशेष महत्त्व रखती है।

गर्भिणी को आक्रान्त करने वाले रोगों को मुख्यतः तीन श्रेणियों में विभक्त किया जा सकता है।

१. प्रथम श्रेणी में वे रोग आते हैं जो सामान्य रूप से सभी को होते हैं जैसे विषम ज्वर, श्वसनक ज्वर, मसुरिका, आन्त्रिक ज्वर, श्वास कास आदि—

२. द्वितीय विभाग में उन रोगों का समावेश किया जाता है जो गर्भ के कारण गर्भिणी में होते हैं जैसे—मलाव-रोध, शिरा कुटिलता, शाखाशोथ, वृक्कशोथ आदि।

३. तृतीय श्रेणी में वे रोग आते हैं जो गर्भकालीन विषमताजन्य होते हैं। ऐसा माना जाता है कि गर्भकाल में माता के रक्त में कुछ विष संचरित होने लगते हैं जिसके परिणामस्वरूप अनेक रोगों की उत्पत्ति होती है। जैसे गर्भजन्य अतिवमन, गर्भकालीन गम्भीर कामला आदि।

प्रथम श्रेणी के रोग

इस श्रेणी में सामान्य रोगों का समावेश किया जायेगा। रोगों का वर्णन स्थानाभाव से न करते हुये रोग

का गर्भिणी पर तथा गर्भ पर होने वाले परिणाम का वर्णन ही विशेष रूप से किया जायेगा।

विषम ज्वर—

विषम ज्वर में विशेष रूप से सर्दी लग कर ज्वर हो जाता है ज्वर कभी 100° — 105° तक पहुँच जाता है गर्भाविस्था के उत्तरकाल में विषम ज्वर होने से अपरा के रक्त स्रोतों में रक्त की अधिकता और रक्त संचार की मन्दता के कारण कीटाणुओं से उपसृष्ट रक्त कणों की भरमार रहती है। इससे रक्त प्रवाह में बाधा उत्पन्न होकर गर्भ को हानि पहुँचती है कभी-कभी गर्भपात हो जाता है और कभी गर्भ का स्वास्थ्य बिगड़ जाता है। अति तीव्र सन्ताप के कारण गर्भ की मृत्यु भी सम्भव होती है। अपरा में कहीं विदार हो तो गर्भ के पोषण में कमी के साथ विषम ज्वर के कीटाणु गर्भ में प्रवेश कर जाते हैं और गर्भपात न होने पर उत्पन्न शिशु में प्लीहावृद्धि मिलती है तथा वह शिशु पाण्डु रोग से पीड़ित तथा दुर्बल रहता है।

चिकित्सा—(१) सोंठ को बकरी के दूध में पकाकर पीने से गर्भकालीन विषम ज्वर दूर होता है।

(२) ह्वेवर, अरसु, रक्तचन्दन, बला, घान्यक, मोषा, पपेट, खस, यवासा तथा अतीस इन द्रव्यों से बना कषाय विषमज्वर और अतिसार में श्रेष्ठ है।

(३) दन्ती मरुम का प्रयोग भी श्रेष्ठ माना गया है।

एलोपैथिक चिकित्सा—एलोपैथिक चिकित्सा में विषम ज्वर की बिबनीन रामबाण औषधि मानी गई है किन्तु गर्भिणी को बिबनीन देना उचित है या नहीं इसमें भी दो मत हैं। एक मतानुसार गर्भकाल में बिबनीन न देना ही हितकर माना गया है। उन्होंने अपने मत की पुष्टि इस प्रकार की है कि बिबनीन से गर्भाशय में संकोच होता है जिससे गर्भपात का डर रहता है। किन्तु दूसरे

मतानुसार विवनीन या अटेब्रीन देना हितकर माना गया है क्योंकि गर्भाशय संकोचन कार्य विवनीन से प्रसवकाल में ही अधिक होता है प्रसव से पूर्वकाल में नहीं होता तथा इस कारण विवनीन देने से उत्तनी हानि की सम्भावना नहीं रहती जितनी कि विषम ज्वर से रोगिणी को हानि होती है। अतः निष्कर्ष यह है कि गर्भवती को विवनीन देनी चाहिये किन्तु साथ ही पोटाश ब्रोमाइड (पांच से दस ग्रैन) मिलाकर देना चाहिये। अथवा विवनीन हाईड्रोब्रोमाइड का प्रयोग करना हितकर होता है। विवनीन ४-५ ग्रैन मुख द्वारा दिन रात में ३-४ बार दिया जा सकता है।

पुण्यमेह—

इसके जीवाणु स्त्री के योनि, गर्भाशय, बीजवाहिनी, वसिष्ठ उदरावरण इत्यादि में प्रविष्ट होकर स्थानिक शोफ उत्पन्न करते हैं। इस रोग के परिणामस्वरूप यदि चिकित्सा न की जाय तो गर्भस्राव अथवा पूर्ण काल में प्रसव होने पर नवजात शिशु में नेत्राभिष्यन्द पाया जाता है।

चिकित्सा—पेनिसिलिन एवं स्ट्रेप्टो-पेनिसिलीन का प्रयोग करें। चन्दनासव, मंजिष्ठादि क्वाथ का प्रयोग भी हितकर होता है।

फिरंग—

यह भी एक संक्रामक रोग है। इसके उपसर्ग होने पर गर्मिणी को तो कष्ट होता ही है किन्तु प्रथम गर्भ का स्राव, द्वितीय गर्भ का गर्भपात तथा तृतीय गर्भ का मृत-गर्भ जन्म और चतुर्थ गर्भ से फिरंग युक्त बालक का जन्म तथा पंचम गर्भ से पूर्ण स्वस्थ बालक का जन्म होता है। इस प्रकार एक ही गर्भ पर फिरंग के कीटाणुओं का प्रभाव नहीं पड़ता बल्कि इन कीटाणुओं की गर्भनाशक शक्ति उत्तरोत्तर कम होती जाती है। और पांचवा गर्भ स्वस्थ बालक को जन्म देता है। अतः गर्मिणी में इस प्रकार की प्रसव प्रवृत्ति से फिरंग रोग का स्पष्ट अनुमान करें। चाहिये।

चिकित्सा—पेनेसिलीन का प्रयोग हितकर रहता है। आसिनिक (AS) या मिंदातु (Bismuth) या दोनों को मिलाकर संयुक्त चिकित्सा करनी चाहिये। एसिटोलासैन (M.B.) का प्रयोग गर्भकालीन फिरंग की चिकित्सा में प्रयुक्त है।

तीव्र श्वसनक ज्वर (Pneumonia)—

गर्भवती में श्वसनक ज्वर का संक्रमण होने पर अति तीव्र सन्ताप के कारण अथवा सुचारु रूप से प्राणवायु का संचारण रक्त परिभ्रमण में न होने से गर्भ को बाधा होती है। विशेषतः गर्भधारण के अन्तिम महिनों में यह बाधा अधिक होती है।

चिकित्सा—आरियोमाइसीन, टेरामाइसीन, पेनिसिलिन, ओम्नोमाइसीन आदि के इन्जेक्शन लगावें या कैपसुल, गोलिएन दें। आयुर्वेदिक चिकित्सा—त्रिभुवन कीर्तिरस, त्रैलोक्य चिन्तामणि रस, वातगजवेशरी रस दें। कफ को निकालने के लिये शृंगभस्म, हरताल गोदन्ती भस्म तथा रस सिन्दूर दें।

मसूरिका (Small Pox)—

गर्भावस्था में यह रोग रक्तस्रावी प्रकार का होता है फलतः गर्भस्राव का भय रहता है। रोग काल में यदि बच्चा उत्पन्न हो जाय तो यह बालक रोगग्रस्त होता है अथवा जन्म के बाद तत्काल रोग से पीड़ित हो जाता है। कई बार गर्भवती के पीड़ित होने पर कुछ महिनों बाद उत्पन्न होने वाले शिशु के शरीर पर मसूरिका के दाग मिलते हैं तथा वे मसूरिका के लिये क्षम हो जाते हैं।

चिकित्सा—प्रवालपिष्टी, त्रिभुवन कीर्तिरस का प्रयोग करें। हल्दी तथा सुपारी को घिसकर उसके पानी के साथ द्राही बटी दें। रुद्राक्ष को घिसकर उसका पानी दें।

विसर्प—

गर्भकाल में इसके द्वारा अपत्य मार्ग के उपसृष्ट होने से अपूर्ण प्रसव का भय रहता है। यदि किसी संयोगवश गर्भकाल में इसका संक्रमण हो जाय तो भ्रम को इस रोग से बचाने का पूर्ण प्रयत्न करना चाहिये। इसके लिये किसी भी जीवाणुनाशक घोल में भीगी हुई कदलिका रखकर उसकी रक्षा करनी चाहिये।

राजयक्ष्मा—

प्रथम गर्भावस्था के पश्चात् प्रायः स्त्री की रोग निवारक क्षमता बहुत कम हो जाती है। तथा वह आने वाले गर्भकाल में दिनोंदिन कमजोर रोगग्रस्त हो जाती है। राजयक्ष्मा से पीड़ित हो जाने पर वह अक्सर हल्कापन महसूस करती है।

चिकित्सा—प्रसव काल को यथासम्भव छोटा करने का प्रयत्न करना चाहिये। तथा पूर्ण गर्भकाल पर्यन्त फुफुसों की अवस्था पर पूर्ण ध्यान रखना चाहिये। प्रायः गर्भिणी स्वस्थ एवं रोगरहित सन्तान को जन्म देती है। किन्तु जन्म के पश्चात् उस बालक को माता से अलग रखना अत्यन्त आवश्यक है तथा स्तनपान नहीं करवाना चाहिये। अन्य चिकित्सा राजयक्ष्मा की तरह ही करें।

अतिसार और प्रवाहिका—

गर्भिणी को अतिसार तथा प्रवाहिका होने पर पूर्ण गर्भकाल में गर्भ के नीचे आने की पूर्ण सम्भावना रहती है और साथ ही गर्भपात हो जाता है। तथा पश्चात् सुतिका काल में भी संग्रहणी होने का डर रहता है।

चिकित्सा—(१) लोघ्र, मोचरस, पाठा, चन्दन, कुटज, अतीस का प्रयोग उत्तम रहता है। (२) अश्वत्थादि गण की औषधियाँ (घातकी, कुसुम, श्योनाक, मुलेठी, बिल्वगिरी, लोघ्र, पलाश, तून, पद्म केशर) का चूर्ण या दवाय हितकर है। (३) आम और जामुन की त्वचा का दवाय घास्यलाजा (लावा) के सत्तू के साथ खाना हितकर है। (४) सोंठ और बेल के कपाय को जौ के सत्तू के साथ मिलाकर खाना चाहिये। यह योग वमन में भी हितकर है।

मन्दाग्नि—

जैसे गर्भ उदर गुहा में वृद्धि को प्राप्त होता है कई स्त्रियों को मन्दाग्नि होने लगती है जिससे गर्भ तथा गर्भिणी का स्वास्थ्य कमजोर होने लगता है क्योंकि इस समय स्त्री के लिये सुपाच्य और पौष्टिक भोजन की आवश्यकता रहती है। ऐसे समय में अन्न की रुचि न होना और उसका अच्छी प्रकार न पचना श्रेयकर नहीं।

चिकित्सा—अजमोद, सोंठ, जीरा, पिप्पली समान भाग लेकर गुड़ और मधु से सेवन करने से गर्भिणी की मन्दाग्नि दूर होती है।

Yeast Tab. (यीस्ट टेब्लेट) भोजन के बीच में खेना भी हितकर है।

द्वितीय श्रेणी के रोग

इस श्रेणी में उन रोगों का समावेश होता है जो गर्भ के कारण होते हैं—

मलावरोध—

गर्भ धारण होने पर गर्भाशय की उत्तरोत्तर वृद्धि होती है और वह क्रमशः उदर गुहा में वृद्धि को प्राप्त करता है। उसके भार में भी वृद्धि होती है। इस गर्भ का भार आन्त्रों पर पड़ता है तथा विशेष कर मलाशय पर क्योंकि वह गर्भाशय के ठीक पीछे रहता है। इस दबाव तथा भार के कारण गर्भिणी को मलावरोध अधिक रहता है।

चिकित्सा—गर्भिणी को तीव्र विरेचन देना हानिकर सिद्ध होता है। इसके लिये मृदु, मधुर और सौम्य रेचनों का प्रयोग उत्तम होता है। गुलकण्ठ, मुनक्का, यण्टादि चूर्ण का प्रयोग मलावरोध को दूर करने के लिये करें।

मुलेठी और शक्कर समभाग में मिलाकर आधे तोले की मात्रा में दूध के साथ सोते समय लें।

शिराकुटिलता—

गर्भित गर्भाशय के भार के परिणामस्वरूप भग तथा अधोशाखाओं की शिरायें फूल जाती तथा विस्तृत हो जाती हैं। गर्भविस्था के पूर्व भी यह विकृति जिस स्थान में उपस्थित रहती है तो प्रसव काल में शिरा के विदार का भय रहता है। तथा भग का रक्तार्बुद हो जाने के कारण प्रसव में भी कठिनाई उत्पन्न हो जाने का डर रहता है।

चिकित्सा—Elastic Bandage, पूर्ण विश्राम, समतल आसन तथा 'सोडियम मुरेट' के अष्टमंरण से चिकित्सा करनी चाहिए।

अर्श—

आम गर्भ के पतन, विषम प्रसूति तथा बड़े हुए गर्भ के भार से कुपित हुई अपान वायु मल को गुहा की बलियों में रोककर यह रोग उत्पन्न करती है। प्रसव होने पर यह बाधा स्वतः ही दूर हो जाती है।

चिकित्सा—मृदु मधुर वातानुलोमक और मृदु रेचनों से मलावरोध को दूर करते रहना चाहिए। औषधि चिकित्सा ही श्रेष्ठ है। अग्नि तथा सार कम निषिद्ध है। ताप्यादि लौह, अर्श कुठार रस, अर्शोहर वटी, निर्योदित रस का मधु के साथ प्रयोग करें।

शाखाशोथ—

यदि शोथ अधः शाखाओं (पेरों) पर ही सीमित रहे तो इसे गर्भित गर्भाशय के भारस्वरूप ही मानना चाहिए।

तथा इस प्रकार की शोथ स्वतः ही प्रसव के बाद उतर जाती है परन्तु गर्भिणी के शोथ की उपेक्षा करना बड़ा अहितकर होता है। कभी-कभी यह सूजन मुख तथा मग भर भी आ जाती है। यह अधिकतर वृक्क शोथ तथा आत्म विष संचार जन्य उत्पन्न होती है। ऐसी अवस्था में मूत्र की परीक्षा कर कारणानुसार चिकित्सा करें।

चिकित्सा—चन्दन, गुलेठी, खस, नागपुष्पी, तिक्त मेषशृंगी, मजीठ, मदार का फूल तथा पुनर्नवा से बना लेप का बाह्य प्रयोग करना चाहिए। यवक्षार, श्वेत पपंटी, पुनर्नवादि चूर्ण दें।

तीसरी भेणी के रोग

गर्भकालीन विषमताजम्ब रोग
(Toxaemia of Pregnancy)

इस समुदाय में ऐसे रोगों की गणना की जाती है जिनकी उत्पत्ति गर्भकालीन विषों से होती है। इस समुदाय में पाँच रोग मुख्य होते हैं—

(१) अतिवमन (२) गर्भकालीन दुष्ट कामला (३) गर्भकालीन शुक्लमेह (४) पूर्ण गर्भक्षेप (५) गर्भक्षेप।
१. गर्भ जम्ब अतिवमन (Hyperemesis Gravidorum) गर्भावस्था में वमन दो प्रकार का होता है—

(अ) मानसिक (ब) विषज।

(अ) मानसिक—गर्भवती स्त्रियों में प्रातः ग्लानि के रूप में वमन का होता स्वाभाविक है। तथा साथ ही यदि गर्भिणी की प्रकृति वातिक हुई तो यह वमन बृहत् रूप ले सकती है। साथ ही खट्टी डकार आना, मिचली आना, तथा वमन होना, आदि कई प्रकार के लक्षण प्राप्त होते हैं। किन्तु गर्भिणी अत्यन्त अस्वस्थ नहीं जान पड़ती। उसके शरीर का तापक्रम तथा नाड़ी सामान्य रहती है। जिह्वा साफ रहती है। जब वमन अत्यधिक होने लगती है तो शरीर में जलाश की कमी हो जाती है जिससे मूत्र अल्प मात्रा में निकलता है। इसका विशिष्ट घनत्व बढ़ जाता है। मूत्र में शुक्ल, पित्त या उसके निर्मोक को उपस्थिति नहीं रहती परन्तु इसके निजी मेद के अपूर्ण पचन के कारण मूत्र में 'एसीटोन' मिलता है। बीरे-धीरे गर्भिणी का स्वास्थ्य गिरता चलता है और वह दुर्बल हो जाती है और बिना अन्न के रहने पर तथा अत्यन्त वमन के उसकी दशा चिन्ताजनक हो जाती है।

कई बार इस प्रकार का वमन उन गर्भिणियों में अधिक होता है जिनमें सन्तान की इच्छा न हो या सन्तानोत्पत्ति का भय हो या अनुचित गर्भाधान की लज्जा हो। इन कारणों से उनके अवचेतन मन में सन्तान विरोधी भावनाएँ उथल पुथल मचाये रहती हैं। इसके दूरीकरण के प्रतीक रूप में यह मानसिक अतिवमन होता है। कई बार श्लोणिगत अंगों में अस्वाभाविकता आने पर भी इस प्रकार का वमन होता है।

(ब) विषज—यह रोग अप्रजाता तथा प्रजाता दोनों प्रकार की स्त्रियों में होता है तथा गर्भावस्था के किसी भी समय में हो सकता है। अधिकतर गर्भ के प्रारम्भिक मासों में अधिक होता है। प्रारम्भ में जब तक अवस्था सौम्य रहती है तब तक मानसिक वमन के सदृश लक्षण प्राप्त होते हैं। अवस्था अत्यधिक तीव्र होने पर गर्भिणी अत्यधिक क्षीण विषाक्त, त्वचा सूखी और गन्धी, आँखें पीली और घंसी हुई, जिह्वा सूखी और मलावृत, नेत्र कामला युक्त, श्वास दुर्गन्धित और एसीटोन सदृश गन्धयुक्त, मूत्र अत्यल्प और उसमें शुक्ति, पित्त निर्मोक, 'एसीटोन' 'डाइएसिटिक एसिड' आदि मिलते हैं तथा कभी-कभी ल्यूसीन और द्यूरोसीन युक्त होती है। स्थिति की गम्भीरता के अनुसार नाड़ी की गति तीव्र हो जाती है और तापक्रम बढ़ सकता है। वमन का रंग भूरा या काफी के रंग का हो जाता है। अन्त में सध्यासावस्था उत्पन्न होकर मृत्यु हो जाती है।

साध्यासाध्यता—रोग का पूर्ण रूप से निदान होने पर तथा साथ ही समय पर चिकित्सा होने पर रोग साध्य माना जाता है किन्तु रोग की उपेक्षा होने पर रोग की तीव्रता में रोग असाध्य हो जाता है और मृत्यु अवश्य-म्भावी होती है।

चिकित्सा—रुग्णा को प्रातःकाल बिस्तर से उठने के तत्काल बाद थोड़ा गर्म दूध, चाय बिस्कुट या पाव रोटी देने से प्रातः ग्लानि दूर हो जाती है। गर्भवती को पूर्ण खंघन नहीं करवाना चाहिये। यदि वमन का रूप प्रातः ग्लानि के स्वरूप का न होकर मानसिक वमन के स्वरूप का हो तो योषापस्मारवत चिकित्सा करनी चाहिये। इसके लिए निम्न साधन बरतने चाहिए—

(१) पृथक् करण—रोगिणी को अपने घर से हटा कर तथा अतिप्रिय स्वजनों से दूर किसी मातृमन्दिर या

चिकित्सालय में भेज देना चाहिए। जिससे वायु परिवर्तन होने से वमन बन्द हो जाती है।

(२) दयाद्रु उपदेश—रोगी को मीठे वचनों से उपदेश देना चाहिए कि यह तो सुसाध्य रोग है। अबसर प्रत्येक गर्भिणी में कम अधिक मात्रा में मिलता है तुम निश्चय ही ठीक हो जाओगी। इस प्रकार उसे मधुर वचनों से सात्वता देनी हितकर होती है। जिससे रोगिणी अपने रोग को हल्का महसूस करे।

(३) भोजन—रूग्णा को द्रव न देकर ठोस पदार्थ खाने को देना चाहिए। अत्यन्त अल्प मात्रा में कई बार देना चाहिए।

(४) औषधि चिकित्सा—कामदुधा रस, वमन कुठार रस, गर्भपाल रस देना उचित है। घृत, गुड़, मांस, कल्याण घृत, श्यूषण घृत, जीवनीय घृत का प्रयोग करना चाहिए। हरीतकी सिद्ध क्षीर तथा लेह का प्रयोग भी प्रसक्त छदि को शान्त करता है।

कुस्तुम्बर का कल्क चावल के घोवन और मिश्री के साथ पीने से वमन शान्त होती है।

अनारदाने से सिद्ध किया स्नेह और लवणयुक्त मूंग यूष पथ्य है।

त्यूमिनाख १/२ ग्रेन अथवा मार्फिया १/८ ग्रेन दिन में दो या तीन बार देना चाहिए। जीवतिक्ति B₆ के योग (PyroGouin or Adermin) का प्रयोग भी लाभप्रद होता है। संशमन के लिए ब्रोमाइड्स का भी प्रयोग किया जाता है। यदि स्थिति काबू में न आवे तो मुख द्वारा भोजन बन्द कर गुदा द्वारा पोषण पहुंचाना चाहिए।

सिरा मार्ग से स्रवण विलयन में ५% द्राक्षाशर्करा का घोल बनाकर निरन्तर विधि से चढ़ाना चाहिए। मलाबरोध को दूर करने के लिए मुख से रेचक द्रव्य न देकर कोष्ठशुद्धि साबुन के पानी की बस्ति द्वारा करनी चाहिए। मेदस पदार्थों को नहीं देना चाहिए। दूध देना अपथ्य है।

शल्य चिकित्सा—यदि उपरोक्त चिकित्सा तथा आहार-विहार से भी रुग्णा की हालत चिन्ताजनक बनी रहे तो शल्य क्रिया कृत्रिम गर्भसाव या गर्भपात करवा देना चाहिए। जिससे सभी उपद्रव शांत हो जावें।

२. गर्भकालीन गम्भीर कामला

(Icterus gravis gravidorum)—

यह अत्यन्त विरलता से पाया जाने वाला रोग है। यह विकार प्रायः गर्भकाल के अन्तिम मासों में मिलता है।

लक्षण—तीव्र उदरशूल, शिरःशूल, अतिवमन, गाढ़ी कामला रक्तमिश्रित वमन, मूत्राल्पता, मूत्र में शुक्ल, विविध प्रकार के निर्मोक आदि मिलते हैं। रोग का अचानक आक्रमण होता है। शीघ्रता से रोगी सन्यास की अवस्था को प्राप्त करता है और मृत्यु को प्राप्त हो जाता है।

चिकित्सा—यह रोग असाध्य होता है। गर्भिणी की प्राण रक्षा के निमित्त गर्भपात करवाना चाहिये। श्लुकोज प्रतिदिन १०० c.c. सिरा मार्ग से देना चाहिए। पिप्पली अंकोट मूल, घोड़े की लीद का रस, भैंस का दूध और दही मिलाकर देना चाहिए।

३. शुक्लिमेह और गर्भावस्था (Albuminuria)—

शुक्लिमेह एक लक्षण मात्र है रोग नहीं। गर्भिणी के मूत्र में शुक्ल का पाया जाना कोई बड़ा विकार नहीं है। ५% के प्रमाण में प्रायः सभी गर्भिणियों में मिलता है। सब गर्भिणियों में यह उपद्रव का रूप धारण नहीं करता किन्तु कई रुग्णाओं में आक्षेप का रूप धारण कर लेता है। शुक्लिमेह को दो प्रधान भेदों में विभक्त किया जा सकता है—

(१) गर्भ विषजन्य शुक्लिमेह—(क) गर्भकालीन शुक्लिमेह (ख) पूर्व गर्भाक्षेपक (ग) गर्भाक्षेपक (घ) पुनरावर्तित शुक्लिमेह (ङ) विषज अतिवमन की तीव्रावस्था।

(२) गर्भकालीन शुक्लिमेह—(क) योनिमार्ग से संक्रमित होकर (ख) तीव्र तथा जीर्ण वृक्कशोथ (ग) उच्च रक्त निपीडजन्य व्याधियां (घ) बस्ति तथा वृक्क शोथ (ङ) हृद्रोग (Morbus cordis)।

१. (क) गर्भकालीन शुक्लिमेह—लक्षण—यह अधिकतर प्रथम गर्भास्त्रियों में मिलता है। यदि उनमें यमस्य गर्भ या गर्भोदक की बहुलता हो तो अपेक्षाकृत अधिक पाया जाता है। प्रायः यह विकार गर्भावस्था के अन्तिम दो मासों में मिलता है। रोग का आक्रमण गुप्त रीति से होता है। इसकी प्रगति बड़ी मन्द होती है। अधिकतर रोगियों में जब तक प्रसव नहीं समाप्त हो जाता तब तक चलता रहता है। यदि रोग कई सप्ताहों तक चलता रहे तो

बच्चे की मृत्यु गर्भाशय के भीतर हो जाती है। निम्नलिखित प्रधान लक्षण मिलते हैं—

(१) पादज शोफ—सूजन पहले पैरों में प्रारम्भ होती है बाद में फैलकर हाथ, मुख, उदर और क्वचित् भग तक व्याप्त हो जाती है।

(२) मार की अस्वाभाविक वृद्धि—सापान्य गर्भा-वस्था में गर्भिणी की मार वृद्धि १ या १। किलो प्रतिमास के हिसाब से होती है किन्तु यह अस्वाभाविक रूप से बढ़े हो गुप्त शोथ की सूचना देती है। मार वृद्धि से जल निरोध की सम्भावना रहती है। परिणामस्वरूप शोथ के प्रत्यक्ष होने के पूर्व ही उसका ज्ञान इस अस्वाभाविक वृद्धि से हो जाता है।

(३) मूत्रगत परिवर्तन—प्रारम्भ में अल्प मात्रा में शुक्ल उपस्थित रहती हैं पश्चात् वह बढ़कर १००० में ५ भाग तक हो सकती है। मूत्र में प्यु तथा रक्त की उपस्थिति तो नहीं मिलती परन्तु कणमय निर्मोक (Granular Cast) मिल सकते हैं। मत्र त्याग की मात्रा कम हो जाती है और चौबीस घण्टों में कुल ६०० C.C. तक मूत्र निकले तो रोग की भयंकरता की सूचना देती है।

(४) रक्त निपीड—सांकोचिक मार १४० मिमी० पारब से अधिक हो अथवा विस्फारिक निपीड ८५ मिमी० पारब के ऊपर हो तो वैकारिक समझना चाहिए।

(५) शिरःशूल—शोफ के समान यह लक्षण भी एक सामान्य लक्षण है और अधिक दिनों तक चलता है। प्रारम्भ में यह शूल कम और बाद में दिनोंदिन बढ़ता है कौड़ी प्रदेश में पीड़ा, वमन तथा नेत्रगत विकार भी इसमें मिलते हैं।

चिकित्सा—शुक्लिमेह की चिकित्सा में तीन उद्देश्य हैं—

- (१) गर्भाक्षेपक उपस्थित न होने देना।
- (२) वृक्क को स्थायी विकृति होने से बचाना।
- (३) गर्भाशयगत गर्भ की मृत्यु को रोकना।

इन उद्देश्यों की पूर्ति के लिये गर्भाश्वत कराना ही अतिश्रेष्ठ चिकित्सा है।

पूर्ण विश्राम—परमावश्यक है। रोगी को शय्या पर लेटाकर रखें। उसका चलना, फिरना, उठना, बैठना बन्द कर दें। निद्रा के अभाव को कम करने के लिए ल्यूमि-

नाल १ ग्रेन की मात्रा में या क्लोरल हाइड्रेट २० ग्रेन की मात्रा में रोगी को देना चाहिए।

मृदुरेचक—पेट को साफ रखने के लिए मृदुरेचकों को देना चाहिए।

आहार—शुक्लिमेह पीड़ित गर्भिणी का आहार नियमित रखना चाहिए। हरे शाक-सब्जी गोभी आदि के प्रयोग से रुग्णा को लोह की मात्रा मिलती है। अतः इनका प्रयोग अधिक मात्रा में करना चाहिए। रुग्णा में शोथ न हो तो जल पर्याप्त मात्रा में सेवन करना चाहिए परन्तु शोथ होने की अवस्था में लवण और जल का निषेध करना चाहिए। यदि रोगिणी के लक्षणों में सुधार मालूम पड़े तो चिकित्सा करते हुए रोगी की रक्षा करनी चाहिए। किन्तु स्थिति में सुधार न होने पर लक्षणों की वृद्धि होने पर गर्भान्ति करा देना चाहिए।

(ख) पूर्व गर्भाक्षेप (Pre-eclampsia)—

लक्षण—इस रोग का आक्रमण शुक्लिमेह से अधिक तीव्र तथा अचानक होता है। रोग की वृद्धि भी शीघ्रता से होती है। रोगी में अचानक भाराधिक्य होकर पूर्ण शरीर पर शोफ हो जाती है। मूत्र की मात्रा अल्प हो जाती है। शुक्लिमेह की मात्रा ५:१००० से बढ़कर ५-२० प्रति १००० भाग तक हो जाती है। तीव्रावस्था में रक्तकायाणु तथा अपिस्तर निर्मोक भी मिलते हैं। रक्त निपीड (Blood Pressure) शीघ्रता से तीव्र हो जाता है जिसमें सांकोचिक १४० m.m. और विस्फारिक ११० m.m. तक हो सकता है। सलाट में तीव्र पीड़ा होती है। रुग्णा दृष्टिमांघ, द्विधा दृष्टि, आंखों के आगे चिनगारी देखना, कभी-कभी अन्धता की तकलीफ भी बतलाती है। कौड़ी प्रदेश में पीड़ा, हृल्लास, वमन आदि लक्षण मिलते हैं जो यकृत के विनाश के द्योतक हैं।

चिकित्सा—प्रारम्भ में यदि रक्त निपीड तथा मूत्र में शुक्ल की उपस्थिति ज्ञात हो तो शुक्लिमेह में वर्णित चिकित्सा प्रकार ही रखें।

(ग) गर्भाक्षेपक (Eclampsia)—

पूर्व गर्भाक्षेपक की बड़ी हुई अवस्था है। इसमें मूर्च्छा या बेहोशी के वेग आते हैं। मूर्च्छा के वेग यदि प्रसव प्रारम्भ के पूर्व हो तो प्राक् प्रसव आक्षेपक, प्रसव काल में हों तो प्रसव कालीन आक्षेपक और यदि अन्त में हो तो प्रसवोत्तर

आक्षेपक कहलाते हैं। सामान्यतया यह रोग गर्भावस्था के मध्य में प्रारम्भ होता है और प्रसवकाल के समीप आने पर अधिक तीव्र हो जाता है। अधिकतर यह रोग यमल गर्भ, गर्भोदक वृद्धि, मांस गर्भ (Hydatid from mole) की उपस्थिति में पायी जाती है।

लक्षण—कई बार रोग आक्रमण गुप्त रीति से होता है। रोग की उत्पत्ति के सूचक शोथ, उच्च रक्त निपीड आदि लक्षण उपस्थित नहीं होते। अचानक सूत्राघात होता है और प्रबल आक्षेप आने शुरू हो जाते हैं। कई रुग्णाओं में रोगारम्भ के पूर्व अर्न्तविष संचार के कुछ चिह्न मिलते हैं इस प्रकार पूर्वरूप कुछ सप्ताह या दिनों का मिलता है। कई बार तो पूर्व गर्भक्षेपक के लक्षण सभी उपस्थिति मिलते हैं। इस प्रकार शिरःशूल तीव्र अथवा अनवरत मिलता है। शोथ तीव्रता के साथ बढ़ता है। दृष्टि शक्ति क्रमशः कम होती जाती है। अन्धता की प्राप्ति भी हो जाती है। तीव्र कौडी प्रदेश की पीड़ा तथा वसन त्यक्त मूत्र की अल्पता, मूत्र में शुक्लमेह की मात्रा में वृद्धि, सूत्रावसाद, मूत्र में निर्मोक्त का पिया जाना, रक्त निपीड की वृद्धि और ज्वर आदि लक्षण मिलते हैं।

आक्षेप के आवेग की अवस्थायें—ये आवेग अपस्मार सदृश होते हैं। रोगी आवेग भर बेहोश रहता है। इस प्रकार मूर्च्छा होकर उसमें आक्षेप आने लगते हैं उनका क्रम निम्न प्रकार का होता है—

(१) पूर्व ग्रह की अवस्था (Premmatory Stage)—नियमित आक्षेप का आरम्भ मुख पर होता है, रुग्णा अपनी आंखों को घूमाने लगती है, हाथ और मुख पर खिचाव होकर झटके से आने लगते हैं। १५-२० सैकिण्ड तक यह अवस्था रहती है।

(२) निरन्तर संकोच की अवस्था (Tonic contraction)—मांसपेशियों के संकोच के कारण रोगी का शरीर फड़ा पड़ जाता है। वक्ष की पेशियों और मूला प्राचीरा के संकोचन के कारण रोगी का चेहरा काला पड़ जाता है, दांतों के दबाव से जीभ भी कट सकती है। यह अवस्था १/३ मिनट रहकर सान्तर संकोच में परिवर्तित हो जाती है।

(३) सान्तर संकोच की अवस्था—इस अवस्था में संकुचित पेशियां पुनः शिथिल और पुनः संकुचित होती

रहती हैं। जबड़े की पेशियां भी संकोच और शिथिल कार्य में भाग लेती हैं जिससे रुग्णा की जीभ कट जाती है। रोगी के मुख से रक्त मिश्रित झाग निकलता है। मुख रक्ताधिक्य युक्त, श्वसन ध्वंश युक्त और रुग्णा संज्ञाहीन पड़ी रहती है। यह अवस्था १/२ मिनट से २ मिनट तक रहती है। इसके बाद रुग्णा सन्ध्यास की अवस्था में आ जाती है।

(४) सन्ध्यास की अवस्था—आक्षेप के बाद आ जाती है और कई घण्टों तक चल सकती है उसके बाद रुग्णा होश में आती है। कई बार यह अवस्था अल्पकाल तक ही रहती है और तब तक दूसरा आवेग शुरू हो जाता है।

रोगक्रम के अनुसार साध्यासाध्यता—यदि रोग मृदु स्वरूप का हो तो किसी प्रकार का भय नहीं रहता। यदि रोगी की विधिवत चिकित्सा की जाय तो भी रोग साध्य होता है। आक्षेप की अवस्था में आक्षेपों के बार-बार आते रहने से गर्भवती की चेष्टा विकृत हो जाती है। चेहरा काला पड़ जाता है नाड़ी की गति तीव्र रहती है। तापक्रम बढ़ जाता है रक्त निपीड बहुत उच्च हो जाता है। हृदय की पेशियों पर बल पड़ने से वे दुर्बल हो जाती हैं। यदि आक्षेपों के कारण मस्तिष्कगत रक्तस्राव हो जाय तो वह स्थायी सन्ध्यास की अवस्था को प्राप्त कर लेती है और इसी अवस्था में मर जाती है।

प्रसव के पूर्व आक्षेप आने के परिणामस्वरूप प्रसव शीघ्रता से प्रारम्भ हो जाता है। तथा या तो रुग्णा बालक के जन्म के पहले ही मर जाती है अथवा बालक के जन्म होने से स्वस्थ हो जाती है।

प्रसव के मध्य में यदि आक्षेप का दौरा हुआ हो तो गर्भाशय का आंकुचन अधिक प्रबल होने लगता है। फलतः प्रसव आसानी से जल्दी हो जाता है।

चिकित्सा—गर्भ विष के परिणामस्वरूप ये आक्षेप आते हैं इसलिए कारण को दूर करने के लिए गर्भान्त करना अत्युत्तम उपचार है।

आन्त्रगत विषों के निकालने के लिए तीव्र विरेचक अथवा उच्च बस्ति के द्वारा वृहदन्त्र का शोधन करके उन विषों को निकालने का प्रयत्न करना चाहिए।

बाह्य उत्तेजनाओं से रक्षा करने के लिए रोगी शान्त और निवाताप कमरे में रखना चाहिए। किसी भी प्रकार का शोरगुल, जूते खड़ाऊ आदि की आवाज उसके

कानों तक नहीं पहुंचनी चाहिये। कमरे के दरवाजों, खिड़कियों पर पर्दे लगाने चाहिए।

निसंज्ञावस्था में रुग्णा का मूत्र त्याग अपने आप हो जाता है। इसलिए प्रति चार घण्टे पर मूत्र नाड़ी (कैथीटर) से मूत्राशय को खाली कर देना चाहिए।

आक्षेपों को रोकने के लिए अहिफेन (Morphia) तथा 'क्लोरोल हाइड्रेटस' का बड़ी मात्रा में प्रयोग करना चाहिये। चिकित्सा प्रारम्भ के समय Morphia १/४ ग्रेन अन्तस्त्वक् भेदन के द्वारा और क्लोरोल हाइड्रेट ६० ग्रेन की मात्रा में गुदा द्वारा देना चाहिए। तथा यह क्रिया हर तीसरे घण्टे दोहरानी चाहिए। रोगी चेतनावस्था में जब तक मुख द्वारा पानी पीने में असमर्थ हो तो ग्लूकोज पानी में घोलकर देना चाहिए। तथा जब वह निगलने में असमर्थ हो तो गुदा द्वारा, शिरा द्वारा ग्लूकोज दें।

मूत्रसाव—

प्रचुर मात्रा में पीने के लिए द्रव देने से लाभ होता है। यदि मुख द्वारा सम्भव न हो तो सिरा मार्ग से ५% ग्लूकोज लवण विलयन में बने घोल को देना चाहिए। तथा शीघ्र लाभ के लिए ३०% बने ग्लूकोज का ५० मि०लि० की मात्रा में सिरा द्वारा देना चाहिए।

अत्युष्ण तापक्रम—

शीतोपचार से चिकित्सा करनी चाहिए। रोगी के सिर पर ठण्डे जल की पट्टी या बर्फ की थैली रखकर पूरे शरीर को ठण्डे जल में भीगे तोलिया से शरीर का प्रमा-जंन करके ताप का नियमन किया जा सकता है।

शोक—

जल की मात्रा कम कर देनी चाहिए। मेगसलफ (सामुद्र चन) २ औंस की मात्रा में देकर रोगी का रेंचन कराना उत्तम है। मग पर शोथ की अधिकता हो तो प्रच्छान (Puncture) करके शोथ को कम करना चाहिए। रोगी को गरम रखना चाहिए। परन्तु उसके शरीर से अधिक स्वेद न निकलने देना चाहिए।

हृदयावसाव तथा नीलिमा—

सिरावेध इस दशा में भी उत्तम है। प्राणवायु (Oxygen) सुंघने को देनी चाहिए। 'कोरामिन' १ मि०ग्रि० की मात्रा प्रति दो घण्टे पर देते रहना चाहिए।

आयुर्वेद में वर्णित कुछ रोग तथा सामान्य योग

कण्डु, विदाह, किक्किस—

गर्भ के द्वारा ऊपर की ओर पीड़ित वातादि दोष गर्भकाल में हृदय में आश्रित होकर गर्भवती में कण्डु (खुजली), विदाह (जलन) पैदा करते हैं जिससे किक्किस की उत्पत्ति होती है। किक्किस की सरल व्याख्या पेट पर धारियां पड़ना है।

चिकित्सा—मधुर औषधियों से सिद्ध घृत को एक तोले की मात्रा में लेकर बेर (कोल) के कषाय के अनुपात के साथ पीने के लिए दें। गर्भवती के उदर और छाती (स्तन) के ऊपर चन्दन और कमलनाल के कल्क या चूर्ण का मर्दन करें। कुटज, तुलसी बीज, मोथा, हल्दी इनके कल्क से मर्दन करें। मालती पुष्प तथा मधुयुष्ठी क्वाथ से परिसिचन हितकर है।

रसौषधियों के योग—

गर्भ विनोद रस—जावित्री, लवङ्ग, त्रिकटु प्रत्येक ३ तोला, शुद्ध हिगुल ४ तोला, स्वर्ण माक्षिक भस्म २ तोला, इन द्रव्यों को जल से पीसकर २ रत्ती की गोली बनाकर गर्भिणी के सभी रोगों में प्रयोग करना हितकर है।

गर्भ चिन्तामणि रस—पारद, रजत, लौह भस्म, प्रत्येक एक तोला, अभ्रक भस्म २ तोला, कर्पूर, बंग भस्म, ताम्र भस्म, जायफल, जावित्री, गोक्षुर, शतावरी, बला, अतिवला इन सभी द्रव्यों को एक-एक तोला लेकर जल के साथ पीस बटी बनाकर रख लेना चाहिए। गर्भकालीन जीर्ण ज्वरों तथा सन्निपात में हितकर है।

बृहत् गर्भ चिन्तामणि रस—शुद्ध पारद, शुद्ध गन्धक, सुवर्ण, रजत, लोह, सुवर्ण माक्षिक भस्म, शुद्ध हरताल, बंग भस्म, अभ्रक भस्म सभी को समान भाग में लेकर ब्राह्मी, अहूसा, भृङ्गराज, पित्त पापड़ा तथा दशमूल आदि द्रव्यों के पृथक्-पृथक् कषायों से १-१ भावना देकर २ रत्ती की गोलियां बना लें। गर्भिणी के सभी रोगों में प्रयुक्त करें।

गर्भपाल रस—शुद्ध सिंगरफ, नागभस्म, बज्रभस्म, त्रिजात (दालचीनी, तेजपात, इलायची) त्रिकटु (सोंठ, मिर्च, पीपर) घनियाँ, स्याह जीरा, चव्य, मुनक्का, देवदार ये सभी औषधियां समभाग १-१ तोला लेकर ६ माशा लोह भस्म डालकर सफेद अपराजिता (कोयला) के रस में ७ दिन तक खरल करके मटर के समान गोलियां बना लें और गर्भिणी के रोगों में प्रयोग करें।

श्री ज्वाला आयुर्वेद भवन के

विशुद्ध आयुर्वेदिक कैपसूल

हम वर्ष १९७४ से विशुद्ध आयुर्वेदिक कैपसूल निर्माण कर रहे हैं, हमारे कैपसूल चिकित्सक समाज में अत्यधिक पसन्द किये गये हैं। मांग बिना धुआँधार प्रचार के ही बराबर बढ़ रही है। हमारे कैपसूल की मांग से प्रभावित होकर अन्य अनेक फार्मसियों ने कैपसूल बनाने प्रारम्भ कर दिए हैं। हमारी कोई सहयोगी संस्था नहीं अस्तु निवेदन है कि प्रभावी कैपसूल प्राप्त करने के लिए आखिर मेजते समय पता सावधानी से श्री ज्वाला आयुर्वेद भवन, मामू मौजा रोड, अलीगढ़ ही लिखें।

क्र.सं.	नाम दवा	५०० कैप०	१०० कैप०	५० कैप०
१	अतिसारान्तक	१०६.००	२३.५०	१२.५०
२	अर्शान्तक	८४.००	१८.५०	१०.००
३	कैल्सी	७४.००	१६.५०	८.००
४	कैल्सी लोह	८६.००	१६.५०	१०.५०
५	कृमिघातिनी	११४.००	२४.५०	१३.००
६	कलीवारि	१६४.००	४०.५०	२१.००
७	गोनारि	१३४.००	२८.५०	१५.००
८	गैसोना	११४.००	२४.५०	१३.००
९	चेचकावरोधक	८४.००	१८.५०	१०.००
१०	ज्वरान्तक	१२६.००	२७.५०	१४.५०
११	पाण्डुनील	११४.००	२४.५०	१३.००
१२	बिबधहारी	१०६.००	२३.५०	१२.५०
१३	वातरोगहर	२६५.००	६१.००	३२.००
१४	मलेरियाहर	१४४.००	३०.५०	१६.००
१५	मदनशक्ति	१७६.५०	३७.००	१६.२५
१६	मधुना (मधुमेह नाशक)	२४६.००	५१.५०	२६.५०
१७	मेघाशक्ति	१२६.००	२७.५०	१४.५०
१८	रक्तशोधन	१२६.००	२७.५०	१४.५०
१९	रजावरोधान्तक	१४.००	२०.५०	११.००
२०	रक्तचापहारी	१०६.००	२३.५०	१२.५०
२१	रुद्धन्ती कैपसूल नं. १	२७०.००	५६.००	२६.००
२२	" " नं. २	१२६.००	२७.५०	१४.५०
२३	ल्यूकोना	१७६.५०	३७.००	१६.२५
२४	स्वासहारी	८४.००	१८.५०	१०.००
२५	शोषान्तक	११४.००	२४.५०	१३.००
२६	शूलारि	८४.००	२०.५०	११.००
२७	स्वप्नप्रमेहान्तक	२४६.००	५१.५०	२६.५०
२८	हृदरोगारि	१३४.००	२८.५०	१५.००
२९	हिस्टेरियाहर	१२६.००	२७.५०	१४.५०
३०	त्रिशक्ति	१०६.००	२३.५०	१२.५०
३१	पुंसवनो कैप०	४०+७	१ सेट	२७.५०

आवश्यक नियम

१. ५०, १०० तथा ५०० कैपसूल पैकिंग के भाव दिये हैं। अधिक मंगाने पर ५०० पैकिंग के भाव से ही मूल्य लिया जायगा।
२. २५ कैपसूल का मूल्य-५० कैप. के भाव आधा करके १.०० जोड़ देने पर समझे। २५ कैपसूल से कम नहीं भेज सकेंगे।
३. कैपसूलों को पोस्ट पार्सल से ही मंगाना सुविधाजनक है। पी.पी. से मंगावे। अधिक मूल्य के कैपसूलों की पार्सल (यदि आपके नजदिक में कोई सरकारी बैंक है तो) बैंक के द्वारा भी भेजी जा सकती।
४. कमीशनादि कम करके २५०) से अधिक मूल्य के कैपसूल मंगाने पर पोस्ट व्यय फ्री। १५.०० से अधिक के मंगावेंगे तो आधा पोस्ट व्यय आपको देना होगा। इससे कम मूल्य के मंगाने पर पुरा खर्चा आपको देना होगा।
५. बैंक का खर्चा हर हालत में ग्राहक को देना होगा।
६. एजेंट बनने के नियम पत्र डालकर मंगालें।
७. पत्र व्यवहार या आर्डर ज्वाला आयु. भवन, अलीगढ़ के पते से करें।

ESTD 1969

महाराष्ट्र राज्य द्वारा प्रमाणित—

—गंगा आयुर्वेद निकेतन—

शुद्ध शिलाजीत, रस, रसायन, भस्म, गुग्गुलु, बटी, टेबलेट तथा
बहुमूल्य योगों के निर्माता एवं होलसेल रिटेल विक्रेता

आज ही सूचीपत्र मंगाये

फोन नं २८८ (VIR)

चन्दनसार रोड, विरार (बम्बई)

नोट—बम्बई में होम डिलीवरी की सुविधा है।

सकल एलोपैथिक डाक्टर बनें !!

एलोपैथिक चिकित्सा पद्धति सारे संसार में उन्नति कर चुकी है। इस कारण लोग एलोपैथिक चिकित्सा में अधिक विश्वास करते हैं। वह चाहते हैं कि उन्हें मितों में रोग से छुटकारा मिल जाए। अगर आप सफल एलोपैथिक डाक्टर बनकर या बंधन कमाना चाहते हैं तो आप जुलाई १९८१ में प्रकाशित "एलोपैथिक मैडिकल प्रैक्टिसर" लेखक डाक्टर महेश्वर प्रसाद उमाशंकर पंचम संस्करण संग्रहाकर अवश्य पढ़ें।

इस पुस्तक में एलोपैथिक चिकित्सा के कठिन शब्दों के अर्थ, नापतौल, पैमाने, तापमान, संयोग विरुद्ध दवाओं को मिलाकर प्रयोग करने का निषेध, औषधियों की मात्रा, बच्चों को औषधि देने पर बहु-मूल्य जानकारी- औषधि निर्माता कंपनियों के पूरे पते और ४५० के लगभग रोगों के कारण, लक्षण तथा उनकी एलोपैथिक के ६००० इन्जेक्शनों, टेबलेटों, मिक्चरों, कम्बिनेशन, थेरापी, सरहमों, लोगनों तथा कंपसुलों से चिकित्सा विस्तारपूर्वक लिखी गयी है। इसके अतिरिक्त गर्भ परीक्षा, गर्भ गिराना, परिवार नियोजन, एलर्जी से पैदा विकार, स्नायु दुर्बलता, विटामिन की कमी से होने वाले रोग, एलर्जी, विकार व कष्ट तथा विषों और विषैले जीवजन्तुओं के काटने की चिकित्सा पर विस्तारपूर्वक जानकारी दी गयी है।

मूल्य—२०.०० (बीस रुपये) केवल, डाक-खर्च ४.०० अलग।

नोट—आप इस पुस्तक को मंगवाकर आरम्भ से अन्त तक एक मास तक पढ़ें। यदि पसन्द आ जाये तो रख लें वरना वापिस भेजकर मूल्य वापिस मंगवा लें।

—मैसर्स मैडिकल हाउस— ३६५६, कुतुबरोड, दिल्ली—११०००६

शिवत्र (श्वेत कुष्ठ) (LEUCODERMA)

डॉ० अशोककुमार वैद्य एम ए. आयुर्वेद रत्न डी.एस.सी.ए. बंबूल (म.प्र.)

रोग हेतु—आयुर्वेदानुसार प्रत्येक रोग का निदान विशेष होता है। और निदान विशेष ही दोष विशेष को उस रूप में विकृत करता है जिससे रोग विशेष का आरंभ होता है। रोग के ज्ञान हेतु निदान पञ्चक का सम्यक् ज्ञान होना अति आवश्यक है। रोगों की उत्पत्ति का कारण विकृत त्रिदोष ही है जो शरीरस्थ अणुधातुओं को दूषित करता है। पश्चात् दोष आश्रय विशेष में आश्रित हो तदनुरूप रोगों की उत्पत्ति करता है।

महर्षि चरक के अनुसार कुष्ठ रोग का वारम्भ इस प्रकार होता है—

“सप्तद्रव्याणि कुष्ठानाम् प्रकृति विकृतिस्त्वनानि भवन्ति। तद्यथा त्रयो दोषा वातपित्तश्लेष्माणः प्रकोषण विकृताः दूष्याश्च शरीरधातुवस्त्वङ्मांसशोणितलसिकाश्चतुर्धा दोषाघात विकृता इति। एतत्सप्तानां सप्तधातुकं एवं गतं आजननं कुष्ठानाम्।” (च० नि० अ० ५)

इस प्रकार कुष्ठरोग की उत्पत्ति के कारण वातादि तीनों दोष तथा चर्म मांस रक्त लसिका दूष्य है। ये दूष्य और विकृत दोष ही कुष्ठ की उत्पत्ति के हेतु हैं।

कारण—विरोधी कहिए क्षीरस्थ्यादि स्नेहयुक्त भारी अन्नपान के सेवन करने से, वेगों को रोकने से भोजन कर व्यायाम अथवा धृति संताप सहने से शीत, गर्मी, लघन और आहार इनका उचित क्रम छोड़कर सेवन करने से पसीना, श्रम, भय इससे पीड़ित हो उसी समय शीतल जल पीने से, अजीर्ण अन्न भक्षण करने से तथा भोजन के ऊपर भोजन करने से वमन, विरेचन आदि पंचकर्म के करते अपथ्य करने से, नया अन्न, दही, मछली, खट्टे पदार्थों का सेवन करने से, उड़द, मूँग, तिल, दूध, गुड़ इनके खाने से तथा अन्न के पचे बिना स्त्री प्रसंग करने से दिन में सोने, ब्राह्मण और गुरु इनका तिरस्कार करने से और पापकर्म के आचरण करने से वातादि तीनों दोष त्वचा, रुधिर, और जल इनको दुष्ट कर कुष्ठरोग पैदा होता है। कुष्ठ होने के वातादि तीनों दोष त्वचादि दुष्य सात पदार्थ

कारण भूत हैं। इनसे १८ प्रकार के कुष्ठ होते हैं जिनमें सात महाकुष्ठ और ग्यारह धुन्न कुष्ठ हैं।

प्रकार—कपाल, उदुम्बर, मंडल, ऋष्यजिह्व, पुंडरिक, सिष्म, काकणक ये सात महाकुष्ठ और एक कुष्ठ, चर्म, किटिश, विपादिका, अलसक, दद्रु, चर्मदल, पामा, विस्फोटक, शतारु और विचित्रिका ये ग्यारह धुन्न कुष्ठ कहे गये हैं।

इनमें कपालिका-वात प्रधान, उदुम्बर-पित्त प्रधान मंडल और विचित्रिका-कफप्रधान, ऋष्यजिह्व-वातपित्त प्रधान, चर्म-एक कुष्ठ-किटिश-सिष्म-अलसक, विपादिका, वातश्लेष्म प्रधान, दद्रु-शतारु-पुंडरिक-विस्फोटक-त्रिदोषजन्य है। इस प्रकार कुष्ठ की उत्पत्ति के कारण और दोष दूष्य के संयोग से प्रकारों का ज्ञान होता है।

प्रस्तुत लेख का प्रमुख विषय शिवत्र (श्वेत कुष्ठ) Leucoderma है। अतः शिवत्र और कुष्ठ में अंतर जान लेना आवश्यक है। शिवत्र Leucoderma—Leuco= श्वेत derma=चर्म-त्वचा के सात स्तर में से चतुर्थ स्तर के लुप्त हो जाने से शिवत्र या किलास प्रगट होता है।

शिवत्र जिसे आम लोग श्वेत कुष्ठ कहते हैं। वस्तुतः वह कुष्ठ न होकर कुष्ठ सदृश रोग है। आधुनिक विज्ञान के अनुसार शरीर की बाह्य त्वचा में रहने वाले मेलानिन (Melanin) द्रव्य की विकृति या अभाव के कारण उक्त शिवत्र रोग (सफेद दाग) की उत्पत्ति होती है। मेलानिन पदार्थ त्वचा में रंग प्रदान करता है तथा शरीर की उष्णता के रक्षा करता है। एलोपैथी में शिवत्र को ल्यूकोडर्मा (Leucoderma) कहते हैं। कुष्ठ को उत्पन्न करने वाले सभी कारण शिवत्र को जन्म देते हैं। यह एक त्रिदोषजन्य व्याधि है। दोष और दूष्य की विकृति के अनुसार यह तीन प्रकार का तीन नामों से जाना जाता है। १. दाहण २. चारुण ३. शिवत्र।

इसे किलास के नाम से भी पुकारा जाता है परन्तु किलास में त्वचा का रंग ताम्बी, रक्त और लाल रंग का

होता है। इसमें दाह होती है। यह एक कृच्छ्राद्य व्याधि है। प्रथम तो किलास रक्त के बाधित रहता है। पश्चात् अपथ्यादि के कारण मानसस्थ हो जाता है और उचित चिकित्सा के अभाव में मेदोगत हो जाता है। इस प्रकार लापरवाही के कारण दोष गहराई तक पहुँच जाता है। यह शरीर के किसी भी भाग में आंशिक होकर क्रमशः फैलकर बहुत बढ़ जाता है। परन्तु यह प्रायः संक्रामक नहीं होता।

श्वित्र और कुष्ठ में भेद—श्वित्र प्रायः त्रिदोषज (अनिश्चित) कभी-कभी एक दोषज केवल रक्त, मांस, मेद में ही आश्रय करने वाला होता है। इससे शरीर की धातुओं का नाश नहीं होता और ना ही यह कृमिजन्य होता है। जबकि कुष्ठ निश्चित ही त्रिदोषज, संक्रामक, सप्त धातुगत, परिभावी तथा शरीरस्थ सभी धातुओं को दूषित करने वाला होता है। साथ ही कृमिजन्य और इसमें अंगों का पतन भी होता है।

आचार्य भोज ने श्वित्र (किलास) दो प्रकार का माना है। (१) व्रणज (२) दोषज। अग्निदग्ध या मिथ्योपचार जनित व्रण का जब स्थान श्वेत बन जाता है तब वह व्रणज श्वित्र कहलाता है और दोषों की विकृति से रक्त, मांस और मेदज होने पर उसे दोषज श्वित्र कहते हैं। आचार्य भोज इसे संक्रामक भी मानते हैं।

श्वित्र के कारण और सम्प्राप्ति—

एलोपैथी के अनुसार त्वचा के रंग melanin (काली) की उत्पत्ति के उपादान एवं निमित्त कारणों के अभाव में मेलैनिन की उत्पत्ति नहीं होती फिर भी इसकी उत्पत्ति एवं विनाश या अनुत्पत्ति का निदान कारण क्या होता है यह आज तक अज्ञात सा है। वैसे अनेकों कारण बताये हैं पर शंकाओं का समाधान नहीं हो पाता आयुर्वेदानुसार बताये गये कारण अधिक युक्तियुक्त प्रतीत होते हैं।

आचार्य चरक के निम्न श्लोक से श्वित्र के कारण स्पष्ट होते हैं—

बचांस्य तथ्यानि कृतघ्न भावो निन्दा गुरुणां गुरुध्वंशं च।
पाप क्रिया पूर्वकृतं च कर्म हेतुः किलासस्य विरोधी चान्नम्
(चरक चिकित्सा)

अर्थात् असत्य भाषण एवं असत्य व्यवहार कृतघ्नता मित्रद्रोह माता, पिता गुरुओं एवं पूजनीय व्यक्तियों की

निन्दा, अपमान एवं अवहेलना—पापकर्म का करना एवं चिन्तनमात्र भी करना पूर्वजन्म के कुकर्म पापादि तथा विरोधी आहार-विहार से।

विरोधी आहार विहार का प्रभाव शरीरस्थ अवयवों पर पड़ता तथा शेष कर्मों का प्रभाव मन और आत्मा पर पड़ता है। अतः इनके द्वारा पड़े बुरे प्रभावों से शरीर को कष्ट होता है। इन प्रभावों के माध्यम से शरीरस्थ विभिन्न न्यासर्ग (हार्मोनस्) होते हैं जो अन्तःस्रावी ग्रन्थियों से उत्पन्न होते हैं और शरीर की विभिन्न क्रियाओं पर प्रभाव डालते हैं।

होम्योपैथी के अनुसार बिन्ता एवं बिद्रोह भावना के कारण मन एवं चेतन तत्व में शोरा (Psora) नामक दोष उत्पन्न होता है। इससे त्वचा पर कंडु, पामा आदि विकार उत्पन्न होते हैं। इनका कारण भी मन की दृष्टावस्था एवं पापकर्म है।

श्वित्र या किलास एक त्वगरोग है। अतः इसका प्रमुख कारण आयुर्वेद एवं होम्योपैथी के अनुसार दुष्य-चित्तन, पाप, दुष्कर्म ही है। कारण स्पष्ट है कि शरीर की अन्तःस्रावी ग्रन्थियों पर जब विरुद्ध आहार विहार एवं बुरे आचार-विचार का प्रभाव पड़ेगा तो उससे सवित हार्मोन्स रक्त में मिलकर विभिन्न क्रिया कलापों को प्रभावित करेंगे। पिट्यूटरी ग्रन्थि और अधिवृक्क ग्रन्थि के हार्मोन्स ही इसमें प्रमुख हैं। पीयूष ग्रन्थि ही त्वचा के वर्ण मेलैनिन की उत्पत्ति का कारण है एवं नियंत्रण करने वाली है अतः इसके दूषित स्राव और अधिवृक्क ग्रन्थि जिससे “एड्रिनेलीन” नामक रस बनता है। इसमें न्यूनता या दूषित हो जाने पर शरीर की त्वचा तथा श्लेष्मिक कला में यत्र तत्र काले सफेद लाल रंग के धब्बे पड़ जाते हैं। इसके विपरीत इस रस की अधिकता से अन्य अनुकूल परिस्थितियाँ होने पर त्वचा के वर्ण की न्यूनता हो जाती है। इस प्रकार श्वित्र की उत्पत्ति एवं वृद्धि इन हार्मोन्स की न्यूनता एवं अधिकता का ही कारण है।

श्वित्र के असाध्य लक्षण—जो श्वित्र भाग से जलने पर उत्पन्न हुए हों तथा जो कई वर्षों से उत्पन्न चिरकालीन हो जिनकी त्वचा के रोम भी लाल, कठई, सफेद हो गये हों तथा जो श्वित्र नाजुक स्थानों पर हो जैसे—ओठ, हाथ के तलुवे, योनि, गुदा पर हों वे असाध्य होते हैं।

शिवत्र के साध्य लक्षण—नये, शीघ्र उत्पन्न होने वाले चाहे वे नाजुक स्थानों पर ही क्यों न हों जिनके रोए बिल्कुल प्रवेत न हो शिवत्र मंडल परस्पर मिले न हों साध्य हैं ।

शिवत्र रोग की चिकित्सा

महर्षि आत्रेय का कथन है कि शिवत्र रोग की चिकित्सा कुष्ठ रोगवत् ही करनी चाहिए । प्रथम शोधन कर पश्चात् औषधियों का सेवन करवाना चाहिए । यथा—आवश्यक पाँचों शोधन कर्म करें पश्चात् औषधि व्यवस्था करें । शिवत्र पर लेप शीघ्र लाभ करता है ।

बाह्य प्रयोग—लेपादि—१. मेनसिल+बायबिडग+काशीस+गोरोचन+सैंधानमक+सत्यानाशी की जड़ प्रत्येक समान भाग लेकर पानी में पीसकर लेप करें । अथवा २. नील की जड़+बायबिडग+काशीस+गोरोचन+सैंधानमक+सत्यानाशी की जड़ । प्रत्येक समान भाग पानी के योग से पीसकर लेप करें या ३. गन्धक+चित्रक की जड़+हीरा कशीश+हरताल+त्रिफला । प्रत्येक समान भाग ले पानी में पीस शिवत्र पर तीन चार बार दिन में लेप करें । इसे गोमूत्र में मिलाकर लगाने से असाध्य ओठ पर हुए शिवत्र पर भी लाभ होता है ।

अन्य लेप—अमलतास की पत्ती पीसकर लेप करें या करंज+मदार+सेहुड़+अमलतास की पत्ती गोमूत्र में पीसकर लेप करें या तूतिया+हरताल+कटकी+त्रिकूटा+शोभांजन की छाल+कनेर+मदार+कूट+अलसी+बाकुची+शुद्ध भल्लातक+सरसों+सेहुड़ की छाल+सत्यानाशी+कटेरी की छाल समान भाग लेकर गोमूत्र में पीस लेप करने से असाध्य शिवत्र में भी लाभ होता है ।

तेल—तुवरक के योग—प्राचीनकाल से श्वेतकुष्ठ की चिकित्सा में प्रयोग किये जाते रहे हैं । तुवरक के योगों से रक्त में स्नेह द्रावक तत्व की विशेष वृद्धि होती है तथा विजातीय कोशाओं का विनाश भी होता है तथा त्वचा की सुरक्षात्मक शक्ति की वृद्धि होती है ।

तुवरकादि तेल—चालमोंगरा तेल+बाकुची तेल+चन्दन का तेल तीनों समान भाग लेकर एक में मिलावे तथा शिवत्र पर कई बार लगावें ।

तुवरक का मुख द्वारा प्रयोग—(१) तुवरक के बीज छील मन्द आंच पर भुनकर+पी में भूनी हींग १/८ भाग

+१/२ भाग+१/२ भाग शुष्ठी चूर्ण+१ भाग मिश्री मिलाकर आधे से एक तोला दिन से दो बार सेवन करें ।

(२) तुवरक तेल १ से ३ चम्मच तक धीरे-धीरे बढ़ाते हुए प्रयोग करें । तेल को कैंपसूल में भरकर भी प्रयोग किया जा सकता है ।

(३) तुवरक तेल का प्रयोग अभ्यङ्ग में भी करते हैं गुनगुने पानी में थोड़ा स्वजिका क्षार मिला शिवत्र को पोंछकर तेल का अभ्यङ्ग करें । सप्ताह में २ बार अभ्यङ्ग अवश्य करावें ।

सूचीवेध—तुवरक तेल का प्रयोग अन्तर त्वचीय या पेशीगत सूचीवेध द्वारा किया जाता है ।

आभ्यन्तर प्रयोग—(१) काशीशत्रुद्ध रस—शुद्ध पारा चार तोले+शुद्ध हीरा कशीश २० तोला पत्थर के खरल में अर्जुन छाल क्वाथ से ३ घण्टे घोट इसके बाद सराव संपुट में रख कपड़मिट्टी कर सुखा लें । पश्चात् गजपुट में रख फूक दें । स्वांग शीतल होने पर निकाल रखें । पारद के स्थान पर रस सिन्दूर देने से विशेष लाभ होता है । (२) सर्वाङ्ग सुन्दर रस (३) आरोग्य वर्द्धनी बटो (४) तालसिन्दूर (५) शशिलेखा वटी (६) कुष्ठ कुठार रस (७) गन्धक रसायन (८) उदयादित्य रस (९) सर्वेश्वर रस ऐसी अनेकों कृष्ण की शास्त्रीय औषधियाँ हैं जो शिवत्र (श्वेत कुष्ठ) में प्रयोग की जाती हैं ।

आसव, अरिष्ट—वृहत् मंजिष्ठादि क्वाथ, खदिरा-रिष्ट, सारिवाद्यासव, अवलुगजादि काढ़ा=(आंवला+खैर सार) इन दोनों औषधियों का काढ़ा करके उसमें बाकुची चूर्ण मिलाकर पीवें तो पथ्य से रहने वाले रोगी शिवत्र से दूर होते हैं ।

मेरे अनुभूत प्रयोग—(१) शिवत्रहरवर्ति—हरताल १/४ भाग+करबीर+चित्रक+बाकुची एक-एक भाग एकत्र कर गोमूत्र और अर्कदुग्ध की भावना देकर बत्ती बना रखे । जल या गोमूत्र में विसकर शिवत्र पर लगावें ।

(२) शशिलेखा वटी—शुद्ध पारद एक भाग+शुद्ध गन्धक एक भाग+ताम्र भस्म (सोमनाथी) एक भाग प्रथम पारद और गन्धक की कज्जली बना पश्चात् ताम्र मिला पश्चात् बाकुची क्वाथ से मर्दन कर ३-३ रत्ती की वटी बना लें । एक से दो गोली मधु के साथ सेवन करें ।

(३) रसमाणिक्य आधी से एक रत्ती+बाकुची चूर्ण

१ से ३ मासा + स्वर्ण मासिक भस्म एक रत्ती + त्रिफला
१ से ३ मासा मन्जिष्ठादि क्वाथ से सेवन करावें।

(४) काशीशबद रस ६ रत्ती अथवा उदयादित्य रस या विचित्रारि रस या रसमाजिक्य + वाकुची चूर्ण ३ मासा ऐसी ३ मासा मन्जिष्ठादि क्वाथ से या मधु के सेवन कर छांवला और खैरसार का क्वाथ बना पीवें। भोजन के बाद खदिरारिष्ट सेवन करें। सोते समय आरोग्यवेदिनी २ वटी गरम जल से तथा उक्त में से कोई लेप दिन में ३-४ बार शिवत्र पर लगावें।

(५) सर्व प्रथम आप कीटाणुनाशक थाउडर या साबुन से शरीर को अच्छी तरह भस्मकर स्नान करें। तत्पश्चात् बिजौरा नीबू के दो टुकड़े काटकर उसके दानों को निकालकर फेंक दें। नीबू को थोड़ा निचोड़ें और कपड़े धोने का सोडा डालें, जहाँ जहाँ पर शरीर में दाग हों वहाँ-वहाँ प्रयोग करें। आप इस प्रकार ३ बार ३ दिन तक करें, श्वेत दाग मिट जावेंगे।

होम्योपैथिक चिकित्सा—बेलाडोना ३ X—लाल रंग के चर्म पर—सिपिया ६ X—पीले रंग के चर्म पर—केमो-क्लेडिया २ X—सफेद रंग के चर्म पर प्रयुक्त होता है।

पथ्यापथ्य—पथ्य—कोदो, सावा, पुराना चावल, चना, गेहूं, मूंग, अरहर, लौकी, तोरई, पालक, घी, मधु, तिल, सरसों, भीठे फल, गोदुग्ध इस प्रकार हल्का भोजन तथा ब्रह्मचर्य का पालन।

अपथ्य—विषम, गुरु, विदाही भोजन, मच्छली, पशु-पक्षी का मांस, बैंगन, बालू, कटहल, दही, मद्य, गुड़, मलाई गरम मसाला उड़द कटु अम्ल पदार्थ तथा दिन में सोता, लवण और मैथुन सर्वथा त्याज्य हैं। पापकर्म, असत्यवाचन वजित हैं।

विशेष—यदि विषम का रोगी नमक न खावे तो शीघ्र अच्छा होवे। औषधि सेवन के साथ-साथ व्रत पूजा पाठ दानादि भी करना चाहिए। रविवार व्रत आदित्य स्रोत पीपल का पूजन उबटन लगा नित्य स्नान।

शरद ऋतु में सेवनीय अतुल बल प्रदान करने वाली

दो नवीन औषधियां

इस वर्ष के विनाल विशेषार्क "जरा व्याधि चिकित्सांक" में प्राणाचार्य श्री हर्षुल मिश्र का पृष्ठ २२० पर "जीवन सुधा रसायन" तथा वैद्य श्री ब्रजविहारी मिश्र द्वारा पृष्ठ ३६६ पर लिखित "प्रमदेभांशकुश रस" प्रयोग प्रकाशित हुए हैं। इन दोनों योगों को निर्माण करने को हमारे पास अनेकों पत्र प्राप्त हुये थे। अपने सुहृदय पाठकों की सुविधाएँ हमने इन योगों का निर्माण किया है—

जीवन सुधा रसायन—इसके सेवन से अतुल बल वीर्य की प्राप्ति होती है, बुढ़ापा नहीं आता या बुढ़ापे में सेवन करने पर बुढ़ापा नहीं सताता। सबसे उत्तम गुण—यह दीर्घायु प्रदान करता है। शुद्धा और पाचन शक्ति बढ़ जाती है। विधिवत् प्रयोग करने पर १०० वर्ष की आयु प्राप्त होना कठिन नहीं है। १ माह को ७५० ग्राम की शीशी का लागत मात्र मूल्य १५५.००। पोस्ट पैकिंग बिक्रीकर प्रथक।

प्रमदेभांशकुश रस—यह अतुल्य वाजीकरण एवं मधुमेह नाशक योग है। त्रिदोष नाशक है, वाजीकरण करता और बहुत अधिक स्वस्थान करता है। लेखक ने लिखा है कि इसका सेवनकर्ता स्त्री-सम्भोग न करे तो उसे अन्धा कर देता है इसलिये जिनकी स्त्री पास में नहीं हो वह सेवन नहीं करें। इसके सेवन से कमर में टूटने की पीड़ा, बुढ़ापे से कमर का झुकना दूर होकर उसकी कान्ति स्वर्णामा सदृश हो जाती है, उसके १८ प्रमेहों का नाश हो जाता है। यदि इस रस का सेवन स्त्री करे तो वह कुमारी सदृश हो जाती है। १ माह को २०२ रत्ती की ६० गोली मूल्य १५०.००। पोस्ट पैकिंग बिक्रीकर प्रथक।

नोट—आर्डर के साथ २०) एडवांस अवश्य भेजें।

पता—निर्मल आयुर्वेद संस्थान, डी-७८ औद्योगिक नगर, अलीगढ़

प्रशिक्षित प्रयोग

हृदय रोग —

१. संस्कारित और कंचुकी दोषरहित पारद, शुद्ध गन्धक, नाग सिन्दूर इन तीनों को समभाग लेकर एक दिन मर्दन करें। अब गोस्तनी द्राक्षा, मधुगुष्ठी खजूर, घात्री (आमला) प्रत्येक के स्वरस में अलग-अलग एक-एक दिन खरल करें। बस दवा तैयार हो गई। मात्रा २ रत्ती। अनुपान आमलक चूर्ण मिश्री के समभाग निमित्त पूर्ण के साथ प्रातः सायं देवें।

भोजन में भुने गेहूं का दलिया दूध फल ही दें। इस महौषधि के सेवन से रोगी को १५ दिन में लाभ और १ महीने में पूर्ण स्वास्थ्य की प्राप्ति होती है। परन्तु इस औषधि को दो महीने अवश्य ही सेवन करना चाहिये। रोग का यदि दौड़ा उपरूपेण हो तो दिन में ४ मात्रा तक औषधि ३-३ घण्टे के अंतर से चला देनी चाहिये। दौड़ा रुकने पर उपरोक्त विधि से सुबह शाम ही प्रयोग करना चाहिए।

२. पुनर्नवा (पथरचटा) की जड़ ३ ग्राम १०० ग्राम जल में पीसकर छान लें। और थोड़ा गुनगुना (गरम) कर लें। रोगी को पिला दें। यह केवल एक मात्रा है। इसे दिन में २ या ३ बार तक वेग की अवस्थानुसार दें। यह प्रयोग विशेषतः हृदय रोग की पुरानी बीमारी में जब रोगी बायें पार्श्व में लेट न सकता हो लेटने से हृदय की धड़कन अत्यधिक बढ़ती हो तब इसका प्रयोग करके चमत्कार देखें। अत्यन्त गुणकारी है।

चर्म रोग—

१. शुद्ध हिगुल, शुद्ध रसकपूर, खुरासानी अजशान, जायफल, लवंग (लौंग), जावित्री, छोटी इलायची प्रत्येक १०-१० ग्राम लें। अब इन्हें नीबू के रस की भावना देकर तीन दिन तक मर्दन करें। फिर चने के प्रमाण गोली बना सुरक्षित रखें। १ गोली प्रातः १ शाम को निगल लें। इसके बाद तुरन्त (सूखा नारियल, कालातिह, रस, अनार का रस, मुसम्मी का रस यथाकृति दें।

पुराना गुड़ समभाग लेकर पीस लें और आमला के समान लड्डू बना लें।) गोली निगलने पर इस लड्डू को खालें।

इस प्रकार इन गोलीयों का ४० दिन तक सेवन करने से उपदंश, दाद, फिरंग, पीनस, नासुर, भगन्दर, गलग्रन्थी, कण्ठमाला, योनि एवं लिंग के ब्रण औदुम्बर, गजचर्म, श्वेतकुष्ठ, मण्डलकुष्ठ रफू चक्कर हो जाते हैं। इससे बात वेदना एवं पारद जन्य दोष भी दूर होते हैं। और विशेष प्रकार से वीर्य की वृद्धि भी प्राप्त होती है। इस औषधि के सेवनकाल में खटाई, मिर्च, नशीली वस्तुयें गरिष्ठ भोजन गोस्त वगैरह नहीं खाना चाहिये। हल्का सुपाच्य भोजन ही उत्तम है।

रक्त कैंसर—

१. प्रवाल पिष्टी १ रत्ती, कहरवा पिष्टी १ रत्ती, गुडची सत्व ४ रत्ती को मिलाकर एक मात्रा बनावें। इस प्रकार की तीन मात्रायें दिन में तीन बार (सुबह, दोपहर, शाम) आंवले के मुरब्बे से दें। यदि आमले का मुरब्बा सुलभ नहीं हो तो अभाव में शीतल जल द्वारा ही काम चलाया जाता है। भोजन के बाद २॥ तोला अरविन्दासव समभाग जल मिलाकर दें। इससे ज्वर यकृत, प्लीहा शोथ, जलन में पूर्ण लाभ होता है। अर्थात् यकृत प्लीहा शोथ जन्य उपद्रव शीघ्र शमन होते हैं।

२. पलाश के बीज २॥ तोले लेकर सिल पर जल के साथ पीस लें। और जल में धोलकर कपड़े से छान लें। मिश्री मिलाकर प्रातःकाल पीने को दें। इसमें जल की मात्रा आधा पाव (१२० ग्राम) ही होनी चाहिए।

इस योग को ३ दिन उपः काल में नित्य १ मात्रा बनाकर रोगी को अवश्य पिला दें। नासागत रक्तस्राव इस प्रयोग से सर्वदा के लिये बन्द हो जाता है। उपरोक्त योग नं० १ को चलाते रहें। नं० २ को बन्द कर दें।

रोगी पथ्य में—भार के भुने गेहूं का दलिया दूध गाय या बकरी का, ताजे फल गन्ने का रस, अंगूर का रस, अनार का रस, मुसम्मी का रस यथाकृति दें।

यदि रोगी के मुँह में छाले पड़ जावें तो १ रत्ती नीलाधोया भुना पाव भर पानी में घोलकर रोगों को कुल्ले कराना चाहिये। पानी को रोगी पेट में न ले जावे इसमें खूब सावधानी रखनी चाहिए। कुल्ला कर लेने के बाद यशद भस्म १ या २ रत्ती मधु में मिलाकर चटा दें। इस प्रकार शाम को भी करें। ऐसे ही सुबह शाम करने से ४-५ दिन में मुँह के छाले गायब हो जाते हैं। प्रयोग अनुभूत एवं परीक्षित है। साधारण सी औषधि इतने भयंकर रोग को शीघ्र शमन करती हैं।

अर्श रोग—

शोरा कलमी १ माशा, तुल्य भस्म १ रत्ती, कपूर १ माशा, समुद्रफेन १ माशा, हिंगुल १ माशा, सब औषधियों का सूक्ष्म चूर्ण कर फिर ३ रत्ती औषधि सब थूक में घिसकर मस्सों में लेप करें। ५ दिन में ही मस्से गिर पड़ेंगे। परहेज अम्ल, मधुर पदार्थ सेवन नहीं करें।

२. अर्शद्रावण योग—संख्या (ब्रह्मपुत्र श्वेत) २ माशा खदिर सार २ माशा, रेवन्दचीनी २ माशा जल में पीस बटी बांधे। एक बटी घिसकर जल में प्रथम दिन लेप करे। फिर तीसरे दिन लेप करें इसी प्रकार ७ दिवस करें फिर सातवें दिन वाट लें।

३. अर्श में सेंक—घातकी पुष्प (घाय के फूल) विजया (हरड़) की छाल, बबूल की छाल इनको मिट्टी के पात्र में जल डालकर क्वाथ करें फिर पात्र के ऊपर गुदा रखकर सेंकें। इससे भी मस्से गिरकर सूख जाते हैं।

श्वास रोग—

१. तिन्दुक (कारस्कर) ५ तोला जल में तीन दिन भिगोवें। फिर जल में से निकाल त्वचा को साफ कर दें। अब २ किलो (प्रस्थ) गोमूत्र में उबाल लें। जब गोमूत्र शुष्क हो जाय तब निकाल साफ जल में धोवें। फिर गो घृत में भून लें। अब इसमें पीपल, मिर्च ५-५ तोला मिलाकर कन्या (कुमारी) के रस में तीन दिन खरलकर चणक प्रमाण बटी बांधें।

मात्रा—एक बटी (गोली) अनुपान गोघृत ६० ग्राम (५ तोला) में प्रातः शौचादि से निवृत्त होकर “ॐ नमः शिवाय” का स्मरण करता हुआ रोगी पूर्व या उत्तर मुख होकर औषधि को खा जावे। इस प्रकार इस महौषधि के तीन दिन सेवन करने से कास, पार्श्वशूल, श्वास रोग नष्ट

होता है। असाध्य श्वास रोग ७ दिन में चला जाता है। मूख लगने पर पथ्य में दलिया दूध लेवें। खटाई, मिठाई, घूल, घुआं से विशेष बचे रहें।

२. श्वास रोग में हमें एक ऐसे प्रयोग का परिचय धन्वन्तरि के पाठकों को कराने की इच्छा हुई जिसमें हर्षा लगे न फिटकिरी रंग चोखा आ जाय। यह दवा बिना मूल्य वांटने योग्य है गरीबों व अमीरों सबके लिये है हम आशा करते हैं श्वास रोग से पीड़ित व्यर्थ में धन का अपव्यय नहीं करेंगे। औषधि का नाम है काला नमक—अब इसे आप महीन पीसकर तीन बार कपड़छन कर लें। (पीसते एवं कपड़छन करते समय “ॐ उड्डामेश्वराय नमः” का मानसिक जप करते रहें। किसी से भी बोले नहीं, जब तक आपकी दवा तैयार न हो जाय।) दवा तैयार हो गई, बतावें कितना खर्च पड़ा। अब आप शनिवार के दिन कुमारी लड़कियों को जो संख्या में ६ (नव) हो निमग्नित करें और प्रातःकाल उन्हें यथेष्ट जलेबी खिलाकर प्रसन्न करें। और उनके साथ में बैठकर रोगी स्वयं भी खावे। अब सोमवार के दिन उक्त औषधि को २ मांशे (२ ग्राम) रात में सोते समय फांक लें। दूसरे दिन रात में सोते समय २॥ ग्राम लें। इस प्रकार क्रमशः आधा ग्राम नमक बढ़ाकर रात में ही सोते समय खावें। जब ६ ग्राम पहुंच जायें तो नित्य ६ ग्राम खाने लें। और मात्रा का बढ़ाना बन्द कर दें। यदि प्यास अधिक लगे तो गरम पानी पियें। एक मास में श्वास जड़ से चला जावेगा।

वक्तव्य—इसके प्रयोग काल में किसी-किसी रोगी को कभी-कभी १ या २ कै दस्त हो जाते हैं, जिससे भारी मात्रा में बलगम निकलता है। इन कै दस्त को देखकर दवा बन्द नहीं करें और किसी प्रकार दुष्ट तर्क नहीं पैदा करें। आप अपना कोल पुरा करें। अन्य जो भी औषधियां आप सेवन कर रहे हों इस औषधि के सेवनकाल में बिल्कुल ही बन्द कर दें। परहेज खट्टे, मीठे, बीड़ी, आदि का सेवन भी ३ महीने तक नहीं करें जितना अधिक से अधिक कर सकें।

३. एक छटाँक हल्दी के चार टुकड़े करके एक पाव गेहूं के आटे की लोई में दवा दें। और कीकर के अंगारों पर सेक लें जब लोई जलकर काली हो जावे तो उतार लें। ठंडा होने पर हल्दी को निकाल पीसकर रख लें। मात्रा—३-३ मांशे गरम जल से सुबह दोपहर, शाम को

दें। इससे श्वास रोग ३ दिन में ही नष्ट हो जावेगा। यदि कुछ कसर रह जाय तो ३-३ दिन छोड़कर एक माह सेवन करने से श्वास कास निश्चय ठीक हो जावेगा। पथ्य—उपरोक्त।

सोमरोग—

अफीम एक माशा बड़े जायफल में छेद करके भर दें। अब उस जायफल को अनार (दाडिम) का पेट चीर कर भर दें और मिट्टी की सात कपरोटी लगा दें। अब

कण्डे की राख की भूभल में दवा दें और ऊपर से राख के गरम करने के लिये आग भी जलावें पर अनार का इतना पाक करें कि जलने न पावे और पक जाय। पकने पर सबको पीस ल एक रत्ती शहद से खावे। प्रातः सायं इयं योग से सोमरोग, उदकमेह, मूत्रातिसार तत्काल शमन होते हैं। रक्त शर्करा नहीं बनती।

—श्री ब्रह्मवत्स जी शास्त्री आयु०,
श्रीगोपाल आयु० भवन, अतर्रा (बांदा)

×

×

×

प्लीहा गुल्म हर आसव

धीक्वार की गिरी ४ किलो, शहद ५०० ग्राम, गुड़ २ किलो, लोह चूर्ण २५० ग्राम, पांचों नमक १२० ग्राम, जवाखार १० ग्राम, सज्जीखार २० ग्राम, सौराष्ट्री २० ग्राम, नीसादर ६० ग्राम, कालीमिर्च, पीपल छोटी, हरं, आंवला, बहेड़ा, चित्तक, मोषा प्रत्येक २० ग्राम, विडंग ६० ग्राम, अजवायन ६० ग्राम, जीरा २० ग्राम, शुद्ध हींग १० ग्राम, शुद्ध सुहागा २० ग्राम उपरोक्त औषधियों में से पांचों नमक से सुहागे तक की औषधियां धीकुमार के रस में मिलाकर अमृतवान या चिकने पात्र में १५ दिन धूप में रख दें। लोह चूर्ण को मलमल के कपड़े में बांधकर डाल दें। १५ दिन के बाद छानकर बातलें भरकर कांक लगा दें। कांक पर लोहे की तांत या रस्सी बांध दें। मात्रा १० ग्राम से १५ ग्राम तक बराबर का जल मिलाकर भोजन के १५ मिनट बाद दो वक्त दें।

ज्वर दानालव क्वाथ

कचूर, सोंठ, पित्तपापड़ा, देवदारु, अनन्तमूल, कंटाई, नागरमोषा, कुटकी, चिराता प्रत्येक १०-१० ग्राम लें। सबको जब कूट करके ५ पुडिया बनावें। एक पुडिया को २५० ग्राम जल में ओटावें ६० ग्राम जल शेष रहने पर उतारकर छान लें। इस क्वाथ जल में २ छोटी पीपल का चूर्ण तथा १ तोला (१२ ग्राम) शहद मिलाकर रोगी को पिलावें। सुबह शाम दें। मात्र विषम ज्वर की अचूक दवा है। यकृत-प्लीहा में तथा जीर्ण ज्वर में भी लाभप्रद है। मलेरिया बुखार वाले व्यक्ति को यदि दस्त ज्यादा होते हों तो कुटकी इसमें नहीं डालें। चिकित्सक बन्धु इस क्वाथ को देकर यश के भागी बनें। अनुमृत प्रयोग है। वि० सं० १९९६ में राजस्थान में भयंकर मलेरिया ज्वर

फैला था उस समय इस क्वाथ से बहुत ही लाभ हुआ।

शिव दत्तामृत वटी

खूबकला १० ग्राम, सोनागेर २॥ ग्राम, मीमंसेनी कपूर २॥ ग्राम। निर्माण विधि—तीनों को जल से घोट कर मटर प्रमाण वटी बनावें। ज्वर आने से पूर्व २-२ वटी तीन बार जल से दें। शीत ज्वर के लिए अमोष दवा है।

शुष्क कासामृत

वंशलोचन ६ ग्राम, सतमुलहठी ८ ग्राम, दालचीनी ४ ग्राम, सरगर तिगार ६ ग्राम, गोंद कीकर ४ ग्राम, गोंद कतीला ४ ग्राम, इलायची छोटी २० दाना, शहद ५० ग्राम। विधि—सरगर तिगार को भली प्रकार देखलें उसमें मरा हुआ कीड़ा होता है उसे निकाल दें। सब औषधियों का कपड़जन चूर्ण करलें। शहद में मिलाकर अबलेह बनावें। सुखी खांसी में अमृत तुल्य लाभदायक है।

ज्वरारि

कौडिया लोवान ४ रत्ती चढ़े बुखार में देने से ज्वर उतर जाता है नुकसान नहीं करता है।

—वैद्य श्री चन्द्रशेखर व्यास आयु० विशा०
चुरू (राज०)

आवश्यक सूचना

‘धन्वन्तरि’ का यह नवम्बर १९८१ का अङ्क है।

कतिपय कानूनी अड़चनों के कारण पिछले अक्टूबर १९८१ के ‘धन्वन्तरि’ के अङ्क पर नवम्बर—प्रथम छापना था। यह नवम्बर १९८१ का अङ्क है तथा इस पर नवम्बर द्वितीय छापा है। दिसम्बर का अङ्क भी आपको शीघ्र ही प्राप्त होगा।

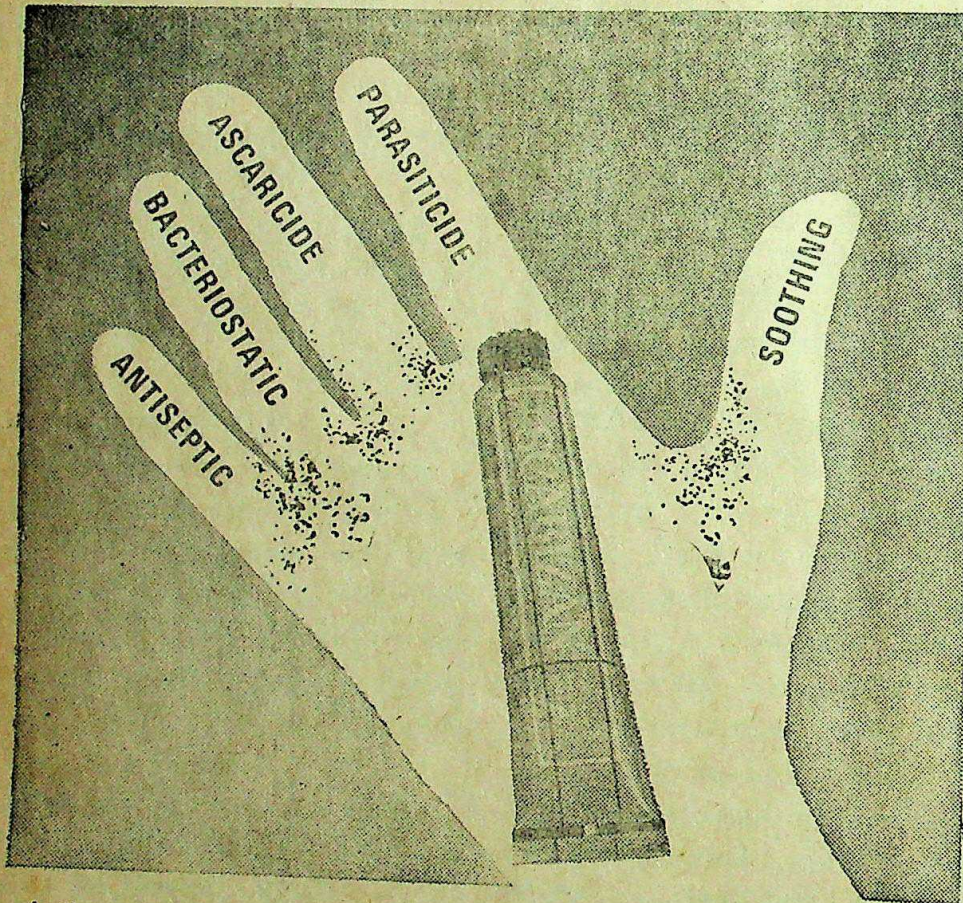
—व्यवस्थापक ‘धन्वन्तरि’

धन्वन्तरि

5 way action...

SCABIZAN

FOR QUICK CONTROL OF SCABIES



In the treatment of scabies, control of rapid spread of parasite *Acarus* Scabies is of primary importance. **Scabizan** does it effectively. It is equally effective in treating infected scabies wherever they be—webs of fingers, armpits, groins, buttocks and genital parts. **Scabizan** is also useful in treating mild infections of Eczema, Ringworm and Lichens.

Scabizan—A balanced formulation for effective control of scabies and associated dermal infections

Sublimed Sulphur I.P.	4%
Zinc Oxide I.P.	4%
Sulphanilamide I.P.	4%
Benzyl Benzoate I.P.	15%
Benzyl Acetate	5%
Paraffin base	q.s.



ZANDU
PHARMACEUTICAL WORKS LTD.
GOKHALE ROAD (S), DADAR, BOMBAY 400 025

स्वास्थ्य प्रश्नोत्तरी

— कवि० वेद प्रकाश गुप्त जी. आई. एम. एस.

ई-६ कृष्णानगर, दिल्ली

* * * * *

बच्चे की आयु १॥ वर्ष है। उसे टाईफाइड दान्तों के निकलने समय हुआ था तभी मृगी का दौरा पड़ना शुरू हो गया। पहले बी। एक मास के पश्चात् आया करता था अब प्रत्येक सप्ताह में आने लगा। एक बार रात में भी दौरा आया था। स्मृति सागर और अन्य आयुर्वेदीय औषधियां दे रहा हूँ परन्तु लाभ नहीं हो रहा है। कोई टोटका या साधारण औषध चिकित्सा लिखें।

—छगनलाल शर्मा, गोदी पो० मोहदी (रामपुर)

उत्तर—रोगी को चैतन्य करने का प्रयत्न करना चाहिए। वान, पित्त, कफ दोषानुसार चिकित्सा करने से ही लाभ होता है। वातिक में अस्ति, पित्त में विरेचन, श्लेष्मिक में वमन अपस्मार की चिकित्सा है।

सातकालिक उपाय—२० वर्ष से ऊपर वाले जब वे सड़क पर दौड़े की अवस्था में गिर जाते हैं तो उन्हें गीला चमड़ा सुंघते हैं। बालक को वात कुष्ठान्तक रस १ रत्ती को ४ पुड़िया बनाकर प्रातःकाल के समय मधु से उसके तीन घण्टे पश्चात्, स्मृतिसागर रस का प्रयोग कर। पुण्ड्रकारक भोजन। गाय का दुध, दही, गोबर, धी और मूत्र समभाग मिलाकर इनसे स्मृतिसागर रस दें।

पथ्य—बच्चे को बच्चा के साथ खेलने कूदने गारी-रिक शक्ति बढ़ाने का उपाय करें। उसे भय इत्यादि से बचायें।

×

×

श्री शङ्करलाल विशनोई सम्प्रदाय पांचला सिद्ध लिखते हैं—हृद् रोग—जब अधिक सर्दी पड़ती है तब रक्त का वर्ण नीला हो जाता है, हथेलियां नीली पड़ जाती हैं। यह रोग १८ वर्ष से है। रोग रक्त वमन के पश्चात् हुआ। अग्नेजी औषधि से रक्त वमन तो ठीक हो गया परन्तु यह रोग पैदा हो गया। शीतकाल में जब पुण्ड्रकारक आहार से हृदय की घड़कन बढ़ जाती है जो आधा घण्टे के पश्चात् ठीक होती है इसकी चिकित्सा लिखें।

उत्तर—रक्त पित्त १८ वर्ष पूर्व उसे हुआ था। रोग का कारण व्यायाम, क्षय, क्रोध, मद्य, आमतीक्ष्ण, उष्ण, क्षार, कांजी, तैल, मछली, मांस, अण्डा आदि का प्रयोग करने से रक्त धातु पित्त द्वारा विदग्ध होकर आमाशय में

एकत्रित होकर मुख अथवा नासिका द्वारा निकलने लगा। उसे रोकने के प्रयत्न से पित्त दोष प्रकुपित होकर लक्षण जो आपने लिखे हैं हो जाते हैं।

चिकित्सा—निदान (रोग को पैदा करने वाले कारण) को अपथ्य समझें। पित्तमारक पदार्थों को त्याग कर मृदु मधुर एवं स्निग्ध रोजन करना चाहिये। प्रबाल पंचा-मृत (मुक्ता युक्त) १ ग्राम की आठ मात्रायां शबंत सन्दन (चन्दन) से लें। भोजन के पश्चात् वासकासव ७ छोटे चम्मच दें।

पथ्य—सीठा जनार, खजूर, मुनक्का, आंवला, मौसम्मी, सन्तरा (मीठा), फालसा, खरबूजा, सिंघाड़ा, परवल, लौकी, चौरई का साग, गन्ने (ईख) का रस, मिश्री, मूंग, भेंसी, अरहर, जी बकरी का दुध, गाय का घी। सौंफ, धनिया, ग्लूकोज, नारियल का पानी।

नोट—पेट को साफ रखें। यकृत का कार्य ठीक रहने से पुनः रोग नहीं होगा।

×

×

हृद्द्वार से घोरद्विग्न लिखते हैं कि मेरी आयु १६ वर्ष है मेरी छाती के दायाँ ओर दो वर्ष से एक बड़ी गाँठ है, यह न तो बढ़ती है न घटती है।

उत्तर—बड़े हुए दोषों के कारण गाँठ बन जाती है जो न पकने वाली शोथ युक्त होती है। इसी गाँठ के भीतर दोष संचित होते हैं। दूसरे ग्रन्थि के समान ही दोष-दूष्यों के लक्षणों वाला आदि अर्बुद होता है। ग्रन्थि की अपेक्षा इसकी मूल और अधिक गहरी होती है। इस ग्रन्थि और अर्बुद रोगों पर अनुभव में केवल गाय का घी ही दूध में डालकर या बेसन की रोटी के साथ खिलाकर किया है। प्रयोग अनप्रतिष्ठित सफल रहा।

ग्रन्थि पर लेप—काली जीरी और एलुवा दोनों सम-भाग गाय के मूत्र में पीसकर गरम करके लगायें। उसके पश्चात् उपर सक करवाते हैं। यह लेप रात्रि को लगा कर दोपहर को उतरवा देते हैं। दाह की अवस्था में उधार कर घी लगायें कपड़ा ग्रन्थि पर बांधें या रखवाते हैं।

अपथ्य—गाय का दुध घी और मधु को छोड़कर बाकी सभी पदार्थ लेसदार, गुड़, चीनी, खोवा, शीतल जल, बर्फ इत्यादि न खायें।

—शेषांश पृष्ठ ४२ देखें।

आयुर्वेद व्याख्यान

पदार्थ विज्ञान परिचय

लेखक—वैद्य श्री बनवारीलाल गोड़ भिष० आयु०, वृ०

राष्ट्रीय आयुर्वेद संस्थान, जयपुर

एवं—श्री यशवन्त कोठारी एम० एस०

राष्ट्रीय आयुर्वेद संस्थान, जयपुर (राज०)

प्रकाशक—पब्लिकेशन स्कीम, ५७-मिश्र राजाजी का रास्ता,
जयपुर (राजस्थान)

मूल्य—अश्विनी—१५ रुपये, सजिल्द—२५ रुपये

पदार्थ विज्ञान का सम्पूर्ण विषय संस्कृत में उपनिबद्ध है अतः प्रस्तुत पुस्तक में संस्कृत के मूल उद्घरणों को देकर इसके स्वरूप को बनाये रखने का प्रयास किया गया है। केन्द्रीय भारतीय चिकित्सा परिषद् द्वारा "आयुर्वेद प्रवेशिका" के लिये निर्धारित पाठ्यक्रम को ध्यान में रख कर यह पुस्तक लिखी गई है। अथ च माध्यमिक शिक्षा बोर्ड राजस्थान द्वारा निर्धारित पूर्व आयुर्वेद के विषय के पाठ्यांशों का भी इसमें समावेश हो गया है। अतः प्रस्तुत पुस्तक आयुर्वेद प्रवेशिका के छात्रों के लिए अत्यन्त उपादेय है। इस पुस्तक में भौतिक विज्ञान के अग भी पदार्थ विज्ञान के साथ ही दिये हैं जिससे विद्यार्थियों के लिये इसकी उपादेयता बढ़ गई है। विद्वान लेखक के विद्वत्तापूर्ण उपयोगी लेख 'धन्वन्तरि' में प्रायः प्रकाशित होते रहे हैं जिनसे पाठक इस पुस्तक के सम्बन्ध में लेखन शैली आदि का अनुमान लगा सकते हैं। विद्यार्थियों हेतु पुस्तक उपयोगी है छपाई सुस्पष्ट है, कागज ग्लेज है। प्रूफ संशोधन भली प्रकार किया गया है जिससे प्रेस की गलतियाँ नगण्य हैं। पृष्ठ संख्या देखते हुये मूल्य अधिक प्रतीत होता है।

आयुर्वेदीय विकृति विज्ञान

लेखक—डा० रवीन्द्र कुमार सिन्हा G A M S, D Ay, M.

आयुर्वेद मेडिकल कालेज, गया

प्रकाशक—बिहार आयुर्वेदिक फार्मसी, कुजापी (गया)

पृष्ठ संख्या—८०, मूल्य—सात रुपये

पुरी आयुर्वेदीय चिकित्सा त्रिदोष विज्ञान पर आधारित है। यहाँ त्रिगुण एवं पंचमहाभूत की अपेक्षा प्रमुखता

त्रिदोष की ही रहती है। काय चिकित्सा से मात्र वात, पित्त कफ का ही आधार लेकर चिकित्सा की जाती है। कय चिकित्सा से पूर्व उसके मूलभूत सिद्धान्तों त्रिदोष विज्ञान एवं मूल तथा धातुओं के विषय में जब तक पुरा तरह न समझ लिया जाये तब तक आयुर्वेदिक चिकित्सा असम्भव ही है। प्रस्तुत पुस्तक त्रिदोष विज्ञान का भला प्रकार ज्ञान कराती है। त्रिदोष विज्ञान के आतारक्त चिकित्सकों के लिये उपयोगी निदान पत्रक, रोगी परीक्षा विधि, स्रोत का विवरण आदि भी दिये हैं जिससे इस मधु पुस्तक की उपदे ता बढ़ गई है। ग्लेज पुष्ट कागज पर छपी है। छपाई सुन्दर है लेकिन मूल्य अधिक है।

मानस सयंक

लेखक—वैद्य श्री मिश्रीलाल गुप्त 'इच्छावरि', आष्टा (म.प्र.)

प्रकाशक—श्री गुप्ता ट्रेडर्स बुधवारा रोड, आष्टा (म.प्र.)

पृष्ठ—८०, मूल्य—४ रुपये

विषय, भाव, भाषा एवं काव्य निर्वाह की दृष्टि से यह एक उत्कृष्ट रचना है। भाषा की प्रांजलता एवं भावों का प्रवाह दर्शनीय, गंभीर एवं मननीय है। इस सुकृति की विशेषता है कि इसमें ऐतिहासिक परिवेश में सामयिक समस्याओं के समाधान का माथक इंगित प्राप्त होता है।

पृष्ठ ४१ का शेषांश

घी (स्नेह) का प्रयोग

दोष त्रिकृत होकर कोष्ठ से शाखाओं में जाकर धातुओं (रस रसादि धातु) से चिपक जाते हैं, उस स्थान से उन विकृत दोषों का निकालना ही चिकित्सा है। स्नेह का मुख्य कार्य कोषों में संचित धातुओं से चिपटे हुए दोषों को स्नेहन द्वारा पृथक् करके शाखाओं से कोष्ठों में लाकर शरीर से बाहर निकाल देना। शल्य क्रिया द्वारा केवल स्थानीय संचित दोषों को निकालना है जिससे पुनः रोग होने की सम्भावना हो सकती है। स्नेहन द्वारा रोग के पुनः होने की सम्भावना नहीं रहती है। घी से वायु के कारण पीड़ा, पित्त के कारण दाह, कफ के कारण गुरुता, (पूय) तीनों शान्त होते हैं।

ट्रेडीशनल नाम समाप्त ! लेकिन नया खतरा.....?

लखनऊ २७ नवम्बर । राजकीय आयुर्वेद महाविद्यालय लखनऊ (उ० प्र०) छात्र सभ के प्रचार मन्त्री श्री गणेश प्रसाद ने भारत सरकार के स्वास्थ्य मन्त्रालय के इस निर्णय का हार्दिक स्वागत किया है, जिसमें 'ट्रेडीशनल' मेडिसिन आदेश को वापस लेकर आयुर्वेद, यूनानी, होम्योपैथिक आदि चिकित्सा पद्धतियों को उचित ठहराते हुये उन्हें पूर्ववत् जारी रहने देने को कहा गया है । ज्ञातव्य है कि गत वर्ष विभिन्न राज्यों के स्वास्थ्य विभाग के उच्चाधिकारियों के हुये एक सम्मेलन में आयुर्वेद, होम्योपैथिक, यूनानी, प्राकृतिक आदि चिकित्सा पद्धतियों की जगह एक 'ट्रेडीशनल मेडिसिन' (परम्परागत चिकित्सा पद्धति) पद्धति रखने का निर्णय लिया गया था और तत्सम्बन्धी परामर्श भारत-सरकार के स्वास्थ्य मन्त्रालय को दिया गया था । इसी परामर्श के आधार पर गत २४ अक्टूबर १९८० को स्वास्थ्य मन्त्रालय ने (पत्र संख्या आर० १२०११/३/८० आई० एम० एस०) 'ट्रेडीशनल मेडिसिन' पद्धति लागू करने का आदेश जारी किया था । इस आदेश की जानकारी होते ही समस्त आयुर्वेद जगत भौंचक्का रह गया था ।

गत जून १९८१ माह में नयी दिल्ली से प्रकाशित एक अंग्रेजी समाचार पत्र में भारतीय स्वास्थ्य सचिव परिषद द्वारा लिये गये निर्णय का हवाला देते हुए कहा गया था कि भारतवर्ष में एक नई राष्ट्रीय चिकित्सा पद्धति चलायी जाय, जिसमें आयुर्वेद के साथ ही यूनानी, होम्योपैथिक और प्राकृतिक आदि को विलीन कर दिया जाय ।

इन चिकित्सा पद्धतियों के मिश्रण की बात कहने वालों ने इसके घातक परिणामों को नजर अन्दाज कर दिया और यह भी स्पष्ट कर दिया कि रोग और उसके उपचार में वे कितने माहिर हैं । अतः आयुर्वेद को विलीन न किया जाये और उसे ही देश की राष्ट्रीय चिकित्सा पद्धति घोषित किया जाये । ट्रेडीशनल मेडिसिन पद्धति लागू करवाने के पीछे एक गहरे षडयन्त्र की बू आती है । उपर्युक्त आदेश का आयुर्वेद विशेषज्ञों ने अपने तर्कों आदि से जब इसे गलत सिद्ध किया तो फिर स्वास्थ्य मन्त्रालय इस पर विचार करने को बाध्य हुआ । कई आयुर्वेदवाचियों ने

भी यह कहा कि 'ट्रेडीशनल नाम आयुर्वेद, यूनानी, होम्योपैथिक आदि चिकित्सा पद्धतियों की वैज्ञानिकता को समाप्त कर उन्हें हमेशा के लिए समाप्त कर देने की एक साजिश थी । "स्वास्थ्य विभाग के अधिकारियों के इस षडयन्त्र में आयुर्वेद जगत के ही कुछ हताश और निष्ठाविहीन लोगों के शामिल होने की चर्चा भी थी ।

एक तथ्य यह भी है कि ट्रेडीशनल नाम लोकसभा द्वारा स्वीकृत भारतीय चिकित्सा परिषद अधिनियम १९७० के विरुद्ध था । इसके बावजूद अधिकारियों के षडयन्त्र को बिना समझे ही केन्द्र और कुछ राज्य सरकारों इनके जाल में फँस गई । आयुर्वेद, यूनानी, होम्योपैथिक आदि सिद्ध तन्त्र को चलाने वाली ऐसी मशीनरी जब तक बरकरार रहेगी, वह इनके विकास मार्ग में आड़े आती रहेगी । इसलिए सरकार ऐसे अधिकारियों से सावधान रहते हुए इनके षडयन्त्रों को पर्दाफाश कर उनके खिलाफ कड़ी कार्यवाही करनी चाहिए ताकि इन चमत्कारिक चिकित्सा पद्धतियों का विनाश होने से बचाया जा सके ।

यह भी दुःखद है कि प्रत्येक पार्टी के मन्त्री और विधायक अपने भाषणों में आयुर्वेद की प्रशंसा तो करते हैं लेकिन स्वास्थ्य विभाग के अधिकांश पदों पर ऐसे निष्ठाविहीन और अक्षकचरे ज्ञाता को नियुक्त कर देते हैं, जिससे आयुर्वेद का सही दिशा में रचनात्मक कार्य नहीं हो पाता ।

आयुर्वेद चूँकि सभी चिकित्सा विज्ञानों का उद्गम स्थल है, और भारतवर्ष की अमूल्य धरोहर तथा अमूल्य निधि है । यह आयु का पुण्यतम वेद तथा जीवन का विशाल विज्ञान है । अतः महात्मा गांधी की उपस्थिति में १९२१ के नागपुर कांग्रेस अधिवेशन में सर्व सम्मति से पारित एक प्रस्ताव में कहा गया था कि भारत के स्वतन्त्र होने पर उसकी राष्ट्रीय चिकित्सा पद्धति आयुर्वेद ही होगी । लेकिन उस प्रस्ताव को आज तक अमल में नहीं लाया जा सका । इसे दुर्भाग्य ही कहा जायेगा कि महात्मा गांधी के आदर्शों पर चलने वाले नेता इस ओर से अपनी आँखें मूंदे बैठे हैं ।

स्वास्थ्य विभाग के अधिकारियों के षडयन्त्र की उत्पत्ति ट्रेडीशनल से होने वाले घातक परिणामों की ओर

जब आयुर्वेदाचार्यों ने निरन्तर सरकार का ध्यान आवृष्ट करना शुरू किया तो पड़्यन्त्रकारियों के कान भी खड़े होने लगे और अन्ततः १५ जुलाई १९८१ को धातु मंत्रालय के स्वास्थ्य मन्त्रालय द्वारा 'ट्रिडी नल मे डिसन' आदेश को वापस लिये जाने की घोषणा के बाद उनकी (अधिकारियों) सारी योजनाओं पर पानी फिर गया।

आयुर्वेद का सही दिशा में रचनात्मक कार्य न (नहीं) होने से एक ओर जहाँ वैद्यों का अभाव आम जनता को खटकता है वहीं दूसरी ओर हमकी निरन्तर उपेक्षा के कारण सही ढंग से इसका विकास नहीं हो पा रहा है। अतः आयुर्वेद के सर्वांगीण विकास हेतु तथा इसके चमत्कारिक गुणों को देखते हुए इसके वास्तविक विकास हेतु सरकार को आयुर्वेद का एक स्वतन्त्र मन्त्रालय स्थापित करना चाहिए। तथा सभी राज्यों में पृथक आयुर्वेद विभाग

बना आयुर्वेद मन्त्री का पद सृजित किया जाये। गुजरात की तरह प्रत्येक राज्य में भी एक-एक आयुर्वेद विश्वविद्यालय की स्थापना की जाये। इसके साथ ही आयुर्वेद क्षेत्र के विशेषज्ञों में से एक को विधान परिषद का सदस्य (सम्पूर्ण प्रदेशों में) मनोनीत किया जाय। आयुर्वेद को विकास योजना में समाहित कर उसके स्वतन्त्र विकास का मार्ग प्रशस्त किया जाय और आयुर्वेद को देश की राष्ट्रीय चिकित्सा पद्धति घोषित किया जाये। आयुर्वेद से सम्बन्धित पत्रिकाओं को समय-समय पर सरकार द्वारा विशेष सहायता प्रदान की जाये और राजकीय आयुर्वेद महाविद्यालय लखनऊ में डी० ए० ओ० एस० डिप्लोमा कोर्स शुरू किया जाये।

—गणेश प्रसाद प्रचार मन्त्री छात्र संघ
राजकीय आयुर्वेद महाविद्यालय, लखनऊ (उ०प्र०)

सावधान !

- सावधान—कतिपय ग्राहकों के पत्रों से ज्ञात हुआ है कि हमको भेजे गये आयुर्वेदिक कंपमुल, पेटेन्ट औषधियों एवं शास्त्रोक्त औषधियों तथा चिकित्सोपयोगी उपकरणों के आदेश पत्रों का सामान उन्हें अन्य फर्म से प्राप्त हुआ है। आप कोई भी सामान मंगायें उसका बिल मिलने पर देख लें कि उस पर 'धन्वन्तरि', निर्मल आयुर्वेद संस्थान, एवं दाऊ मीडिकल स्टोर्स छपा है या नहीं। तथा बी. पी. किस फर्म का आई है। यदि उपरोक्त दोनों फर्मों का कतिपय किसी अन्य फर्म से आपको बी० पी० प्राप्त होती है तो उसे हरगिज न छुड़ाये, वापिस कर दें।
- हमें भेजे गये आदेशपत्रों पर अपना पूरा नहीं लिखें—हमें भेजे गये आदेशपत्र का सामान कोई अन्य फर्म सप्लाय न कर सके इस हेतु निवेदन है कि अपने आदेशपत्रों में आप अपना पूरा पता नहीं लिखें—केवल मात्र अपना नाम, 'धन्वन्तरि' की सन् १९८१ की ग्राहक संख्या और पोस्ट आफिस का या गांव का नाम ही लिखें। अपना मुकद्दमा, तहसील या तालुका, जिला आदि नहीं लिखें। आपकी ग्राहक संख्या से हम आपका पूरा पता ज्ञात कर लेते लेकिन अन्य फर्म हमारे थारड को सप्लाय नहीं कर पायेगी। आपके इस सहयोग के लिए आभारी रहेंगे।
- यदि आप आदेशपत्र के साथ एडवांस भेज रहे हैं तो प्रथम से पत्र भेजने की आवश्यकता नहीं। अपना आर्डर प्रो मनिआर्डर कूपन में ही लिख दें।
- अपना आर्डर रजिस्टर्ड पत्र द्वारा भेजें—यदि आप अपना आर्डर रजिस्टर्ड पत्र द्वारा भेजते तो हैं रजिस्ट्रेशन शुल्क २.२५ रुम बिल में कम कर देंगे।
- आर्डर के साथ कृपया एडवांस अवश्य भेजें—इस बार बोनस कूपन केवल उन्हीं को दिया जायेगा जिसका पूरा रुपया या कम से कम २० रुपया एडवांस प्राप्त होगा। इस कारण अपने आर्डर के साथ एडवांस अवश्य भेजें।
- कैस डिस्काउण्ट—अपने आर्डर के साथ जो बैंक वन्च कम से कम २०) एडवांस भेजेंगे उनको ५% कैस डिस्काउण्ट भी दिया जायेगा। यह कैस डिस्काउण्ट छोटे बड़े सभी आर्डरों पर दिया जायेगा।

पता इस प्रकार लिखें—

निर्मल आयुर्वेद संस्थान, डी ७८ औद्योगिक नगर, अलीगढ़-१६
दाऊ मीडिकल स्टोर्स, डी ७८ औद्योगिक नगर, अलीगढ़-१६

‘धन्वन्तरि’ में विज्ञापन हैं

आयुर्वेद क्षेत्र में तथा आयुर्वेदिक पत्रिकाओं में “धन्वन्तरि” सर्वाधिक ग्राहक संख्या वाला पत्र है। “धन्वन्तरि” के विशाल विशेषांक आयुर्वेद जगत की स्थाई निधि होते हैं और बीसियों वर्ष तक संभाल कर रखे जाते हैं। इस कारण इन्हें प्रकाशित विज्ञापन का बहुत समय तक प्रभाव बना रहता है। विज्ञापनदाता को उनके विज्ञापन का पुरा लभ मिलता है। ज्वर चिकित्सांक में प्रिम्निन ज्वरों पर काम करने वाली औषधियों आदि के आप विज्ञापन हैं तो उनका विशेष प्रभाव होगा।

विज्ञापन दर (सरचार्ज सहित)

पूर्ण साधारण पृष्ठ (अक्षर)	४६५.००
आधा साधारण पृष्ठ	२४७.००
चौथाई साधारण पृष्ठ	१३०.००
टाइटिल पृष्ठ—द्वितीय-तृतीय पूरा पृष्ठ (साधारण अक्षर)	६६०.००
” दूसरे या तीसरे पृष्ठ पर १/२ पृष्ठ (साधारण अक्षर)	३४०.००
” चौथा पृष्ठ (साधारण अक्षर)	६००.००
” द्वितीय-तृतीय पृष्ठ (ज्वर चिकित्सांक)	१२५०.००
” चौथा पृष्ठ (ज्वर चिकित्सांक)	२६००.००

नियम—

- (१) विज्ञापन शुल्क का अग्रिम भुगतान प्राप्त होने पर ही विज्ञापन छापा जायेगा। ड्राफ्ट “निर्मल आयुर्वेद संस्थान” के नाम भेजें।
- (२) चौथाई पृष्ठ से कम का विज्ञापन स्वीकार नहीं कर सकेंगे।
- (३) टाइटिल पृष्ठ दूसरे तीसरे पर आधा पृष्ठ से कम का विज्ञापन तथा टाइटिल पृष्ठ चार पर एक पृष्ठ से कम का विज्ञापन स्वीकार नहीं कर सकेंगे।
- (४) यह उपरोक्त दर काले रंग में छापने के हैं। अतिरिक्त रंग में या दो रंग में छापने पर ३०% या कम से कम ४०० रुपये अवश्य देना होगा।
- (५) लगातार ६ या १२ बार छापने पर क्रमशः १०%, १५% की छूट लेकिन पूरा भुगतान अग्रिम प्राप्त होना चाहिए।
- (६) ‘धन्वन्तरि’ के साधारण अंक में अक्षर के सर्व प्रथम पृष्ठ पर ४०% अतिरिक्त, विषय सूची के सामने के पृष्ठ पर २५% अतिरिक्त तथा विषय सूची के नीचे चौथाई पृष्ठ का १००% अतिरिक्त।

निर्मल आयुर्वेद संस्थान, डी-७८ औद्योगिक नगर अलीगढ़

बिजली की मशीन

इस मशीन के प्रयोग से तीव्र पार्श्वशूल, गुर्ध्रपी, सन्निवृत्त, कटिशूल, उदरशूल, अकड़न, लंगड़ापन, लकवा (पक्षाघात), हात का दर्द, तीव्र वातज शिरःशूल, किमो जङ्ग में ठण्ड लग जाने के कारण होने वाला दर्द, पुरानी चोट का दर्द, मोच आना आदि अनेक रोग तुरन्त ही दूर होते हैं। प्रत्येक चिकित्सक के पास इस मशीन का होना अत्यावश्यक है।

इसे सैलों द्वारा चलाया जाता है जो सर्वत्र मिल जाते हैं तथा इसे दुर्गम भागों तथा बड़े-बड़े गृहों में समान रूप से प्रयोग किया जा सकता है। इसमें खर्चा भी बहुत कम होता है लेकिन आप प्रति रागो १-२ रुपये आसानी से प्रतिदिन ले सकते हैं। मशीन टिकाऊ है, सुन्दर है तथा बहुत दिनों तक निर्वाह कार्य करने वाली है।

इसके निम्न प्रकार हमारे पास उपलब्ध हैं। आप किसी भी प्रकार की बिजली की एक मशीन मगाकर रोगियों पर प्रयोग कर यश एवं धन प्राप्त करें—

१. बिजली की मशीन तीन बड़े गोल सैलों से चलने वाली रेगुलेटर सहित ८०.००
२. बिजली की मशीन बिजली तथा सैल किसी से भी चलने वाली रेगुलेटर सहित सर्वोत्तम १२५.००

खर्चा—सैल-टेक्स प्रत्येक

जाईर देते समय २० रुपये एडवांस अवश्य भेजें।

डाऊ मैडीकल स्टोर्स

हो-७८, औद्योगिक नगर, अलीगढ़।

पुत्रदा कैपसूल

जिन स्थलों के बार-बार लड़कियां ही होती हैं तथा वह चाहती हैं कि कम से कम एक लड़का हो जाय। ऐसी स्थिति में हमारा निवेदन है कि जैसे ही गर्भावस्था का पता चले पुत्रदा कैपसूल का १ सेट प्रयोग करें। उनकी मनोकामना अवश्य पूर्ण होगी। ७+४० कैपसूलों का सेट १ कैपसूल प्रतिदिन लेकर चौथा माह समाप्त होने से पूर्व ही सेवन कर लेना है। मूल्य १ रु० २५.५०

—पता—

निर्मल-आयुर्वेद संस्थान,

पुत्रदा कैपसूल

‘धन्वन्तरि’ रजि० नं० एन०/अ/१६०
Registered with the Registrar of Newspapers of India under R. N. 2197/10

३३४५ श्री प्रेक्षा धर्म हल जी
जवाला फार्मसी १०० चौक नं० १२
जोधपुर (हरियाणा) उ.प्र.
पिन १३४६५५



3654

1161



Stock Verification-2004

113417

Copyright
1999-2000

